मन्त्रस्तोत्रकदम्बम्

3

13

19

21

23

24

26

अनुक्रमणिका

| 0 | वेदमन्त्राः | | |
|----------|-------------|--|--|
| | | | |
| रुद्रप्र | %: | | |

चमकप्रश्नः

पुरुषसूक्तम्

नारायणसूक्तम्

विष्णुसूक्तम्

भूसूक्तम्

दुर्गा सूक्तम्

श्रीसूक्तम् मेधासूक्तम्

27 30

36

40

48

53

95

97

97

101

103

104

नवग्रहसूक्तम्

नक्षत्रसूक्तम्

अरुणप्रश्नः

गणपत्यथर्वशीर्षोपनिषत्

स्तोत्राणि

आदित्यस्तोत्राणि

आदित्यहृदयम्

सूर्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्

गायत्री स्तवनम्

| सूर्यसहस्रनामस्तोत्रम् | . 106 |
|----------------------------------|-------|
| शिवस्तोत्राणि | 125 |
| शिवमानसपूजा | . 125 |
| शिवप्रातःस्मरणस्तोत्रम् | . 126 |
| शिवाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् | . 127 |
| उमामहेश्वरस्तोत्रम् | . 131 |
| अर्धनारीश्वर अष्टकम् | . 134 |
| शिवशिवास्तुतिः | |
| शक्तिस्तोत्राणि | 140 |
| मीनाक्षीपञ्चरत्नम् | _ |
| षष्ठीदेवी स्तोत्रम् | |
| गौर्यधोत्तरशतनामस्तोत्रम् | |
| अन्नपूर्णाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् | |
| | |
| लितापश्चरत्नम् | . 149 |
| सुब्रह्मण्यस्तोत्राणि | 150 |
| सुब्रह्मण्यभुजङ्गम् | . 151 |

| गुहप | ञ्चरत्नम् | | 159 |
|----------|--------------------------------------|---|-----|
| सुब्रह | गण्यपञ्चरत्नम् | • | 160 |
| प्रज्ञा | वेवर्धन कार्तिकेय स्तोत्रम् | | 161 |
| सुब्रह | गण्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् | | 163 |
| रामस्तो | त्राणि | | 165 |
| रामर | क्षास्तोत्रम् | | 166 |
| अहल | याकृत-रामस्तोत्रम् | | 172 |
| रामा | य् रोत्तरशतनामस्तोत्रम् | | 177 |
| गायः | त्री रामयाणम् | | 179 |
| हनुमत्- | -स्तोत्राणि | | 183 |
| आप् | रुद्धारक-द्वादशमुख-हनुमान् स्तोत्रम् | | 183 |
| आञ्ज | नेयाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् | | 188 |
| हनुम | त् पञ्चरत्नम् | | 191 |
| गुरुस्तो | त्राणि | | 193 |
| दक्षिण | णामूर्त्यप्टकम् | | 193 |
| दक्षिण | गामूर्तिस्तोत्रम् | | 196 |
| | | | |

| शङ्कराचार्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् 201 |
|--|
| दुर्गास्तोत्राणि 206 |
| महिषासुरमर्दिनि स्तोत्रम् |
| गायत्रीस्तोत्रम् |
| शीतलाष्टकम् |
| दुर्गाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् |
| लक्ष्मीस्तोत्राणि 221 |
| लक्ष्म्यष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् |
| सीताष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् 225 |
| गोदाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् 228 |
| महालक्ष्म्यष्टकम् |
| सरस्वतीस्तोत्राणि 235 |
| सरस्वत्यष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् 235 |
| वेङ्कटेशस्तोत्राणि 238 |
| वेङ्कटेश सुप्रभातम् |

| ٧i | | | | | | | | | | | | | अर् | नुक | मणिका |
|----|--------------------|--|---|--|--|---|---|---|---|---|---|--|-----|-----|-------|
| | वेङ्कटेश स्तोत्रम् | | • | | | • | • | • | • | • | • | | | | 245 |
| | वेङ्कटेश प्रपत्तिः | | | | | | | | | | | | | | 247 |

| | वङ्कटश स्तात्रम् | | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | 245 |
|------------|--------------------|-----------|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|-----|
| | वेङ्कटेश प्रपत्तिः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | |
| | वेङ्कटेश मङ्गलाशा | | | | | | | | | | | | | | | | | | | |
| | वेङ्कटेश करावलम | | | | | | | | | | | | | | | | | | | |
| | श्रीनिवास गद्यम् | | | | • | • | • | • | | | | • | • | | • | • | • | • | | 257 |
| न व | ग्रग्रहस्तोत्राणि | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 264 |
| | नवग्रहस्तोत्रम् | | | | • | • | • | • | | • | | | | | • | • | | | | 264 |
| | नवग्रहपीडाहरस्तं | गेत्रम् . | | | | | | | | | | | | | | | | | | 266 |
| | द्शरथकृत शनैश्व | राष्टकम् | | | | | | | | | | | | | | | | | | 268 |

| | 71 |
|-------------------------|-----|
| नवग्रहस्तोत्राणि | 264 |
| नवग्रहस्तोत्रम् | 264 |
| नवग्रहपीडाहरस्तोत्रम् | 266 |
| द्शरथकृत शनैश्चराष्टकम् | 268 |
| विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् | 270 |
| शिवसहस्रनामस्तोत्रम् | 296 |
| ३ श्रीमद्भगवद्गीता | 325 |
| न्यासः | 327 |

| नवग्रहस्तात्राणि | 264 |
|-------------------------|-----|
| नवग्रहस्तोत्रम् | 264 |
| नवग्रहपीडाहरस्तोत्रम् | 266 |
| द्शरथकृत शनैश्वराष्टकम् | 268 |
| विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् | 270 |
| शिवसहस्रनामस्तोत्रम् | 296 |
| | |
| ३ श्रीमद्भगवद्गीता | 325 |
| न्यासः | 327 |
| ध्यानम् | 329 |
| | |

| दशरथकृत शनैश्चराष्टकम् | 268 |
|-------------------------|-----|
| वेष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् | 270 |
| शेवसहस्रनामस्तोत्रम् | 296 |
| ३ श्रीमद्भगवद्गीता | 325 |
| न्यासः | 327 |
| व्यानम् | 329 |
| | |

| अनुक्रमणिका | vii |
|-----------------|-----|
| प्रथमोऽध्यायः | 332 |
| द्वितीयोऽध्यायः | 338 |
| तृतीयोऽध्यायः | 349 |
| चतुर्थोऽध्यायः | 355 |
| पञ्चमोऽध्यायः | 361 |
| षष्ठोऽध्यायः | 365 |
| सप्तमोऽध्यायः | 371 |
| अष्टमोऽध्यायः | 375 |
| नवमोऽध्यायः | 380 |
| द्शमोऽध्यायः | 385 |
| एकाद्शोऽध्यायः | 390 |
| द्वादशोऽध्यायः | 403 |
| | |

| त्रयोदशोऽध्यायः | 406 |
|-----------------|-----|
| चतुर्दशोऽध्यायः | 411 |

पञ्चदशोऽध्यायः 415 षोडशोऽध्यायः 418

सप्तदशोऽध्यायः 422

अष्टादशोऽध्यायः 425

गीतामाहात्म्यम् 437

विभागः १

वेदमन्त्राः

॥ रुद्रप्रश्नः॥

ॐ गुणानां त्वा गुणपिति १ हवामहे कविं केवीनामुप्मश्रवस्तमम्। ज्येष्टराजं ब्रह्मणां ब्रह्मणस्पत् आ नेः श्रृण्वन्नूतिभिः सीद् सादेनम्॥ ॐ महागणपतये नमः॥

ॐ नमो भगवते रुद्राय॥ नर्मस्ते रुद्र मन्यर्व उतो त इषवे नर्मः। नर्मस्ते अस्तु धन्वने बाहुभ्यामुत ते नर्मः॥ या त इषुः शिवतमा शिवं बभूवं ते धनुः। शिवा शरव्यां या तव तयां नो रुद्र मृखय॥ या ते रुद्र शिवा तनूरघोराऽपापकाशिनी। तया नस्तनुवा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि॥ यामिषुं गिरिशन्त हस्ते बिभर्घ्यस्तवे। शिवां गिरित्र तां कुरु मा हि सीः पुरुषं जगत्॥ शिवेन वचंसा त्वा गिरिशाच्छवदामिस। यथा नः सर्वमिज्जगदयक्ष्मश सुमना असत्॥ अध्यवोचदिधवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक्। अही 🖢 श्र सर्वां झम्भयन्त्सर्वांश्च यातुधान्यः ॥ असौ यस्ताम्रो अरुण उत बभ्रः सुमङ्गलः। ये चेमार रुद्रा अभितौ दिक्ष श्रिताः सहस्रशोऽवैषा है हैर्ड ईमहे॥ असौ योऽवसपीत नीलग्रीवो विलोहितः। उतैनं गोपा अंदशन्नद्दशसुदहार्यः॥ उतैनं विश्वा भूतानि स दृष्टो मृंडयाति नः। नमौ अस्तु नीलंग्रीवाय सहस्राक्षायं मीढ़षें॥ अथो ये अस्य सत्वानोऽहं तेभ्योऽकरं नर्मः। प्र मुख धन्वेनस्त्व-मुभयोरालियोर्ज्याम्॥ याश्चे ते हस्त इर्षवः परा ता भंगवो वप। अवतत्य धनुस्त्वश सहस्राक्ष शतेषुधे॥ निशीर्य श्चानां मुखां शिवो नः सुमनां भव। विज्यं धनुः कपर्दिनो विश्वांत्यो बार्णवार उत्।। अनेशन्नस्येषव आभुरस्य निषङ्गर्थिः। या ते हेतिमी दृष्टम हस्ते बभूव ते धनुः॥ तयाऽस्मान् विश्वतस्त्वमयक्ष्मया परिन्भुज। नर्मस्ते अस्त्वायुधायानांतताय धृष्णवै॥ उभाभ्यामुत ते नमौ बाहुभ्यां तव धन्वने। परि ते अस्मन्नि धेहि तम्॥१॥

नर्मस्ते अस्तु भगवन् विश्वेश्वरायं महादेवायं त्र्यम्बकायं त्रिपुरान्तकायं त्रिकालाग्निकालायं कालाग्निरुद्रायं नीलकण्ठायं मृत्युञ्जयायं सर्वेश्वरायं सदाशिवायं श्रीमन्महादेवायु नर्मः॥

नमा हिर्रण्यबाहवे सेनान्ये दिशां च पत्ये नमा नमा वृक्षेभ्यो

हरिकेशेभ्यः पश्चनां पत्ये नमो नमः सस्पर्ञराय त्विषीमते पथीनां पत्ये नमो नमो बभ्छुशाय विव्याधिनेऽन्नां पत्ये नमो नमो हरिकेशायोपवीतिने पुष्टानां पत्ये नमो नमो भवस्य हेत्ये जर्गतां पत्ये नमो नमो रुद्रायातताविने क्षेत्राणां पत्ये नमो नमः सूतायाहेन्त्याय वर्नानां पत्ये नमो नमो रोहिताय स्थपत्ये वृक्षाणां पत्ये नमो नमो मन्त्रिणे वाणिजाय कक्षाणां पत्ये नमो नमो भवन्तये वारिवस्कृतायौषधीनां पत्ये नमो नमे उच्चेधीषायाक्रन्द्यते पत्तीनां पत्ये नमो नमे कृत्स्नवीताय धावते सत्वेनां पत्ये नमेः॥२॥

नमः सहमानाय निव्याधिनं आव्याधिनीनां पतेये नमो नमेः ककुभायं निष्किणें स्तेनानां पतेये नमो नमो निष्किणं इषुधिमते तस्कराणां पतेये नमो नमो वर्ष्वते परिवर्ष्वते स्तायूनां पतेये नमो नमो निचेरवे परिचरायारण्यानां पतेये नमो नमेः सृकाविभ्यो जिघा स्वयो मुष्णतां पतेये नमो नमोऽसिमद्यो नक्तं चर्रद्यः प्रकृन्तानां पतेये नमो नमं उष्णीषिणे गिरिचरायं कुलुञ्चानां पतेये नमो नम इषुमद्यो धन्वाविभ्यंश्च वो नमो नमं आतन्वानेभ्यः प्रतिद्धिनिभ्यश्च वो नमो नमे आयच्छेन्द्यो विसृजन्द्येश्च वो नमो नमोऽस्येन्द्यो विध्येन्द्यश्च वो नमो नम् आसीनेभ्यः शयानेभ्यश्च वो नमो नमो नमो नमिस्तर्षन्त्यो जाग्रेन्द्यश्च वो नमो नमस्तिर्षन्त्यो धार्वन्द्यश्च वो नमो नमो समाभ्यः सुभापितिभ्यश्च वो नमो नमो अश्वेभ्योऽश्वेपतिभ्यश्च वो नमेः ॥३॥

नमं आव्यधिनीभ्यो विविध्यन्तीभ्यश्च वो नमो नम उर्गणाभ्यस्तृ १-हतीभ्यंश्च वो नमो नमों गृत्सेभ्यों गृत्सपंतिभ्यश्च वो नमो नमो व्रातैभ्यो व्रातंपतिभ्यश्च वो नमो नमो गणेभ्यो गणपंतिभ्यश्च वो नमो नमो विरूपेभ्यो विश्वरुपेभ्यश्च वो नमो नमो महर्द्धाः, क्षुल्लकेभ्यश्च वो नमो नमो रिथभ्योऽरथेभ्यश्च वो नमो नमो रथेँभ्यो रथंपतिभ्यश्च वो नमो नमः सेनाभ्यः सेनानिभ्यंश्च वो नमो नमः, क्षत्तभ्यः सङ्ग्रहीतभ्यंश्च वो नमो नमस्तक्षभ्यो रथकारेभ्यंश्च वो नमो नमः कुललिभ्यः कर्मारैभ्यश्च वो नमो नर्मः पुञ्जिष्टैभ्यो निषादेभ्यश्च वो नमो नमं इषुकृज्यौ धन्वकृज्यश्च वो नमो नमौ मृगयुभ्यः श्वनिभ्यंश्च वो नमो नमः श्वभ्यः श्वपंतिभ्यश्च वो नर्मः॥४॥

नमों भ्वायं च रुद्रायं च नमः श्वांयं च पशुपतंये च नमों नीलंग्रीवाय च शितिकण्ठांय च नमः कपिद्ने च व्युप्तकेशाय च नमः सहस्राक्षायं च श्वतधंन्वने च नमों गिरिशायं च शिपिविष्टायं च नमों मीढुएंमाय चेषुंमते च नमों हुस्वायं च वामनायं च नमों बृह्ते च वर्षीयसे च नमों वृद्धायं च संवृध्वंने च नमो अग्नियाय च प्रथमायं च नमं आशवे चाजिरायं च नमः शीप्रियाय च शीभ्याय च नमं ऊम्याय चावस्वन्याय च नमः स्रोतस्याय च द्वीप्याय च॥५॥

नमौ ज्येष्ठायं च किन्छायं च नमः पूर्वजायं चापर्जायं च नमो मध्यमायं चापगुल्भायं च नमो जघन्याय च बुिन्नयाय च नमः सोभ्याय च प्रतिस्यीय च नमो याम्याय च क्षेम्याय च नमे उर्व्याय च खल्याय च नमः श्लोक्याय चऽवसान्याय च नमो वन्याय च कक्ष्याय च नमः श्लवायं च प्रतिश्लवायं च नमे आशुर्षणाय चाशुर्रथाय च नमः शूराय चावभिन्दते च नमो विभिणे च वर्ष्ट्यिने च नमो बिल्मिने च कविचने च नमः श्लुतायं च श्रुतसेनायं च॥६॥ नमौ दुन्दुभ्याय चाहन्त्याय च नमौ घृष्णवे च प्रमृशायं च नमौ दूतायं च प्रहिताय च नमौ निषक्षिणे चेषुधिमते च नमस्तीक्ष्णेषवे चायुधिने च नमः स्वायुधायं च सुधन्वने च नमः स्वत्याय च पथ्याय च नमः काट्याय च नीप्याय च नमः सूद्याय च सरस्याय च नमो नाद्यायं च वैशान्तायं च नमः कूप्याय चाव्ट्याय च नमो वर्ष्याय च नमो मेध्याय च विद्युत्याय च नमे ईप्रियाय चात्प्याय च नमो वात्याय च रेष्मियाय च नमो वास्त्व्याय च वास्तुपायं च॥७॥

नमः सोमाय च रुद्रायं च नमंस्ताम्रायं चारुणायं च नमः शङ्कायं च पशुपतंयं च नमं उग्रायं च भीमायं च नमो अग्रेवधायं च दूरेवधायं च नमों हुन्त्रे च हनीयसे च नमों वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यो नमस्ताराय नमः शम्भवें च मयोभवें च नमः शङ्करायं च मयस्करायं च नमः शिवायं च शिवतराय च नमस्तीथ्यीय च कूल्याय च नमः पार्याय चावार्याय च नमः प्रतरंणाय चोत्तरंणाय च नमं आतार्याय चालाद्याय च नमः शष्याय च फेन्याय च नमः सिकत्याय च प्रवाह्याय च॥८॥ नमं इरिण्याय च प्रपृथ्याय च नमः किश्शिलाय च क्षयंणाय च नमः कपर्दिने च पुलस्तये च नमो गोष्ठ्याय च गृह्याय च नमस्तल्प्याय च गेह्याय च नमः काट्याय च गहरेष्ठायं च नमो हृद्य्याय च निवेष्याय च नमः पाश्सव्याय च रजस्याय च नमः शुष्क्याय च हरित्याय च नमो लोप्याय चोलप्याय च नमं ऊर्व्याय च सूर्म्याय च नमः पण्याय च पण्शाद्याय च नमोऽपगुरमाणाय चाभिन्नते च नमं आख्विद्ते च प्रख्विद्ते च नमो वः किरिकेभ्यो देवानाश् हृद्येभ्यो नमो विक्षीणकेभ्यो नमो विचिन्वत्केभ्यो नमं आनिरहतेभ्यो नमं आमीवत्केभ्यः॥९॥

द्रापे अन्धंसस्पते दरिद्वन्नीलंलोहित। एषां पुरुषाणामेषां पेशूनां मा भेमीऽरो मो एषां किं चनऽऽमंमत्॥ या तें रुद्र शिवा तनूः शिवा विश्वाहंभेषजी। शिवा रुद्रस्य भेषजी तयां नो मृड जीवसें॥ इमा रुद्रायं त्वसें कपुर्दिनें क्षयद्वीराय प्रभरामहे मृतिम्॥ यथां नः शमसंद्विपदे चतुंष्यदे विश्वं पुष्टं ग्रामें अस्मिन्ननीतुरम्॥ मृडा नों रुद्रोत नो मर्यस्कृधि क्षयद्वीराय नर्मसा विधेम ते। यच्छं च योश्च मर्नुरायजे पिता तद्श्याम् तवं रुद्र प्रणीतौ॥ मा नो महान्तमुत मा नो अर्भुकं मा न उक्षन्तमुत मा ने उिष्तुतम्। मा

नौऽवधीः पितरं मोत मातरं प्रिया मा नेस्तनुवौ रुद्र रीरिषः॥ मा र्नस्तोके तर्नये मा न आयुषि मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः। वीरान्मा नो रुद्र भामितोऽवधीर्हविष्मन्तो नर्मसा विधेम ते॥ आरात्ते गोघ्न उत पूरुषघ्ने क्षयद्वीराय सुम्नमस्मे ते अस्तु। रक्षां च नो अधि च देव ब्रूह्मधां च नः शर्मे यच्छ द्विबर्हाः॥ स्तुहि श्रुतं गर्तसदं युवनिं मृगं न भीममुपह्लुमुग्रम्। मृडा र्जरित्रे रुद्र स्तर्वानो अन्यन्ते अस्मन्निवंपन्तु सेर्नाः॥ परिणो रुद्रस्यं हेतिवृणक्क परि त्वेषस्यं दुर्मतिरघायोः। अवं स्थिरा मुघवं ब्यस्तनुष्व मीर्बस्तोकाय तनयाय मृडय॥ मीढुंष्टम शिवंतम शिवो नः सुमना भव। परमे वृक्ष आयुधं निधाय कृत्तिं वसान आर्चर पिनांकं बिभ्रदार्गिहै॥ विकिरिद विलोहित नर्मस्ते अस्तु भगवः। यास्ते सहस्र हेतयोऽन्यमस्मन्निर्वपन्तु ताः॥ सहस्राणि सहस्रधा बहुवोस्तवं हेतर्यः। तासामीशानो भगवः पराचीना मुखा कृधि॥१०॥

सहस्राणि सहस्रशो ये रुद्रा अधि भूम्याम्। तेषा सहस्रयोजने-ऽवुधन्वानि तन्मसि॥ अस्मिन् महत्यणविऽन्तरिक्षे भवा अधि॥ नीलेग्रीवाः शितिकण्ठाः शर्वा अधः, क्षेमाचराः॥ नीलेग्रीवाः शितिकण्ठा दिव^{र्} रुद्रा उपंश्रिताः॥ ये वृक्षेषुं सस्पिश्ररा नीलंग्रीवा विलोहिताः॥ ये भूतानामधिपतयो विशिखासंः कपर्दिनः॥ ये अन्नेषु विविध्यन्ति पात्रेषु पिबतो जनान्॥ ये पथां पंथिरक्षय ऐलबुदा यव्युधः॥ ये तीर्थानि प्रचरन्ति सुकार्वन्तो निषङ्गिणः॥ य एतावन्तश्च भूयार्श्सश्च दिशौ रुद्रा वितस्थिरे॥ तेषार सहस्रयोजनेऽवधन्वानि तन्मसि॥ नमी रुद्रेभ्यो ये पृथिव्यां येंऽन्तरिक्षे ये दिवि येषामन्नं वातौ वरुषमिषवस्तेभ्यो दश प्राचीर्दशं दक्षिणा दशं प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोध्वीस्तेभ्यो नमस्ते नौ मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तं वो जम्भे दधामि॥११॥

त्र्यम्बकं यजामहे सुगृन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकिमिव बन्धनान्मृत्योमुक्षीय माऽमृतात्॥ यो रुद्रो अग्नौ यो अप्सु य ओषधीषु यो रुद्रो विश्वा भुवनाऽऽविवेश तस्मै रुद्राय नमो अस्तु॥ तमुष्टुहि यः स्विषुः सुधन्वा यो विश्वस्य क्षयति भेषजस्य।

(ऋक्) यक्ष्वामहे सौमनुसायं रुद्रं नमौभिर्देवमसुरं दुवस्य॥ अयं

मे हस्तो भगवानयं मे भगवत्तरः। अयं मै विश्वभैषजोऽयं शिवाभिमर्शनः॥

ये ते सहस्रमयुतं पाशा मृत्यो मर्त्यीय हन्तेवे। तान् यज्ञस्यं मायया सर्वानवं यजामहे। मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहां॥ ओं नमो भगवते रुद्राय विष्णवे मृत्युंमें पाहि। प्राणानां ग्रन्थिरिस रुद्रो मां विशान्तकः। तेनान्नेनांप्यायस्व॥ नमो रुद्राय विष्णवे मृत्युंमें पाहि॥

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ चमकप्रश्नः॥

अग्निविष्णू स्जोषंसेमा वर्धन्तु वां गिरंः। युम्नैर्वाजेभिरागितम्॥ वार्जश्च मे प्रस्वश्चं मे प्रयंतिश्च मे प्रसितिश्च मे धीतिश्चं मे कर्तुश्च मे स्वरंश्च मे श्लोकंश्च मे श्रावश्चं मे श्रुतिश्च मे ज्योतिश्च मे सुवश्च मे प्राणश्चं मेऽपानश्चं मे व्यानश्च मेऽसुश्च मे चित्तं चं म आधीतं च मे वार्कं मे मनश्च मे चक्षुंश्च मे श्लोत्चं च मे दक्षंश्च मे बलं च म ओजिश्च मे सहश्च म आयुंश्च मे जरा चं म आत्मा चं मे तन्श्चं मे शमें च मे वमें च मेऽङ्गीनि च मेऽस्थानि च मे परूर्षि च मे शरीराणि च मे॥१॥

ज्यैष्ठ्यं च म आधिपत्यं च मे मन्युश्चं मे भामश्च मेऽमश्च मेऽम्भश्च मे जेमा च मे मिह्मा च मे विर्मा च मे प्रिथमा च मे विष्मा च मे द्राघुया च मे वृद्धं च मे वृद्धिश्च मे सत्यं च मे श्रद्धा च मे जर्गच मे धनं च मे वर्राश्च मे त्विषिश्च मे क्रीडा च मे मोद्श्च मे जातं च मे जिन्छ्यमणि च मे सूक्तं च मे सुकृतं च मे वित्तं च मे वेद्यं च मे भूतं च मे भिव्छ्यचं मे सुगं च मे सुपथं च म ऋदं च म ऋदिश्च मे क्रुगं च मे क्रुप्तिश्च मे मृतिश्चं मे सुमृतिश्चं मे॥२॥ रां चे में मयेश्व में प्रियं चे मेऽनुकामर्श्व में कामेश्व में सौमनसर्श्व में भूद्रं चे में श्रेयंश्व में वस्येश्व में यर्राश्च में भगेश्व में द्रविणं च में यन्ता च में धूर्ता च में क्षेमेश्व में धृतिश्च में विश्वं च में महिश्च में सांविच्चं में ज्ञात्रं च में सूर्श्व में प्रसूर्श्व में सीरं च में ल्यर्श्व म ऋतं च मेऽमृतं च मेऽयक्ष्मं च मेऽनामयच में जीवातुश्च में दीर्घायुत्वं च मेऽनिमृत्रं च मेऽभयं च में सुगं चे में श्रयनं च में सूषा च में सुदिनं च मे॥३॥

ऊर्की में सूनृतां च में पर्यश्च में रसंश्च में घृतं चे में मधुं च में सिर्धिश्च में सपीतिश्च में कृषिश्चं में वृष्टिश्च में जैत्रं च म औद्धिं च में रियश्चं में रायश्च में पुष्टं चे में पुष्टिश्च में विभु चे में प्रभु चे में बहु चे में भूयश्च में पूर्ण चे में पूर्णतरं च में ऽक्षितिश्च में कूर्यवाश्च में ऽत्रं च में उक्षुंच में व्रीहर्यश्च में यवाश्च में माषाश्च में तिलाश्च में मुद्राश्चं में खल्वाश्च में गोंधूमाश्च में मसुराश्च में प्रियङ्गवश्च में ऽणवश्च में रयामकाश्च में नीवाराश्च में॥४॥

अश्मां च में मृत्तिका च में गिरयेश्व में पर्वताश्च में सिर्कताश्च में वनस्पतियश्च में हिरंण्यं च मेऽयेश्व में सीसं च में त्रपृश्च मे रयामं चे मे लोहं चे मेऽग्निश्चं म आपश्च मे वीरुधंश्च म ओषंधयश्च मे कृष्टपच्यं चे मेऽकृष्टपच्यं चे मे ग्राम्याश्चं मे प्रावं आर्ण्याश्चं यज्ञेनं कल्पन्तां वित्तं च मे वित्तिश्च मे भूतं चे मे भूतिश्च मे वसुं च मे वस्तिश्चं मे कमें च मे शक्तिश्च मेऽर्थंश्च म एमंश्च म इतिश्च मे गतिश्च मे॥५॥

अग्निश्चं म इन्द्रंश्च में सोमंश्च म इन्द्रंश्च में सिवता चं म इन्द्रंश्च में सरंस्वती च म इन्द्रंश्च में पूषा चं म इन्द्रंश्च में बृह्स्यतिश्च म इन्द्रंश्च में मित्रश्चं म इन्द्रंश्च में वरुणश्च म इन्द्रंश्च में त्वष्टां च म इन्द्रंश्च में धाता चं म इन्द्रंश्च में विष्णुंश्च म इन्द्रंश्च में ऽिश्वनौ च म इन्द्रंश्च में मुरुतंश्च म इन्द्रंश्च में विश्वें च में देवा इन्द्रंश्च में पृथिवी चं म इन्द्रंश्च में उन्तरिक्षं च म इन्द्रंश्च में घौर्श्च म इन्द्रंश्च में दिशंश्च म इन्द्रंश्च में मूर्धा चं म इन्द्रंश्च में प्रजापंतिश्च म इन्द्रंश्च में॥६॥

अध्राश्चं मे रिहमश्च मेऽदाभ्यश्च मेऽधिपतिश्च म उपाध्राश्चं मेऽन्तर्यामश्चं म ऐन्द्रवायवश्चं मे मैत्रावरूणश्चं म आश्विनश्चं मे प्रतिप्रस्थानश्च मे शुक्रश्चं मे मुन्थी चं म आग्रयणश्चं मे वैश्वदेवश्चं मे ध्रुवश्चं मे वैश्वानुरश्चं म ऋतुग्रहाश्चं मेऽतिग्राह्याश्च म ऐन्द्राग्नश्चं मे वैश्वदेवश्चं मे मरुत्वतीयाश्च मे माहेन्द्रश्चं म आदित्यश्चं मे सावित्रश्चं मे सारस्वतश्चं मे पौष्णश्चं मे पालीवतश्चं मे हारियोजनश्चं मे॥७॥

इध्मश्च मे बर्हिश्च मे वेदिश्च मे घिष्णियाश्च मे स्रुचंश्च मे चमसाश्चे मे ग्रावाणश्च मे स्वरंवश्च म उपर्वार्श्च मेऽधिषवणे च मे द्रोणकल्इार्श्च मे वाय्व्यानि च मे पूत्भृच्च म आधवनीयश्च म् आग्नींग्नं च मे हिव्धानं च मे गृहार्श्च मे सर्दश्च मे पुरोडाशांश्च मे पचतार्श्च मेऽवभृथर्श्च मे स्वगाकारश्चं मे॥८॥

अग्निश्च मे घर्मश्च मेऽर्कश्च मे सूर्यश्च मे प्राणश्च मेऽश्वमेधश्च मे पृथिवी च मेऽदितिश्च मे दितिश्च मे चौश्च मे शक्करीरङ्गलेयो दिशश्च मे युज्ञेन कल्पन्तामृक्कं मे सामं च मे स्तोमश्च मे यर्जुश्च मे दीक्षा च मे तपश्च म ऋतुश्च मे व्रतं च मेऽहोरात्रयौर्वृष्ट्या बृंहद्रथन्तरे च मे युज्ञेन कल्पेताम्॥९॥

गर्भाश्च मे वृत्साश्च मे त्र्यविश्च मे त्र्यवी चं मे दित्यवाचं मे दित्यौही चं मे पञ्चाविश्च मे पञ्चावी चं मे त्रिवृत्सश्च मे त्रिवृत्सा चं मे तुर्यवाचं मे तुर्यौही चं मे पष्टवाचं मे पष्टौही चं म उक्षा चं मे वशा चं म ऋष्भश्चं मे वेहचं मेऽनुष्ठां चं मे धेनुश्चं म आयुर्यज्ञेनं कल्पतां प्राणो यज्ञेनं कल्पतामपानो यज्ञेनं कल्पतां व्यानो यज्ञेनं कल्पतां चक्षुंर्यज्ञेनं कल्पतां श्रुंश्चे यज्ञेनं कल्पतां चक्षुंर्यज्ञेनं कल्पतां श्रुंशेनं कल्पतां यज्ञेनं कल्पतां वाग्यज्ञेनं कल्पतामात्मा यज्ञेनं कल्पतां यज्ञो यज्ञेनं कल्पताम्॥१०॥

एकां च मे तिस्तर्श्च मे पर्श्च च मे स्पप्त चं मे नवं च म एकांद्रा च मे त्रयोंद्रा च मे पर्श्चद्रा च मे स्प्तर्द्रा च मे नवंद्रा च म एकविश्रातिश्च मे त्रयोविश्रातिश्च मे पर्श्वविश्रातिश्च मे स्प्तिविश्रातिश्च मे नवंविश्रातिश्च म एकित्रिश्राच मे त्रयंस्त्रिश्च मे चतंस्त्रश्च मेऽष्टो चं मे द्वादंरा च मे षोडं रा च मे विश्रातिश्च मे चतुंविश्रातिश्च मेऽष्टाविश्रातिश्च मे द्वात्रिश्च मे चत्वारिश्राच मे चतुंश्चत्वारिश्राच मे द्वात्रिश्च मे चत्वारिश्राच मे चतुंश्चत्वारिश्राच मे चत्वारिश्राच मे चतुंश्चत्वारिश्राच मेऽष्टाचंत्वारिश्राच मे वाजंश्च प्रस्वश्चापिजश्च कर्तुश्च सुवंश्च मूर्धा च व्यक्षियश्चान्त्यायनश्चान्त्यंश्च भौवनश्च भुवंनश्चाधिपतिश्च॥११॥

इडा देवहर्मनुर्यज्ञनीर्बृहस्पतिरुक्थामदानि शशसिष्विद्वशेदेवाः स्क्वाचः पृथिवि मातुर्मा मो हिश्सीर्मधु मनिष्ये मधु जिनिष्ये मध्रं वक्ष्यामि मध्रं विद्ष्यामि मध्रंमतीं देवेभ्यो वार्चमुद्यासः शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभायें पितरोऽनुंमदन्तु॥ ॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ पुरुषसूक्तम् ॥

सहस्रेशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रेपात्। स भूमिं विश्वतौ वृत्वा। अत्यंतिष्ठदृशाङ्गुलम्॥ पुरुष एवेद्र सर्वम्॥ यद्भूतं यच भव्यम्। उतामृतत्वस्येशानः। यदन्नेनातिरोहिति॥ एतावानस्य महिमा। अतो ज्यायाईश्च पूर्रुषः। पादौऽस्य पादौंऽस्येहाऽऽभवात्पुनः। ततो विश्वद्यकामत्। सादानानदाने अभि॥ तस्माँद्विरार्डजायत। विराजो अधि पूर्रुषः। स जातो अर्त्यरिच्यत। पृश्चाद्भृमिमथौ पुरः॥ यत्पुरुषेण हविषाँ। देवा युज्ञमतेन्वत। वुसुन्तो अस्यऽऽसीदाज्यम्। ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः॥ सप्तास्यऽऽसन् परिधर्यः। त्रिः सप्त समिर्धः कृताः। देवा यद्यज्ञं तन्वानाः। अबंधन् पुरुषं पुशुम्॥ तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन्। पुरुषं जातम्यतः। तेन देवा अर्यजन्त। साध्या ऋषयश्च ये॥ तस्माँचज्ञात्सर्वहृतः। सम्मृतं पृषद्गज्यम्। पुशूङ्स्ताङ्श्चेके वायुव्यान्। आरुण्यान्य्राम्याश्च ये॥ तस्मौद्यज्ञात्सर्वेहृतः। ऋचः सामानि जिज्ञरे। छन्दार्श्स जिज्ञारे तस्मौत्। यजुस्तस्मोदजायत॥ तस्मादश्वो अजायन्त। ये के चौभयाद्ताः। गावौ ह जिज्ञरे तस्मौत्। तस्मौजाता अजावयः॥ यत्पुर्रुषं व्यद्धः। कृतिधा व्यकल्पयन्। मुखं किमस्य कौ बाह्र। कावूरू पादावुच्येते॥ ब्राह्मणौऽस्य मुखमासीत्। बाह्र राजन्यः कृतः। ऊरू तदस्य यद्वैश्यः। पुन्नाः शूद्रो अजायत॥ चुन्द्रमा मनसो जातः। चक्षोः सूर्यो अजायत। मुखादिन्द्रेश्चाग्निश्च। प्राणाद्वायुरंजायत॥ नाभ्यां आसीदुन्तरिक्षम्। श्वीष्णों द्यौः समवर्तत। पुद्धां भूमिर्दिशः श्रोत्रौत्। तथा लोकाः अंकल्पयन्॥ वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवर्णं तमसस्तु पारे॥ सर्वाणि रूपाणि विचित्य धीर्रः। नामानि कृत्वाऽभिवद्नु यदास्तै॥ धाता पुरस्ताद्यमुदाजहारं। शुकः प्रविद्वान् प्रदिशश्चतंस्रः। तमेवं यज्ञमयजन्त देवाः। तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्। ते ह नाकै सम्मूतः पृथिव्यै रसाँच। विश्वकर्मणः समवर्तताधि। तस्य त्वष्टा विदर्धदूपमेति। तत्पुरुषस्य विश्वमाजानमग्रे॥ वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवंणं तमंसः परंस्तात्। तमेवं विद्वानमृतं इह भविति। नान्यः पन्थां विद्यतेऽयंनाय॥ प्रजापंतिश्चरित् गभें अन्तः। अजायंमानो बहुधा विजायते। तस्य धीराः परिजानिन्त योनिम्। मरींचीनां पदिमच्छिन्ति वेधसः॥ यो देवेभ्य आतंपित। यो देवानां पुरोहितः। पूर्वो यो देवेभ्यो जातः। नमो रुचाय ब्राह्मये॥ रुचं ब्राह्मं जनयंन्तः। देवा अग्रे तदंब्रवन्। यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्। तस्य देवा असन् वशे॥ हीश्चं ते लक्ष्मीश्च पल्यौ। अहोरात्रे पार्श्वे। नक्षत्राणि रूपम्। अश्विनौ व्यात्तम्। इष्टं मेनिषाण। अमुं मेनिषाण। सर्वं मनिषाण॥ ॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ नारायणसूक्तम्॥

(तैत्तिरीयारण्यकम् - ४/प्रपाठकः - १०/अनुवाकः - १३)

सहस्रशीर्षं देवं विश्वाक्षं विश्वशंम्भुम्। विश्वं नारायणं देवमक्षरं पर्मं पदम्। विश्वतः परमाञ्चित्यं विश्वं नारायणः हिरम्। विश्वमेवेदं पुरुषस्तिद्वश्वमुपंजीवित। पितं विश्वस्यऽऽत्मेश्वर्थरश्चराश्वतः शिवमंच्युतम्। नारायणं महाज्ञेयं विश्वात्मानं

परायणम्। नारायणपरो ज्योतिरात्मा नारायणः परः। नारायण परं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः परः। नारायणपरो ध्याता ध्यानं नारायणः परः। यचं किञ्चिज्ञागत्सर्वं दृश्यते श्रूयतेऽपि वा॥

अन्तर्बहिश्चे तत्सर्वं व्याप्य नौरायुणः स्थितः। अनेन्तमव्ययं कविर समुद्रेऽन्तं विश्वराम्भुवम्। पुद्मकोश प्रतीकाशुर् हृद्यं चाप्यधोमुंखम्। अधौ निष्ट्या वितस्यान्ते नाभ्यामुपरि तिष्ठति। ज्वालमालाकुलं भाति विश्वस्यऽऽयतनं महत्। सन्तंतः शिलाभिस्तुलम्बत्याकोशसन्निभम्। तस्यान्ते सुषिर सूक्ष्मं तस्मिन्त्सर्वं प्रतिष्ठितम्। तस्य मध्ये महानं-मिर्विश्वाचिर्विश्वतौमुखः। सोऽय्रेभुग्विभजन्तिष्ठन्नाहौरमजरः कविः। तिर्यगूर्ध्वर्मधः शायी रुश्मयस्तस्य सन्तता। सन्तापयति स्वं देहमापदितलमस्तकः। तस्य मध्ये विह्विशिखा अणीयौर्ध्वा व्यवस्थितः। नीलतौयद्मध्यस्थाद्विद्युल्लेखेव मार्स्वरा। नीवारशूकवत्तन्वी पीता भास्वत्यणूपमा। तस्याः शिखाया मध्ये प्रमात्मा व्यवस्थितः। स ब्रह्म स शिवः स हरिः सेन्द्रः सोऽक्षरः पर्मः स्वराट्॥ ऋतः सत्यं परं ब्रह्म पुरुषं कृष्णपिक्नलम्। ऊर्ध्वरेतं विरूपाक्षं विश्वरूपाय वै नमो नर्मः। नारायणायं विद्महे वासुद्वायं धीमहि। तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्। विष्णोर्नु कं वीर्याणि प्रवोचं यः पार्थिवानि विममे रजार्रस् यो अस्क्रेभायदुत्तर्र स्घस्थं विचक्रमाणस्त्रेधोर्रुगायो विष्णोर्राटमसि विष्णोः पृष्ठमसि विष्णोः श्रम्नैस्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्वयमसि वैष्णवमसि विष्णवे त्वा॥ ॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥विष्णुसूक्तम्॥

विष्णोर्नु कं वीर्याणि प्रवोचं यः पार्थिवानि विममे रजार्रसि यो अस्केमायुद्धत्तरं स्प्रध्यं विचक्रमाणस्त्रेधोर्रुगायः॥
तदंस्य प्रियम्भिपाथौ अश्याम्। नरो यत्रं देवयवो मदंन्ति।
उरुक्रमस्य स हि बन्धुरित्था। विष्णौः पुदे पर्मे मध्व उत्थ्संः।
प्र तद्विष्णुः स्तवते वीर्याय। मृगो न भीमः कुंचरो गिरिष्ठाः।
यस्योरुषुं त्रिषु विक्रमणेषु। अधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा। पुरो
मात्रया तनुवा वृधान। न ते महित्वमन्वश्चवन्ति॥

उमे ते विद्य रजेसी पृथिव्या विष्णो देवत्वम्। प्रमस्यं विथ्से। विचेकमे पृथिवीमेष एताम्। क्षेत्रीय विष्णुर्मनुषे दशस्यन्। ध्रुवासो अस्य कीरयो जनांसः। उरुक्षितिः सुजनिमाचकार। त्रिर्देवः पृथिवीमेष एताम्। विचेकमे शतचेंसं महित्वा। प्र विष्णुरस्तु त्वसस्तवीयान्। त्वेषङ्ह्यंस्य स्थविरस्य नामं॥

॥भूसूक्तम्॥

(तैत्तिरीय संहिता काण्डम् – १/प्रपाठकः – ५/अनुवाकः – ३)

भूमिर्भूम्ना द्यौर्विरिणाऽन्तरिक्षं मिह्नत्वा। उपस्थे ते देव्यदितेऽग्नि-मिन्नादमन्नाद्यायाऽऽद्धे। आऽयङ्गोः पृश्निरकमीदस्ननन्मातरं पुनः। पितरं च प्रयन्त्सुवः। त्रिश्रशद्धाम् वि राजिति वाक्यतङ्गाये शिश्रिये। प्रत्यस्य वह द्यभिः। अस्य प्राणाद्पानृत्यन्तश्चरित रोचना। व्यख्यन् मिह्नषः सुवः॥

यत्त्वां कुद्धः पेरोवपं मन्युना यद्वर्त्या। सुकल्पंमग्ने तत्तव पुनस्त्वोद्दीपयामसि। यत्ते मन्युपंरोप्तस्य पृथिवीमनुं दध्वसे। आदित्या विश्वे तद्देवा वसंवश्च समाभरन्। मनो ज्योतिर्जुषतामाज्यं विच्छिन्नं युज्ञश् सिम्मं द्धातु। बृह्स्पतिस्तनुतािममं नो विश्वे देवा इह माद्यन्ताम्। सप्त ते अग्ने सिम्धः सप्त जिह्वाः सप्तर्षयः सप्त धामं प्रियाणि। सप्त होत्राः सप्तधा त्वां यजन्ति सप्त योनीरापृणस्वा घृतेने। पुनेर्ह्जो नि वर्तस्व पुनेरग्न इषाऽऽयुषा। पुनेर्नः पाहि विश्वतः। सह रय्या नि वर्तस्वाऽग्ने पिन्वस्व धार्रया। विश्वपिस्त्रया विश्वतस्परि। लेकः सलेकः सुलेक्स्ते ने आदित्या आज्यं जुषाणा वियन्तु केतः सकेतः सुकेतस्ते ने आदित्या आज्यं जुषाणा वियन्तु विवस्वाश् अदितिदेवज्ञित्स्ते ने आदित्या आज्यं जुषाणा वियन्तु विवस्वाश् अदितिदेवज्ञित्स्ते ने आदित्या आज्यं जुषाणा वियन्तु।

॥दुर्गा सूक्तम्॥

(तैत्तिरीयारण्यकम् - ४/प्रपाठकः - १०/अनुवाकः - २)

जातवेदसे सुनवाम् सोमं मरातीयतो निद्हाति वेदः। स नः पर्षदिति दुर्गाणि विश्वां नावेव सिन्धुं दुरिताऽत्यिप्तः॥१॥

ताम् प्रिवर्णां तपसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कर्मफुलेषु जुष्टाम् । दुर्गाः देवी र शर्रणम्हं प्रपेद्ये सुतर्रसि तरसे नर्मः॥२॥

अम्ने त्वं परिया नव्यो अस्मान्थ्स्विस्तिभिरित दुर्गाणि विश्वा। पूर्श्व पृथ्वी बंहुला ने उर्वी भर्वा तोकाय तनेयाय शंयोः॥३॥

विश्वानि नो दुर्गहा जातवेदः सिन्धुं न नावा द्विताऽतिपर्षि। अग्ने अत्रिवन्मनेसा गृणानौऽस्माकं बोध्यविता तनूनाम् ॥४॥

पृतना जित्र सहमानमुग्रम् प्रिः ह्वेम पर्माथ्सधस्थात् । स नः पर्षदिति दुर्गाणि विश्वा क्षामद्देवो अति दुरितात्यग्निः॥५॥

प्रलोषि कमीड्यो अध्वरेषु सनाच होता नव्यश्च सित्सि। स्वाञ्चौग्ने तुनुवं पिप्रयस्वास्मभ्यं च सौर्भगमायंजस्व॥६॥ गोभिर्जुष्टमयुजो निषिक्तं तवैन्द्र विष्णोरनुसश्चरेम। नार्कस्य पृष्ठमभि संवसानो वैष्णवीं लोक इह मादयन्ताम् ॥७॥ कात्यायनायं विद्महे कन्यकुमारि धीमहि। तन्नो दुर्गिः प्रचोदयात्॥

॥श्रीसूक्तम्॥

हिर्एयवर्णां हरिणीं सुवर्णरंजतस्त्रजाम् । चन्द्रां हिरण्मेयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह॥१॥ तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् । यस्यां हिर्रण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥२॥ अश्वपूर्वां रंथमध्यां हस्तिनादप्रबोधिनीम् । श्रियं देवीमुपंह्वये श्रीमींदेवीर्जुषताम् ॥३॥ कां सोऽस्मितां हिर्रण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलेन्तीं तृप्तां तर्पर्यन्तीम् । पद्मवंणां तामिहोपंह्रये श्रियम् ॥४। स्थितां चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुंष्टामुदाराम् । तां पद्मिनीमीं शरणमहं प्रपंदोऽलक्ष्मीमें नश्यतां त्वां वृणे॥५॥

आदित्यवेर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पितस्तवे वृक्षोऽथ बिल्वः। तस्य फर्लानि तपसा नुंदन्तु मायान्तरायाश्चे बाह्या अंऌक्ष्मीः॥६॥

उपैतु मां देवस्रखः कीर्तिश्च मणिना सह। प्रादुर्भूतोऽस्मि राष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिमृद्धिं ददातु मे॥७॥

क्षुत्पिपासामेलां ज्येष्टामलक्ष्मीं नशियाम्यहम् । अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णुदं मे गृहात् ॥८॥

गुन्<u>धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्</u> । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥९॥

मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमेशीमहि। पुशूनां रूपमन्नस्य मिय श्रीः श्रयतां यद्याः॥१०॥

कुर्दमेन प्रजाभूता मुयि सम्भव कुर्दम। श्रियं वासयं में कुले मातरं पद्ममालिनीम् ॥११॥

आपः सृजन्तुं स्निग्धानि चिक्कीत वेस मे गृहे। नि चे देवीं मातरं श्रियं वासयं मे कुले॥१२॥ आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम् ।
सूर्यां हिरण्मेयीं लक्ष्मीं जातंवेदो म आवंह ॥१३॥
आर्द्रां यः करिणीं यृष्टिं पिङ्गलां पद्ममालिनीम् ।
चन्द्रां हिरण्मेयीं लक्ष्मीं जातंवेदो म आवंह ॥१४॥
तां म आवंह जातंवेदो लक्ष्मीमनंपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गावौ दास्योऽश्वान् विन्देयं पुरुषानहम् ॥१५
महादेव्यै चं विद्महें विष्णुप्त्यै चं धीमहि।
तन्नों लक्ष्मीः प्रचोदयात्॥

॥ मेधासूक्तम्॥

(तैत्तिरीयारण्यकम् – ४/प्रपाठकः – १०/अनुवाकः – ४१–४४)

मेधादेवी जुषमाणा न आगाँद्विश्वाची भुद्रा सुमनुस्यमाना। त्वया जुष्टां नुदमाना दुरुक्तांन् बृहद्वंदेम विद्थें सुवीराः। त्वया जुष्टं ऋषिभविति देवि त्वया ब्रह्मांऽऽगतश्रीरुत त्वयां। त्वया जुष्टेश्चित्रं मेधां देवी सरस्वती। मेधां में अश्विनावुभावाधेतां पुष्करस्रजा। अप्सरासुं च या मेधा गन्धर्वेषुं च यन्मनः। देवीं मेधा सरस्वती सा माँ मेधा सुरभिर्जुषताङ् स्वाहाँ॥ आ माँ मेधा सुरभिर्विश्वरूपा हिरंण्यवर्णा जर्गती जगम्या। ऊर्जस्वती पर्यसा पिन्वमाना सा माँ मेधा सुप्रतीका जुषन्ताम्। मयि मेधां मयि प्रजां मय्यग्निस्तेजौ द्धातु मियं मेधां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेधां मिय प्रजां मिय सूर्यो भ्राजौ द्धातु।

॥भाग्यसूक्तम्॥

(तैत्तिरीय बाह्मणम् अष्टकम् – ३/प्रश्नः – ८/अनुवाकम् – ९)

प्रातर्िमें प्रातिरन्द्र हवामहे प्रातिमेत्रा वर्रुणा प्रातर्श्विना। प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातः सोममुत रुद्र हवेम॥१॥

प्रातिर्जितं भगमुग्रश् ह्वेम वयं पुत्रमिदितेर्यो विधर्ता। आद्रिश्चिद्यं मन्यमानस्तुरिश्चद्राजां चिद्यं भगं भुक्षीत्याहं॥२॥

भग प्रणेतुर्भग सत्यंराधो भगेमां धियमुद्वदद्नः। भगप्रणो जनय गोभिरश्वैर्भगुप्रनृभिनृवन्तः स्याम॥३॥

उतेदानीं भर्गवन्तः स्यामोत प्रिपत्व उत मध्ये अह्नाम् । उतोदिता मघवन्थ्सूर्यस्य वयं देवानार् सुमतौ स्याम॥४॥

भर्ग एव भर्गवाश अस्तु देवास्तेन वयं भर्गवन्तः स्याम। तं त्वा भगु सर्व इज्जोहवीमि सनौ भग पुर एता भवेह॥५॥

सर्मध्वरायोषसौऽनमन्त दधिकार्वेव शुर्चये पदार्य। अर्वाचीनं वसुविदं भगन्नो रथमिवाश्वीवाजिन आवहन्तु ॥६॥

अश्ववितार्गोमितीर्न उषासौ वीरविताः सदीमुच्छन्तु भुद्राः। घृतं दुर्हाना विश्वतः प्रपीनायूयं पति स्वस्तिभिः सदी नः॥७॥

यो माँऽग्ने भागिनई सन्तमथाभागं चिकीर्षति। अभागमंग्ने तं कुरु मामंग्ने भागिनं कुरु॥८॥

॥ पवमानसूक्तम्॥

(तैत्तिरीय ब्राह्मणम् अष्टकम् – १/प्रश्नः – ४/अनुवाकः – ८) (तैत्तिरीय संहिता काण्डम् – ५/प्रपाठकः – ६/अनुवाकः – १)

ॐ तच्छं योरावृणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीः

स्वस्तिरस्तु नः। स्वस्तिर्मानुषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नौ अस्तु द्विपदैं। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः। द्धिकाव्ण्णो अकार्षम्। जिष्णोरश्वस्य वाजिनः। सुरभिनो मुर्खाकरत्। प्रण आयू श्वि तारिषत्। आपो हि ष्ठा मेयो भुवस्ता ने ऊर्जे देघातन। महेरणाय चक्षेसे। यो वेः शिवतमो रसस्तस्यं भाजयते ह नेः। उशतीरिव मातरः। तस्मा अरङ्गमामवो यस्य क्षयाय जिन्वंथ। आपौ जनयंथा च नः॥ हिर्रण्यवर्णाः शुच्चेयः पावका यास् जातः कश्यपो यास्विन्द्रेः। अग्निं या गर्भं दिधरे विरूपास्ता न आपः शङ्क स्योना भवन्तु॥ यासार् राजा वर्रणो याति मध्ये सत्यानृते अवपरयं जनानाम्।

मधुश्चृतः शुर्चयो याः पावकास्ता न आपः शङ् स्योना भवन्तु॥ यासौ देवा दिवि कृण्वन्ति भक्षं या अन्तरिक्षे बहुधा भवेन्ति। याः पृथिवीं पर्यसोन्दन्ति शुकास्ता नु आपुः शङ् स्योना भवन्तु॥ शिवेन मा चक्षुंषा पश्यताऽऽपः शिवयां तनुवोपं स्पृशत त्वचं मे। सर्वार् अग्नीर रेप्सुषदौ हुवे वो मिय वर्चो बलमोजो नि र्धत्त॥ पर्वमानः सुवर्जनः। प्वित्रेण विचर्षणिः। यः पोता स पुनातु मा। पुनन्तुं मा देवजनाः। पुनन्तु मनवो धिया। पुनन्तु विश्व आयर्वः। जातंवेदः पवित्रंवत्। पवित्रंण पुनाहि मा। शुक्रेण देवदीर्घत्। अग्ने कत्वा कतूर रनुं। यत्ते पवित्रमर्चिषि। अग्ने वितंतमन्तरा। ब्रह्म तेनं पुनीमहे। उभाभ्यां देवसवितः। पवित्रेण सवेन च। इदं ब्रह्म पुनीमहे। वैश्वदेवी पुनती देव्यागांत्। यस्ये बह्वीस्तनुवौ वीतपृष्ठाः। तया मद्देन्तः सधमाद्येषु। वयङ् स्याम पत्यो रयीणाम्। वैश्वानरो रिमिर्मा पुनातु। वार्तः प्राणेनेषिरो मयो भूः। द्यावापृथिवी पर्यसा पर्योभिः। ऋतावरी यज्ञिये मा पुनीताम्। बृहद्भिः सवितुस्तृभिः। विषेष्ठेर्देवमन्मभिः। अग्ने दक्षैः पुनाहि मा। येन देवा अपुनत। येनऽऽपौ दिव्यङ्कराः। तेन दिव्येन ब्रह्मणा। इदं ब्रह्म पुनीमहे। यः पावमानीरध्येति। ऋषिभिः सम्भृतः रसम्। सर्वः स पूतमंश्नाति। स्वदितं मातुरिश्वना। पावमानीर्यो अध्येति। ऋषिभिः सम्मृत रसम्। तस्मै सरस्वती दुहे। क्षीर सुर्पिर्मधूदकम्॥ पावमानीः स्वस्त्ययंनीः। सुदुघाहि पर्यस्वतीः। ऋषिभिः सम्भृतो रसः। ब्राह्मणेष्वमृत र् हितम्। पावमानीर्दिशन्तु नः। इमं लोकमथौ अमुम्। कामान्त्समधियन्तु नः। देवीर्देवैः समाभृताः। पावमानीः स्वस्त्ययेनीः। सुदुघाहि घृतश्रुतः। ऋषिभिः सम्भृतो रसः। ब्राह्मणेष्वमृत १ हितम्। येन देवाः पवित्रेण। आत्मानं पुनते सद्। तेन सहस्रधारेण। पावमान्यः पुनन्तु मा। प्राजापत्यं पवित्रम्। शतोद्यामः हिरण्मयम्। तेन ब्रह्म विदौ वयम्। पूतं ब्रह्म पुनीमहे। इन्द्रंः सुनीती सहमा पुनातु। सोमः स्वस्त्या वर्रुणः समीच्या। यमो राजां प्रमृणाभिः पुनातु मा। जातवेदा मोर्जयन्त्या पुनातु। भूर्भुवः सुर्वः।

तच्छं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नौ अस्तु द्विपदै। शं चतुष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ आयुष्यसूक्तम्॥

यो ब्रह्मा ब्रह्मण उजाहार प्राणैः शिरः कृत्तिवासाः पिनाकी। ईशानो देवः स न आयुर्द्धातु तस्मै जुहोमि हविषा घृतेन॥१॥ विभ्राजमानः सरिरस्य मध्याद्रोचमानो घर्मरुचिर्य आगात् । स मृत्युपाशानपनुंद्य घोरानिहायुषेणो घृतमंत्तु देवः॥२॥ ब्रह्मज्योतिर्ब्रह्मपत्नीषु गर्भं यमाद्धात् पुरुरूपं जयुन्तम् । सुवर्णरम्भग्रहमर्कमर्च्यं तुमायुषे वर्धयामौ घृतेन॥३॥ श्रियं लक्ष्मीमौबलामम्बिकां गां षष्टीं च यामिन्द्रसेनैत्युदाहुः। तां विद्यां ब्रह्मयोनिर्ं सरूपामिहायुषे तर्पयामौ घृतेन॥४॥ दाक्षायण्यः सर्वयोन्यंः स योन्यः सहस्रशो विश्वरूपां विरूपाः। ससूनवः सपतर्यः सयूथ्या आयुषेणो घृतमिदं जुषन्ताम् ॥५॥ दिव्या गणा बहुरूपाः पुराणा आयुदिछदो नः प्रमर्श्नन्तु वीरान् । तेभ्यो जुहोमि बहुर्घा घृतेन मा नः प्रजाश रीरिषो मौत वीरान् ॥६। एकः पुरस्ताच इदं बभूव यतो बभूव भुवनस्य गोपाः। यमप्येति भुवनः साम्पराये स नो हविर्घृतमिहायुषैत्त देवः॥७॥ वसून रुद्रांनादित्यान् मरुतोऽथ साध्यान् ऋभून् यक्षान् गन्धर्वाङ्श्च पितृङ्श्च विश्वान्। भृगून् सर्पाङ्श्चाङ्गिरसोऽथ सर्वान् घृतः हुत्वा स्वायुष्या महयाम शृश्वत्॥८॥

> विष्णो त्वं नो अन्तमः शर्मं यच्छ सहन्त्य। प्रतेधारां मधुश्रुत उथ्सं दुहृते अक्षितम् ॥ ॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ नवग्रहसूक्तम्॥

आ सत्येन रर्जसा वर्तमानो निवेशयंश्वमृतं मत्यं च। हिर्ण्ययेन सिवता रथेनाऽदेवो याति भुवना विपश्यन्। अग्निं दूतं वृणीमहे होतारं विश्ववेदसम्। अस्य यज्ञस्यं सुक्रतुम्॥ येषामीशे पशुपतिः पशूनां चतुष्पदामृत च द्विपदाम्। निष्कीतोऽयं यज्ञियं भागमेतु रायस्योषा यर्जमानस्य सन्तु॥ अधिदेवता प्रत्यधिदेवता सहिताय आदित्याय नमः॥१॥

अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम्। अपाश रेताश्सि जिन्वति। स्योना पृथिवि भवाऽनृक्षरा निवेदानी। यच्छानः दार्म सप्रथाः। क्षेत्रस्य पतिना वयः हिते नेव जयामसि। गामश्रं पोषयिल्वा स नौ मुडातीदृशै॥ अधिदेवता प्रत्यधिदेवता सहिताय अङ्गारकाय नमः॥२॥

प्रवं: शुक्रायं भानवं भरध्वः हव्यं मितं चाग्नये सुपूतम्॥ यो दैव्यानि मानुषा जनूङ्घ्यन्तर्विश्वानि विद्य ना जिगाति॥ इन्द्राणीमासु नारिषु सुपत्नीमहमेश्रवम्। न ह्यस्या अपरञ्चन जरसा मरते पतिः॥ इन्द्रं वो विश्वतस्परि हर्वामहे जनैभ्यः। अस्मार्कमस्तु केवेलः॥

अधिदेवता प्रत्यधिदेवता सहिताय शुकाय नमः॥३॥

आप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्णियम्। भवा वार्जस्य सङ्गर्थे॥ अप्सु में सोमों अब्रवीदन्तर्विश्वानि भेषजा। अग्नि र्च विश्वराम्भुवमापेश्च विश्वभेषजीः। गौरी मिमाय सिललानि तक्षत्येकपदी द्विपदी सा चतुष्पदी। अष्टापदी नवंपदी बभूवृषी सहस्रौक्षरा पर्मे व्यौमन्। अधिदेवता प्रत्यधिदेवता सहिताय सोमाय नमः॥४॥

उद्बंध्यस्वाय्ने प्रतिजागृद्धोनिमष्टापूर्ते सश्सृजेथाम्यं चं। पुनंः कृण्वङ्स्त्वां पितरं युवानम्नवाताश्मीत्विय तन्तुंमेतम्॥ इदं विष्णुर्विचंकमे त्रेधा निद्धे पदम्। समूढमस्यपाश् सुरे॥ विष्णो र्राटेमिस विष्णोः पृष्ठमिस विष्णोः श्रम्नेस्थो विष्णोः स्यूरिस विष्णोधुंवमिस वैष्णवमिस विष्णांव त्वा। अधिदेवता प्रत्यधिदेवता सिहताय बुधाय नमः॥५॥

बृहंस्पते अतियद्यों अहाँद्विमद्विभाति क्रतुंम् जनेषु। यद्दीद्यच्छवंसर्तप्रजात तद्स्मासु द्रविणं धेहि चित्रम्॥ इन्द्रंमरुत्व इह पांहि सोमं यथां शार्याते अपिंबः सुतस्यं। तव प्रणीती तवं श्र्शमं न्नाविवासन्ति क्वयंः सुयज्ञाः॥ ब्रह्मंजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमृतः सुरुचौ वेन आवः। सबुिध्नयां उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमस्तश्च विवाः॥ अधिदेवता प्रत्यधिदेवता सहिताय बृहस्पतये नमः॥६॥

शं नौ देवीर्मिष्ट्यं आपौ भवन्तु पीतयै। शंयोर्भिस्रवन्तु

नः॥ प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बंभूव। यत्कांमास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयङ् स्याम् पत्यो रयीणाम्। इमं यमप्रस्तरमाहि सीदाऽङ्गिरोभिः पितृभिः संविदानः। आत्वा मन्त्राः कविश्वास्ता वहन्त्वेना राजन् ह्विषां मादयस्व॥ अधिदेवता प्रत्यधिदेवता सहिताय शनैश्चराय नमः॥७॥

कयां नश्चित्र आभुंवदूती सदावृंधः सखाँ। कया शिचिष्ठया वृता। आऽयङ्गोः पृश्लिरकमीदस्नन्मातरं पुनः। पितरं च प्रयन्त्सुवंः। यत्ते देवी निर्ऋतिराब्बन्ध दामं ग्रीवास्वविचर्त्यम्। इदं ते तिद्विष्याम्यायुंषो न मध्यादर्थाजीवः पितुमंद्धि प्रमुक्तः॥ अधिदेवता प्रत्यधिदेवता सहिताय राहवे नमः॥८॥

केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशौ मर्या अपेशसै। समुषद्भिरजायथाः॥ ब्रह्मा देवानौ पद्वीः केवीनामृषिर्विप्राणां महिषो मृगाणौम्। श्येनो गृप्राणाः स्विधितिर्वनानाः सोमः पवित्रमत्यैति रेभन्। (ऋक) सचित्र चित्रं चितयनौ तमस्मे चित्रंक्षत्र चित्रतमं वयोधाम्। चन्द्रं रियं पुरुवीरौ बृहन्तं चन्द्रंचन्द्राभिर्गृणते युवस्व॥ अधिदेवता प्रत्यधिदेवता सहिताय केतवे नमः॥९॥

॥ ॐ आदित्यादि नवग्रहदेवंताभ्यो नमो नर्मः॥ ॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ नक्षत्रसूक्तम् ॥

(तैत्तिरीय ब्राह्मणम् अष्टकम् – ३/प्रश्नः – १) (तैत्तिरीय संहिता काण्डम् – ३/प्रपाठकः – ५/अनुवाकः –१)

अग्निनीः पातु कृत्तिकाः। नक्षेत्रं देविमिन्द्रियम्। इदमासां विचक्षणम्। हविरासं जुहोतन। यस्य भान्ति रशमयो यस्य केतर्वः। यस्येमा विश्वा भुवनानि सर्वा। स कृत्तिकाभि-रभिसंवसानः। अग्निनी देवः स्विते देधातु॥१॥ प्रजापंते रोहिणी वेतु पत्नी। विश्वरूपा बृहती चित्रभानुः। सा नौ यज्ञस्य सुविते द्घातु। यथा जीवेम शरदः सवीराः। रोहिणी देव्युदंगात्पुरस्तांत्। विश्वां रूपाणि प्रतिमोदंमाना। प्रजापंतिश हविषां वर्धयंन्ती। प्रिया देवानामुपंयातु यज्ञम्॥२॥ सोमो राजा मृगशीरुषेण आगन्न्। शिवं नक्षत्रं प्रियमस्य धाम। आप्यार्यमानो बहुधा जनेषु। रेतः प्रजां यर्जमाने दधातु। यत्ते नक्षेत्रं मृगशीरुषमस्ति। प्रियशर्गजन् प्रियतमं प्रियाणाम्। तस्मै

ते सोम हिवर्षा विधेम। शं ने एधि द्विपदे शं चतुष्पदे॥३॥ आर्द्रयां रुद्रः प्रथमा न एति। श्रेष्ठौ देवानां पतिरिष्ट्रयानाम्। नक्षत्रमस्य हिवर्षा विधेम। मा नेः प्रजाश रीरिष्-मोत वीरान्। हेती रुद्रस्य परिणो वृणक्तु। आर्द्रा नक्षत्रं जुषताश हिवर्नेः। प्रमुश्रमानौ दुरितानि विश्वा। अपाघश्रश्रं सन्नुद्तामरितम्॥४॥

पुनर्नो देव्यदितिः स्पृणोतु। पुनर्वसू नः पुनरेतां यज्ञम्। पुनर्नो देवा अभियन्तु सर्वे। पुनः पुनर्वो हिवषां यजामः। एवा न देव्यदितिरन्वा। विश्वस्य भूत्रीं जगेतः प्रतिष्ठा। पुनर्वसू हिवषां वर्धयन्ती। प्रियं देवानामप्येतु पार्थः॥५॥

बृह्स्पतिः प्रथमं जायमानः। तिष्यं नक्षत्रम्भि सम्बंभूव। श्रेष्ठो देवानां पृतेनासु जिष्णुः। दिशोऽनु सर्वा अभयं नो अस्तु। तिष्यः पुरस्तादुत मध्यतो नः। बृह्स्पतिर्नः परिपातु पृश्चात्। बाधेतां देषो अभयं कृणुताम्। सुवीर्यस्य पत्यः स्याम॥६॥

इदः सर्पेभ्यो हिवरंस्तु जुष्टम्। आश्चेषा येषांमनुयन्ति चेतः। ये अन्तरिक्षं पृथिवीं क्षियन्ति। ते नेः सर्पासो हवमार्गमिष्ठाः। ये रोचने सूर्यस्यापि सर्पाः। ये दिवं देवीमनुंस्ऋरन्ति। येषांमाश्चेषा अनुयन्ति कामम्। तेभ्यः सुर्पेभ्यो मधुमजुहोमि॥७॥

उपहूताः पितरो ये मघासुं। मनौजवसः सुकृतः सुकृत्याः। ते नो नक्षत्रे हवमार्गमिष्ठाः। स्वधार्भिर्यज्ञं प्रयंतं जुषन्ताम्। ये अग्निद्ग्धा येऽनिग्निद्ग्धाः। येऽमुं लोकं पितरः क्षियन्ति। याङ्श्री विद्मया र र्रं च न प्रविद्म। मघासुं यज्ञ र सुकृतं जुषन्ताम्॥८॥ गवां पतिः फल्गुनीनामसि त्वम्। तद्र्यमन् वरुणमित्र चार्रः। तं त्वां वयश संनितार सनीनाम्। जीवा जीवन्तमुप संविद्योम। येनेमा विश्वा भुवनानि सिर्जिता। यस्य देवा अनुसंयन्ति चेतः। अर्यमा राजाऽजरस्तु विष्मान्। फल्गुनीनामृषभो रौरवीति॥९॥ श्रेष्ठों देवानां भगवो भगासि। तत्त्वां विदुः फल्गुनीस्तस्यं वित्तात्। अस्मभ्यं क्षत्रमजर्र सुवीर्यम्। गोमदश्ववदुपसन्नुदेह। भगो ह दाता भग इत्प्रदाता। भगौ देवीः फल्गुनीराविवेश। भगस्येत्तं प्रसवं गमिम। यत्रे देवैः संघमादं मदेम॥१०॥

आयातु देवः संवितोपयातु। हिर्ण्ययेन सुवृता रथेन। वहन् हस्तर्थ सुभगं विद्यनापसम्। प्रयच्छन्तं पपुरि पुण्यमच्छ। हस्तः प्रयंच्छ त्वमृतं वसीयः। दक्षिणेन प्रतिगृभ्णीम एनत्। दातारमुद्य संविता विदेय। यो नो हस्ताय प्रसुवाति यज्ञम्॥११॥
त्वष्टा नक्षत्रमभ्येति चित्राम्। सुभगं संसं युवति रोचमानाम्।
निवेशयंत्रमृतान्मर्त्यां ५ श्च। रूपाणि पि १ श्वान् भवनानि विश्वा।
तन्नस्त्वष्टा तद्वं चित्रा विचेष्टाम्। तन्नक्षत्रं भृरिदा अस्तु
मह्मम्। तन्नेः प्रजां वीरवंती र सनोतु। गोभिनों अश्वैः समनकु
यज्ञम्॥१२॥

वायुर्नक्षंत्रमभ्येति निष्ट्याम्। तिग्मर्थङ्गो वृषभो रोर्रुवाणः। समीरयन् भुवना मातरिश्वां। अप द्वेषा श्रीत नुद्तामरातीः। तन्नो वायुस्तदु निष्ट्या शृणोतु। तन्नक्षेत्रं भूरिदा अस्तु मह्म्म्। तन्नौ देवासो अनुजानन्तु कामम्। यथा तरेम दुरितानि विश्वा॥१३॥ दूरमस्मच्छत्रवो यन्तु भीताः। तदिन्द्राग्नी कृणुतां तद्विशाखि। _ तन्नौ देवा अर्नुमदन्तु यज्ञम्। पृश्चात् पुरस्तादर्भयं नो अस्तु। नक्षंत्राणामधिपत्नी विशाखि। श्रेष्ठाविन्द्राग्नी भुवनस्य गोपौ। विषूचः शत्रूनपबार्धमानौ। अप क्षुर्धं नुद्तामरातिम्॥१४॥ पूर्णा पश्चादुत पूर्णा पुरस्तात्। उन्मध्यतः पौर्णमासी जिंगाय। तस्यां देवा अधिसंवसन्तः। उत्तमे नाकं इह माद्यन्ताम्।

पृथ्वी सुवर्चा युवितः सजोषाः। पौर्णमास्युर्दगाच्छोर्भमाना। आप्याययन्ती दुरितानि विश्वा। उरुं दुहां यर्जमानाय यज्ञम्॥१५॥

ऋष्यास्मं ह्व्यैर्नमंसोप्सद्यं। मित्रं देवं मित्रधेयं नो अस्तु। अनुराधान् ह्विषां वर्धयंन्तः। शतं जीवेम शरदः सवीराः। चित्रं नक्षत्रमुदंगात्पुरस्तात्। अनुराधा स इति यद्वदंन्ति। तन्मित्र एति पथिभिर्देवयानैः। हिर्ण्ययैर्वितंतैर्न्तरिक्षे॥१६॥

इन्द्रौ ज्येष्ठामनु नक्षेत्रमेति। यस्मिन् वृत्रं वृत्र्त्र तूर्यै ततारे। तस्मिन्वयममृतं दुर्हानाः। क्षुधं तरेम दुरितिं दुरिष्टिम्। पुरन्द्रायं वृष्मायं धृष्णवे। अषाढाय सहमानाय मीढुषे। इन्द्रीय ज्येष्ठा मधुमदुर्हाना। दुरुं कृणोतु यजमानाय लोकम्॥१७॥

मूलं प्रजां वीरवंतीं विदेय। पराँच्येतु निर्ऋितः पराचा। गोमिर्नक्षेत्रं पशुमिः समक्तम्। अहर्भूयाद्यजमानाय मह्यम्। अहर्नो अद्य सुविते द्धातु। मूलं नक्षेत्रमिति यद्वद्नित। परांचीं वाचा निर्ऋितं नुदामि। शिवं प्रजाये शिवमस्तु मह्यम्॥१८॥ या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। यासामषाढा अनुयन्ति कामम्। ता न आपः शङ् स्योना भवन्तु। याश्च कूप्या याश्च नाद्याः समुद्रियाः। याश्च वैश्वन्तीरुत प्रांसचीर्याः। यासामषाढा मधुं भक्षयन्ति। ता न आपः शङ् स्योना भवन्तु॥१९॥

तन्नो विश्वे उपं शृण्वन्तु देवाः। तद्षाढा अभिसंयन्तु यज्ञम्। तन्नक्षंत्रं प्रथतां प्रशुभ्यः। कृषिर्वृष्टिर्यजमानाय कल्पताम्। शुभ्राः कन्यां युवतयः सुपेशंसः। कर्मकृतः सुकृतो वीर्यावतीः। विश्वान् देवान् ह्विषां वर्धयन्तीः। अषाढाः काममुपंयान्तु यज्ञम्॥२०॥ यस्मिन् ब्रह्माभ्यजयत्सर्वमेतत्। अमुं चं लोकमिदमूच सर्वम्। तन्नो नक्षत्रममिजिद्विजित्यं। श्रियं द्धात्वहृणीयमानम्। उभौ लोकौ ब्रह्मणा सिन्नतेमो। तन्नो नक्षत्रममिजिद्विच्छाम्। तिस्मिन्वयं पृतंनाः सञ्जयेम। तन्नो देवासो अनुजानन्तु कामम्॥२१॥

शृण्वन्ति श्रोणाममृतस्य गोपाम्। पुण्यामस्या उपेशृणोमि वाचम्। महीं देवीं विष्णुपत्नीमजूर्याम्। प्रतीची मेनाश ह्विषां यजामः। त्रेधा विष्णुरुरुगायो विचेक्रमे। महीं दिवं पृथिवीमन्तरिक्षम्। तच्छ्रोणैतिश्रवं इच्छमाना। पुण्य<u>ङ</u>् श्लोकं यजमानाय कृण्वती॥२२॥

अष्टौ देवा वस्तवः सोम्यासः। चर्तस्रो देवीरजराः श्रविष्ठाः। ते यज्ञं पान्तु रजसः प्रस्तात्। संवत्सरीणममृतर्ड् स्वस्ति। यज्ञं नः पान्तु वस्तवः पुरस्तात्। दक्षिणतौऽभियन्तु श्रविष्ठाः। पुण्यं नक्षेत्रमभि संविद्याम। मा नो अर्रातिरुघशुरसाऽगन्न्॥२३॥

क्षत्रस्य राजा वर्रणोऽधिराजः। नक्षत्राणाः श्वातिमेष्वग्वसिष्ठः। तौ देवेभ्यः कृणुतो दीर्घमायुः। श्वातः सहस्रा भेष्वजानि धत्तः। यज्ञं नो राजा वर्रुण उपयातु। तन्नो विश्वे अभि संयन्तु देवाः। तन्नो नक्षत्रः श्वातिमेषग्जुषाणम्। दीर्घमायुः प्रतिरद्भेषजानि॥२४॥

अज एकंपादुदंगात्पुरस्तात्। विश्वां भूतानि प्रति मोदंमानः। तस्यं देवाः प्रस्तवं यंन्ति सर्वे। प्रोष्टपदासों अमृतंस्य गोपाः। विभ्राजमानः समिधा न उयः। आऽन्तरिक्षमरुहद्गन्द्याम्। तश्स्यं देवमुजमेकंपादम्। प्रोष्टपदासो अनुयन्ति सर्वे॥२५॥ अहिर्बुध्नियः प्रथमा न एति। श्रेष्ठों देवानांमुत मानुषाणाम्। तं

ब्रौह्मणाः सोम्पाः सोम्यासंः। प्रोष्ट्रपदासो अभिरंक्षन्ति सर्वै।

चत्वार एकमि कमें देवाः। प्रोष्टपदा स इति यान् वदिन्ति। ते बुिधयं परिषद्य एतुवन्तः। अहि रक्षिन्ति नर्मसोपुसद्यं॥ २६॥ पूषा रेवत्यन्वेति पन्थाम्। पृष्टिपती पशुपा वार्जबस्त्यौ। इमानि ह्व्या प्रयंता जुषाणा। सुगैर्नो यानुरुपंयातां युज्ञम्। क्षुद्रान् पुराून् रंक्षतु रेवती नः। गावो नो अश्वार् अन्वेतु पूषा। अन्नर् रक्षन्तौ बहुधा विरूपम्। वाजर्ं सनुतां यर्जमानाय यज्ञम्॥२७॥ तद्श्विनविश्वयुजोपयाताम्। शुभुङ्गिमष्ठौ सुयमेभिरश्वैः। स्वं नक्षंत्र हविषा यर्जन्तौ। मध्वासम्पृक्तौ यर्जुषा समक्तौ। यौ देवानां भिषजौ हव्यवाहो। विश्वस्य दूतावुमृतस्य गोपौ। तौ नक्षत्रं जुजुषाणोपंयाताम्। नमोऽश्विभ्यां कृणुमोऽश्वयुग्भ्यांम्॥२८॥ अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। तद्यमो राजा भगवान् विचेष्टाम्। लोकस्य राजां महतो महान् हि। सुगं नः पन्थामभयं कृणोतु। यस्मिन्नक्षेत्रे यम एति राजा। यस्मिन्नेनमभ्यषिश्चन्त देवाः। तर्दस्य चित्र हविषां यजाम। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु॥२९॥ निवेशनी सङ्गर्मनी वसूनां विश्वा रूपाणि वसून्यावेशयन्ती। सहस्रपोष सुभगा रर्गणा सा न आगन्वचैसा संविदाना॥ यत्ते देवा अद्धर्भागधेयममावास्ये संवसन्तो महित्वा। सा नौ युइं पिपृहि विश्ववारे र्यिं नौ धेहि सुभगे सुवीरम्॥३०॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ गणपत्यथर्वशीर्षोपनिषत्॥

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भद्रं पंत्रयेमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैस्तुष्टुवाः संस्तुन्भिः। व्यशेम देविहतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रौ वृद्धश्रवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यौ अरिष्टनेभिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

ॐ नर्मस्ते गणपतये। त्वमेव प्रत्यक्षं तत्त्वेमिस। त्वमेव केवछं कर्तांऽसि। त्वमेव केवछं धर्तांऽसि। त्वमेव केवछं हर्तांऽसि। त्वमेव सर्वं खिल्वदं ब्रह्मासि। त्वं साक्षादात्मांऽसि नित्यम्॥१॥

ऋतं विचा। सत्यं विचा॥२॥

अवं त्वं माम्। अवं वक्तारम्। अवं श्रोतारम्। अवं दातारम्। अवं धातारम्। अवानूचानमंव शिष्यम्। अवं पश्चात्तात्। अवं पुरस्तात्। अवौत्तरात्तात्। अवं दक्षिणात्तात्। अवं चोर्ध्वात्तात्। अवाधरात्तात्। सर्वतो मां पाहि पाहि समन्तात्॥३॥

त्वं वाङ्मयस्त्वं चिन्मयः। त्वमानन्दमयस्त्वं ब्रह्ममयः। त्वं सिचदानन्दाद्वितीयोऽसि। त्वं प्रत्यक्षं ब्रह्मसि। त्वं ज्ञानमयो विज्ञानमयोऽसि॥४॥

सर्वं जगदिदं त्वत्त्वौ जायते। सर्वं जगदिदं त्वत्त्वीस्तिष्ठति। सर्वं जगदिदं त्विय लयमेष्यति। सर्वं जगदिदं त्वियं प्रत्येति। त्वं भूमिरापोऽनलोऽनिलो नुभः। त्वं चत्वारि वाक्परिमित्तां पदानि॥५॥

त्वं गुणत्रंयातीतः। त्वम् अवस्थात्रंयातीतः। त्वं देहत्रंयातीतः। त्वं कालत्रंयातीतः। त्वं मूलाधारिश्यतौऽिस नित्यम्। त्वं शक्तित्रंयात्मकः। त्वां योगिनो ध्यायन्ति नित्यम्। त्वं ब्रह्मा त्वं विष्णुस्त्वं रुद्रस्त्वमिन्द्रस्त्वमिन्नस्त्वं वायुस्त्वं सूर्यस्त्वं चन्द्रमास्त्वं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम्॥६॥

गुणादिं पूर्वमुचार्य वर्णादिं तदनन्तरम्। अनुस्वारः परतरः। अधैन्दुलसितम्। तारेण ऋद्धम्। एतत्तव मनुस्वरूपम्। गकारः

पूर्वरूपम्। अकारो मध्यमरूपम्। अनुस्वारश्चांन्त्यरूपम्। बिन्दुरुत्तररूपम्। नादः सन्धानम्। सश्हिता सुन्धिः। सेषा गणेशिविद्या। गणेक ऋषिः। निचृद्गायंत्रीच्छन्दः। श्रीमहागणपतिदेवता। ॐ गं गणपतये नमः॥७॥

प्कद्नतायं विदाहें वक्रतुण्डायं धीमहि।
तन्नों दन्ती प्रचोदयात्॥८॥

प्कद्नतं चंतुर्हस्तं पाशमंङ्कश्यधारिणम्।
रदं च वर्रदं हस्तैर्बिभ्राणं मूषकथ्वजम्॥
रक्तं लम्बोदंरं शूर्पकर्णकं रक्तवाससम्।
रक्तगन्धानुलिप्ताङ्गं रक्तपुष्पैः सुपूजितम्॥
भक्तानुकम्पिनं देवं जगत्कारणमच्युतम्।
आविर्भूतं चं सृष्ट्यादौ प्रकृतेः पुरुषात्परम्।
एवं ध्यायितं यो नित्यं स् योगी यौगिनां वर्रः॥९॥

नमो व्रातपतये नमो गणपतये नमः प्रमथपतये नमस्ते अस्तु लम्बोदरायैकदन्ताय विघ्नविनाशिने शिवसुताय श्रीवरदमूर्तये नमो नमः॥१०॥

एतदथर्वशीर्षं योऽधीते। स ब्रह्मभूयायं कल्पते। स सर्वविद्वेनं बाध्यते। स सर्वतः सुखंमेधते। स पञ्चमहापापात् प्रमुच्यते। सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाश्चयति। प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाश्चयति। सायं प्रातः प्रयुज्जानो अपापो भ्वति। सर्वत्राधीयानोऽपविद्वो भवति। धर्मार्थकाममोक्षं चं विन्द्ति। इदमथर्वशीर्षमशिष्यायं न देयम्। यो यदि मोहाद्दास्यति स पापीयान् भ्वति। सहस्रावर्तनाद्यं यं काममधीते तं तमनेनं साधयेत्॥११॥

अनेन गणपितमिभिषिञ्चिति स वाग्मी भवति। चतुर्थ्यामनश्नन् जपित स विद्यावान् भवति। इत्यथवीणवाक्यम्। ब्रह्माद्याचरणं विद्यान्न बिभेति कद्यांचनेति॥१२॥

यो दूर्वाङ्करैर्यजित स वैश्रवणोपमो भ्वति। यो लाजैर्यजित स यशौवान् भ्वति। स मेधावान् भ्वति। यो मोदकसहस्रेण यजित स वाञ्छितफलमेवाप्नोति। यः साज्यसमिद्भिर्यजित स सर्वं लभते स सर्वं लभते॥१३॥ अष्टौ ब्राह्मणान् सम्यग्याहियत्वा। सूर्यवर्चस्वी भवति। सूर्ययहे महानद्यां प्रतिमासिन्नधौ वा जस्वा सिद्धमन्त्रौ भवति। महाविद्यात् प्रमुच्यते। महादोषात् प्रमुच्यते। महापापात् प्रमुच्यते। महाप्रत्यवायात् प्रमुच्यते। स सर्वविद्भवति स सर्वविद्भवति। य एवं वेद। इत्युपिनषित्॥१४॥

सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्विनाऽवधीतमस्तु मा विद्विषावहै॥

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥ अरुणप्रश्नः॥

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैस्तुष्टुवाश् संस्तुनूभिः। व्यशेम देवहितं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रौ वृद्धश्रेवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेभिः। स्वस्ति नो बृह्स्यतिर्दधातु॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

भद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजेत्राः। स्थिरेरङ्गैस्तुष्टुवाः संस्तुनूभिः। व्यशेम देवहितं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रेवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेभिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। आपमापामपः सर्वौः। अस्माद्स्मादितोऽमुतः॥१॥

अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्वस्करिष्ट्या। वाय्वश्वां रिमपत्यः। मरींच्यात्मानो अद्ग्रहः। देवीर्भवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। महसो महसः स्वः। देवीः पर्जन्यसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत॥२॥

अपाश्युंष्णिमपा रक्षः। अपाश्युंष्णिमपारघम्। अपाँघामपं

चावर्तिम्। अपदेवीरितो हित। वज्रं देवीरजीताङ्श्र। भुवंनं देवसूवरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषत। शिवा नः शन्तमा भवन्तु। दिव्या आप ओषधयः। सुमृडीका सर्रस्वति। मा ते व्योम सन्दिशी॥३॥

स्मृतिः प्रत्यक्षमितिह्यम्। अनुमानश्चतुष्ट्यम्। एतैरादित्यमण्डलम्। सर्वैरेव विधास्यते। सूर्यो मरीचिमादत्ते। सर्वस्माद्भवनाद्धि। तस्याः पाकविशेषेण। स्मृतं कालविशेषणम्। नदीव प्रभवात्काचित्। अक्षय्यात्स्यन्दते येथा॥४॥

तां नद्योऽभि समायन्ति। सोरुः सती न निर्वर्तते। एवं नानासंमुत्थानाः। कालाः संवत्सरङ् श्रिताः। अणुराश्च महराश्च। सर्वे समवयन्त्रितम्। सतैः सर्वैः समाविष्टः। ऊरुः सन्न निवर्तते। अधिसंवर्त्सरं विद्यात्। तदेवं लक्षणे॥५॥

अणुभिश्च महद्भिश्च। समार्रूढः प्रदृश्यते। संवत्सरः प्रत्यक्षेण। नाधिसंत्वः प्रदृश्यते। पुटरौ विक्किधः पिङ्गः। एतर्द्वरुणलक्षणम्। यत्रैतंदुपृदृश्यते। सुहस्रौ तत्रु नीयते। एक १ हि शिरो नाना मुखे।

कृत्स्नं तेद्दतुलक्षणम्॥६॥

उभयतः सप्तैन्द्रियाणि। जिल्पतं त्वेव दिह्यते। शुक्ककृष्णे संवंत्सर्स्य। दक्षिणवामयोः पार्श्वयोः। तस्यैषा भवंति। शुक्कं ते अन्यद्यंजतं ते अन्यत्। विषुरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भद्रा ते पूषिन्निह रातिर्स्त्विति। नात्र भवंनम्। न पूषा। न प्रावंः। नऽऽदित्यः संवत्सर एव प्रत्यक्षेण प्रियतमं विद्यात्। एतद्वै संवत्सरस्य प्रियतमः रूपम्। योऽस्य महानर्थ उत्पत्स्यमानो भवति। इदं पुण्यं कुरुष्वेति। तमाहर्रणं द्यात्॥७॥

साकुञ्जानारं सप्तर्थमाहुरेकजम्। षडुंद्यमा ऋषयो देवजा इति। तेषामिष्टानि विहितानि धामुद्याः। स्थात्रे रेजन्ते विकृतानि रूपुद्याः। को नुं मर्या अमिथितः। सखा सखायमब्रवीत्। जहांको अस्मदीषते। यस्तित्याजं सिख्विविद्र् सखायम्। न तस्यं वाच्यपि भागो अस्ति। यदीरं शृणोत्युलकरं शृणोति॥८॥

न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामिति। ऋतुर्ऋतुना नुद्यमानः।

विनेनादाभिधावः। षष्टिश्च त्रिश्चां वत्नाः। शुक्ककृष्णौ च षाष्टिकौ। सारागवस्त्रैर्जरदेक्षः। वसन्तो वसुभिः सह। संवत्सरस्य सवितुः। प्रैषकृत्प्रथमः स्मृतः। अमूनादयतेत्यन्यान्॥९॥

अम्ङ्श्चं परिरक्षतः। एता वाचः प्रयुज्यन्ते। यत्रैतंदुपृदृश्यंते। एतदेव विजानीयात्। प्रमाणं काळपर्यये। विशेषणं तुं वक्ष्यामः। ऋतूनां तिश्वबोधंत। शुक्कवासां रुद्रगणः। ग्रीष्मेणंऽऽवर्तते सह। निजहंन पृथिवी सर्वाम्॥१०॥

ज्योतिषाँऽप्रतिख्येनं सः। विश्वरूपाणि वासाश्सा। आदित्यानाँ निबोधित। संवत्सरीणं कर्मफलम्। वर्षाभिदेदताश् सह। अदुःखो दुःखचेक्षुरिव। तद्माऽऽपीत इव दृश्येते। श्लीतेनाँव्यर्थयन्निव। रुरुदंक्ष इव दृश्येते। ह्लाद्यते ज्वलंतश्चैव। श्लाम्यतिश्वास्य चक्षुषी। या व प्रजा भ्रेड्श्यन्ते। संवत्सरात्ता भ्रेड्श्यन्ते। याः प्रतितिष्ठन्ति। संवत्सरे ताः प्रतितिष्ठन्ति। वर्षाभ्यं इत्यर्थः॥११॥

अक्षिदुःखोर्त्थितस्यैव। विप्रसन्ने कुनीनिके। आङ्के चार्द्गणं नास्ति।

ऋभूणां तिन्नबोधित। कनकाभानि वासाश्सि। अहतानि निबोधत। अन्नमश्नीतं मृज्मीत। अहं वो जीवनप्रदः। एता वाचः प्रयुज्यन्ते। शरद्यत्रोपदृश्यते॥१२॥

अभिधून्वन्तोऽभिघ्नेन्त <u>इव। वातवेन्तो मुरुद्गेणाः। अमुतो</u> जेतुमिषुमुंखिम्व। सन्नद्धाः सह दृहरो ह। अपध्वस्तैर्वस्तिवंणैरिव। विशिखासः कपर्दिनः। अकुद्धस्य योत्स्यमानस्य। क्रुद्धस्येव लोहिनी। हेमतश्रक्षुषी विद्यात्। अक्ष्णयौः क्षिपणोरिव॥१३॥

दुर्भिक्षं देवेलोकेषु। मनूनामुद्वं गृहे। एता वाचः प्रवद्न्तीः। वैद्युतौ यान्ति शैशिरीः। ता अग्निः पर्वमना अन्वैक्षत। इह जीविकामपरिपश्यन्। तस्यैषा भवति। इहेह्वं स्वतपसः। मरुतः सूर्यत्वचः। शर्मे सुप्रथा आवृणे॥१४॥

·[8]

अतिताम्राणि वासार्श्स। अष्टिविजिशातिम्न च। विश्वे देवा विप्रहर्गन्ति। अग्निजिह्वा असश्चेत। नैव देवौ न मुर्त्यः। न राजा वैरुणो विभुः। नाग्निर्नेन्द्रो न पेवमानः। मातृक्कंचन विद्येते। दिव्यस्यैका धर्नुरार्किः। पृथिव्यामपेरा श्रिता॥१५॥ तस्येन्द्रो विम्निरूपेण। धनुज्यीमिछ्नितस्वयम्। तिद्निद्धधनुरित्यज्यम्। अभ्रवणिषु चक्षति। एतदेव शंयोर्बार्हस्यत्यस्य। एतद्वेद्वस्य धनुः। रुद्रस्यं त्वेव धनुरार्बिः। शिर् उत्पिपेष। स प्रवग्यीऽभवत्। तस्माद्यः सप्रवग्यीणं यज्ञेन यजते। रुद्रस्य स शिरः प्रतिद्धाति। नैनर् रुद्र आर्रुको भवति। य एवं वेद्॥१६॥

. .

अत्यूर्ध्वाक्षोऽतिरश्चात्। शिशिरः प्रदृश्यते। नैव रूपं ने वासार्श्वसा न चक्षुः प्रतिदृश्यते। अन्योन्यं तु ने हिङ्स्रातः। सतस्तिदेवलक्षणम्। लोहितोऽक्ष्णि शारशीर्ष्णिः। सूर्यस्यौद्यनं प्रति। त्वं करोषि न्यञ्जलिकाम्। त्वं करोषि निजानुकाम्॥१७॥

निजानुका मैं न्यञ्जलिका। अमी वाचमुपासंतामिति। तस्मै सर्व ऋतवों नमन्ते। मर्यादाकरत्वात्त्रपुरोधाम्। ब्राह्मणं आप्नोति। य एवं वेद। स खलु संवत्सर एतैः सेनानीभिः सह। इन्द्राय सर्वान्कामानभिवहति। स द्रप्सः। तस्यैषा भवति॥१८॥

अवंद्रप्सो अर्थशुमतीमतिष्ठत्। <u>इयानः कृष्णो द</u>शिमिः सहस्रैः। आवर्तिमन्द्रः शच्या धर्मन्तम्। उपस्रुहि तं नृमणामर्थद्रामिति। एतयैवेन्द्रः सलावृंक्या सह। असुरान् परिवृश्चित। पृथिव्यु॰शूमंती। तामुन्ववंस्थितः संवत्सरो दिवं च। नैवं विदुषाऽऽचायौन्तेवासिनौ। अन्योन्यस्मै दुद्याताम्। यो दुद्यित। भ्रश्यते स्वर्गाष्ट्रोकात्। इत्यृतुमण्डलानि। सूर्यमण्डलौन्याख्यायिकाः। अत ऊर्ध्वं सिर्नेर्वचनाः॥१९॥

आरोगो भ्राजः पटरंः पत्रङ्गः। स्वर्णरो ज्योतिषिमान् विभासः। ते अस्मै सर्वे दिवमातपिन्त। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। कश्यपोऽष्टमः। स महामेरुं न जहाति। तस्येषा भवति। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावत्। इन्द्रियावत्पुष्कुलं चित्रभानु। यस्मिन्त्सूर्या अपिताः सप्त साकम्॥२०॥

तिर्रुमन्ते। तान्त्सोमः कश्यपादिधिनिर्द्धमित। भ्रस्ताकर्मकृदिवैवम्। प्राणो जीवानीन्द्रियंजीवानि। सप्त शीर्षण्याः प्राणाः। सूर्या इंत्याचार्यः। अपश्यमहमेतान्त्सप्त सूर्यानिति। पञ्चकणी वात्स्यायनः। सप्तकणीश्च प्राक्षिः॥२१॥

आनुश्राविक एव नौ कश्यंप इति। उभौ वेद्यिते। न हि शेकुमिव महामेरुं गुन्तुम्। अपश्यमहमेत्सूर्यमण्डलं परिवर्तमानम्। गार्ग्यः प्राणत्रातः। गच्छन्त महामेरुम्। एकं चाजहतम्। भ्राजपटरपतंङ्गा निहने। तिष्ठन्नातपन्ति। तस्मादिह तिर्प्रतपाः॥२२॥

अमुत्रेतरे। तस्मदिहातिष्रितपाः। तेषिमेषा भवति। सप्त सूर्या दिवमनुप्रविष्टाः। तानन्वेति पृथिभिदिक्षिणावान्। ते अस्मै सर्वे घृतमितपुन्ति। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। सप्तर्त्विजः सूर्या इत्याचार्याः। तेषिमेषा भवति। सप्त दिशो नानिसूर्याः॥२३॥

स्प्त होतार ऋत्विजः। देवा आदित्यां ये स्प्ता। तेभिः सोमाभीरक्षण इति। तद्प्याम्नायः। दिग्भ्राज ऋतूंन् करोति। एतयेवावृता सहस्रसूर्यताया इति वैशम्पायनः। तस्येषा भवति। यद्यावं इन्द्र ते श्वतः श्वतं भूमीः। उतस्युः। नत्वां विज्ञन्त्सहस्रू सूर्यौः॥२४॥

अनु न जातमष्ट रोद्सी <u>इ</u>ति। नानालिङ्गत्वादृत्नां नानासूर्यृत्वम्। अष्टौ तु व्यवसिता <u>इ</u>ति। सूर्यमण्डलान्यष्टांत ऊर्ध्वम्। तेषामेषा भवति। चित्रं देवानामुद्दंगादनीकम्। चक्षुर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्चेति॥२५॥

७

केदमभ्रं निविशते। कायर् संवत्सरो मिथः। काहः केयं देव रात्री। क मासा ऋतवः श्रिताः। अर्द्धमासां मुह्तर्ताः। निमेषास्तुटिभिः सह। केमा आपो निविशन्ते। यदीतौ यान्ति सम्प्रति। काला अप्सु निविशन्ते। आपः सूर्ये समाहिताः॥ २६॥

अभ्राण्यपः प्रपद्यन्ते। विद्युत्सूर्ये समाहिता। अनवर्णे इमे भूमी। इयं चांऽसौ च रोदंसी। किङ्स्विद्त्रान्तरा भूतम्। येनेमे विधृते उभे। विष्णुनां विधृते भूमी। इति वंत्सस्य वेदंना। इर्रावती धेनुमती हि भूतम्। सूयवसिनी मनुषे दश्रस्यै॥२०॥

व्यष्टभ्राद्रोदंसी विष्णवेते। दाधर्थं पृथिवीम्भितौ मयूर्वैः। किं तिहष्णोविलमाहः। का दीप्तिः किं परायणम्। एकौ यद्धारयद्देवः। रेजती रोद्सी उभे। वाताहिष्णोबिलमाहः। अक्षराद्दीप्तिरुच्यते। त्रिपदाद्धारयद्देवः। यहिष्णोरेकमुत्तमम्॥२८॥

अग्नयौ वार्यवश्चैव। एतदंस्य पुरायणम्। पृच्छामि त्वा परं

मृत्युम्। अवमं मध्यमञ्चेतुम्। लोकं च पुण्येपापानाम्। एतत्पृंच्छामि सम्प्रीति। अमुमोहुः पेरं मृत्युम्। पवमोनं तु मध्येमम्। अग्निरेवार्वमो मृत्युः। चन्द्रमौश्चतुरुच्येते॥२९॥

अनाभोगाः परं मृत्युम्। पापाः संयन्ति सर्वदा। आभोगास्त्वेवं संयन्ति। यत्र पुण्यकृतो जनाः। ततौ मध्यममायन्ति। चतुमीग्नं च सम्प्रति। पृच्छामि त्वो पापकृतः। यत्र योतयते येमः। त्वं नस्तद्वह्मन् प्रबृहि। यदि वैत्थाऽसतो गृहान्॥३०॥

क्रश्यपद्धिताः सूर्याः। पापान्निर्घ्नित्तः सर्वदा। रोदस्योन्तिर्देशेषु। तत्र न्यस्यन्ते वास्तवैः। तेऽशरीराः प्रपद्यन्ते। यथाऽपुण्यस्य कर्मणः। अपाण्यपाद्वेशासः। तत्र तेऽयोनिजा जनाः। मृत्वा पुनर्मृत्युमापद्यन्ते। अद्यमानाः स्वकर्मीभः॥३१॥

आशातिकाः किर्मय इव। ततः पूयन्ते वास्वैः। अपैतं मृत्युं जयित। य एवं वेद्। स खल्वैवं विद्वाह्मणः। दीर्घश्रुत्तमो भविति। कश्यपस्यातिथिः सिद्धगमनः सिद्धागमनः। तस्यैषा भविति। आयस्मिन्त्सप्त वास्वाः। रोहिन्ति पूर्व्यो रुह्वः॥३२॥

ऋषिर्ह दीर्घश्रुत्तमः। इन्द्रस्य घर्मो अतिथिरिति। कश्यपः

पश्यंको भवति। यत्सर्वं परिपश्यतीति सौक्ष्म्यात्। अथाग्नेरष्टपुरुष्ट्यः। तस्यैषा भवति। अग्ने नयं सुपर्था राये अस्मान्। विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यंस्मर्ज्जुहुराणमेनः। भूयिष्ठन्ते नम उक्तिं विधेमेति॥३३॥

[2]

अग्निश्च जातेवेदाश्च। सहोजा अजिराप्रभुः। वैश्वानरो नेर्यापाश्च। पुङ्किराधाश्च सप्तमः। विसर्पेवाऽष्टमोऽग्नीनाम्। एतेऽष्टौ वसवः, क्षिता इति। यथर्त्वेवाग्नेरिचिर्वर्णविश्वोषाः। नीलार्चिश्च पीतकार्चिश्चेति। अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैकादशस्त्रीकृस्य। प्रभ्राजमाना व्यवदाताः॥३४॥

याश्च वासुंकिवैद्युताः। रजताः पर्रुषाः श्यामाः। किपला अतिलोहिताः। ऊर्ध्वा अवपंतन्ताश्च। वैद्युत इत्येकादश। नैनं वैद्युतो हिनुस्ति। य एवं वेद। स होवाच व्यासः पाराश्चर्यः। विद्युद्वधमेवाहं मृत्युमैच्छमिति। न त्वकामश् हन्ति॥३५॥

य एवं वेद। अथ गन्धर्वगणाः। स्वानुभ्राट्। अङ्घारिर्बम्भारिः। हस्तः सुहंस्तः। कृशानुर्विश्वावसुः। मूर्धन्वान्त्सूर्यवर्चाः। कृतिरित्येकादश गन्धर्वगणाः। देवाश्च महादेवाः। रश्मयश्च देवां

गरगिरः॥३६॥

नैनं गरौ हिन्सित। य एवं वेद। गौरी मिमाय सिल्लानि तक्षती। एकपदी द्विपदी सा चतुष्पदी। अष्टापदी नवपदी बभूवुषी। सहस्राक्षरा परमे व्योमन्निति। वाचौ विशेषणम्। अथ निगदंव्याख्याताः। ताननुक्रमिष्यामः। व्रराहवंः स्वतपसः॥३७॥

विद्युन्महिसो धूपयः। श्वापयो गृहमेधाश्चित्येते। ये चेमेऽशिमिवि-द्विषः। पर्जन्याः सप्त पृथिवीमभिवर्षन्ति। वृष्टिभिरिति। एतयैव विभक्तिविपरीताः। सप्तिभवां तैरुदीरिताः। अमूँ छोकान-भिवर्षन्ति। तेषामेषा भवति। समानमेतदुर्दकम्॥३८॥

उचैत्यंवचाहंभिः। भूमिं पर्जन्या जिन्वन्ति। दिवं जिन्वन्त्यग्नय इति। यदक्षरं भूतकृतम्। विश्वे देवा उपास्ति। महर्-षिमस्य गोप्तारम्। जमदंग्निमकुर्वत। जमदंग्निराप्यायते। छन्दोभिश्चतुरुत्तरेः। राज्ञः सोमस्य तृप्तासः॥३९॥

ब्रह्मणा वीर्यावता। शिवा नेः प्रदिशो दिशेः। तच्छं योरावृणीमहे। गातुं यज्ञाये। गातुं यज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषुजम्। शं नौ अस्तु द्विपदै। शं चतुंष्पदे। सोमपा (३) असोमपा (३) इति निगदंव्याख्याताः॥४०॥

<u></u>8]

सहस्रवृदियं भूमिः। परं व्योम सहस्रवृत्। अश्वनां भुज्यूनासत्या। विश्वस्यं जगतस्पती। जाया भूमिः पंतिर्व्योम। मिथुनेन्ता अतुर्येथुः। पुत्रो बृहस्पती रुद्रः। सरमां इति स्त्रीपुमम्। शुक्रं वामन्यर्यजतं वामन्यत्। विषुरूपे अर्हनी द्यौरिव स्थः॥४१॥

विश्वा हि माया अवंथः स्वधावन्तौ। भद्रा वां पूषणाविह रातिरेस्तु। वासात्यौ चित्रौ जर्गतो निधानौ। द्यावांभूमी चरथः सूर् सखायौ। ताविश्वनां रासभाश्वा हवं मे। शुभस्पती आगतर् सूर्ययां सह। त्युयौह भुज्युमेश्विनोद्मेघे। र्यिं न कश्चिन्ममृवां (२) अवाहाः। तमूहथुनौभिरात्मन्वतीभिः। अन्तरिक्षप्रुद्धिरपोदकाभिः॥४२॥

तिस्रः, क्षपस्त्रिरहातिवर्जिद्धः। नासत्या भुज्युमूहथुः पतङ्गैः। समुद्रस्य धन्वन्तार्द्वस्य पारे। त्रिभीरथैः द्यातपद्धिः षडेश्वैः। सवितारं वितन्वन्तम्। अनुबंधाति शाम्बरः। आपपूर्षम्बरश्चैव। स्वितरिपुसौऽभवत्। त्यः सुतृप्तं विदित्वैव। बहुसौम गिरं वेशी॥४३॥

अन्वेति तुग्रो विकियान्तम्। आयसूयान्त्सोमंतृप्सुषु। स सङ्ग्रामस्तमौद्योऽत्योतः। वाचो गाः पिपाति तत्। स तद्गोभिः स्तवाऽत्येत्यन्ये। रक्षसानिन्वताश्चे ये। अन्वेति परिवृत्याऽस्तः। एवमेतौ स्थौ अश्विना। ते एते द्युः पृथिव्योः। अहंरहुर्गभै द्धाथे॥४४॥

तयोरेतौ वृत्सावहोरात्रे। पृथिव्या अर्हः। दिवो रात्रिः। ता अविसृष्टौ। दम्पती एव भवतः। तयोरेतौ वृत्सौ। अग्निश्चादित्यश्च। रात्रेर्वत्सः। श्वेत आदित्यः। अह्वोऽग्निः॥४५॥

ताम्रो अंरुणः। ता अविसृष्टौ। दम्पंती एव भवतः। तयोर्तेतौ वृत्सौ। वृत्रश्चं वैद्युतश्चं। अग्नेर्वृत्रः। वैद्युतं आद्वित्यस्यं। ता अविसृष्टौ। दम्पंती एव भवतः। तयोर्तेतौ वृत्सौ॥४६॥

उष्मा चं नीहारश्चं। वृत्रस्योष्मा। वैद्युतस्यं नीहारः। तौ तावेव प्रतिपद्येते। सेयः रात्रीं गुर्भिणीं पुत्रेण संवंसित। तस्या वा पुतदुल्बणम्। यद्रात्रौं रुक्मयः। यथा गोर्गिर्भण्यां उल्बणम्॥ एवमेतस्यां उल्बणम्। प्रजियष्णुः प्रजया च पशुभिश्च भवति। य एवं वेद। एतमुद्यन्तमिपयेन्तं चेति। आदित्यः पुण्येस्य वृत्सः। अथ पवित्राङ्गिरसः॥४७॥

·[{66]

प्वित्रंवन्तः परिवाजमासंते। पितेषां प्रत्नो अभिरंक्षति व्रतम्। महः संमुद्रं वर्रुणस्तिरोदंधे। धीरां इच्छेकुर्धरुणेष्वारभम्। प्वित्रं ते विततं ब्रह्मणस्पते। प्रभुगात्राणि पर्येषिविश्वतः। अतप्ततनूर्न तदामो अश्वते। श्रृतास् इद्वहंन्तुस्तत्समाद्यतः। ब्रह्मा देवानाम्। अस्तः सद्ये तत्र्षुः॥४८॥

ऋषयः सप्तात्रिश्च यत्। सर्वेऽत्रयो अंगस्त्यश्च। नक्षेत्रैः शङ्कृतोऽवसन्। अर्थ सवितुः श्यावाश्वस्याऽवर्तिकामस्य। अमी य ऋक्षा निर्हितास उचा। नक्तं द्देश्वे कुर्हचिद्दिवेयुः। अद्ब्यानि वर्रुणस्य व्रतानि। विचाकशंचन्द्रमा नक्षेत्रमेति। तत्संवितुर्वरेण्यं। भर्गो देवस्यं धीमहि॥४९॥

धियो यो नंः प्रचोदयात्। तत्संवितुवृणीमहे। वयं देवस्य भोजनम्। श्रेष्ठर्ं सर्वधातमम्। तुरं भगस्य धीमहि। अपागूहत सविता तृभीन्। सर्वान्दिवो अन्धिसः। नक्तं तान्धिभवन्दृशे। अस्थ्यस्था सम्भविष्यामः। नामु नामुव नाम मै॥५०॥

नपुश्संकं पुमाङ्ख्यस्मि। स्थावंरोऽस्म्यथ् जङ्गमः। यजेऽयिध्य यष्टाहे चं। मयां भूतान्यंयक्षत। पुरावो ममं भूतानि। अनूबन्ध्योऽस्म्यंहं विभुः। स्त्रियंः सतीः। ता उमे पुश्स आहुः। प्रयंदक्षण्वान्नविचेतद्न्धः। कृविर्यः पुत्रः स इमा चिकेत॥५१॥

यस्ता विजानात्संवितुः पितासंत्। अन्धो मणिमंविन्दत्। तमनङ्गुलिरावयत्। अग्रीवः प्रत्यमुञ्चत्। तमजिह्वा असश्चंत। ऊर्ध्वमूलमंवाक्छाखम्। वृक्षं यौ वेद् सम्प्रति। न स जातु जनः श्रद्दध्यात्। मृत्युमी मार्यादितिः। हसितश् रुदितं गीतम्॥५२॥

वीणापणवलासितम्। मृतं जीवं चं यत्किञ्चित्। अङ्गानि स्नेव विद्धिं तत्। अतृष्युङ्स्तृष्यंध्यायत्। अस्माजाता में मिथू चरन्न्। पुत्रो निर्ऋत्यां वैदेहः। अचेतां यश्च चेतनः। स तं मणिमविन्दत्। सोऽनङ्गुलिरावयत्। सोऽग्रीवः प्रत्यंमुञ्चत्॥५३॥

सोऽजिह्वो असश्चेत। नैतमृषिं विदित्वा नगरं प्रविशेत्। यदि प्रविशेत्। मिथौ चरित्वा प्रविशेत्। तत्सम्भवस्य व्रतम्। आतमिश्ने रथं तिष्ठ। एकाश्वमेकयोजनम्। एकचक्रमेकधुरम्। वातभ्रोजिगतिं विभो। न रिष्यति न व्यथते॥५४॥

नास्याक्षो यातु सर्जात। यच्छ्वेतांन् रोहिताङ्श्वाग्नेः। रथे यंक्तवाऽधितिष्ठति। एकया च दशिभश्चं स्वभूते। द्वाभ्यामिष्टये विश्वेशत्या च। तिसृभिश्च वहसे त्रिश्वेशता च। नियुद्धिर्वायविह तां विमुञ्ज॥५५॥

-[११]

आतंनुष्व प्रतंनुष्व। उद्धमऽऽधंम सन्धंम। आदित्ये चन्द्रंवर्णानाम्। गर्भमाधेहि यः पुमान्। इतः सिक्तः सूर्यगतम्। चन्द्रमंसे रसं कृधि। वारादं जनयायेऽप्तिम्। य एको रुद्व उच्यंते। असङ्ख्याताः सहस्राणि। स्मर्यते न च दश्यंते॥५६॥

एवमेतं निबोधत। आमन्द्रैरिन्द्र हरिभिः। याहि मयूर्ररोमभिः। मा त्वा केचिन्नियेमुरिन्न पाशिनः। दुधन्वेव ता ईहि। मा मन्द्रैरिन्द्र हरिभिः। यामि मयूर्ररोमभिः। मा मा केचिन्नियेमुरिन्न पाशिनः। निधन्वेव तां (२) ईमि। अणुभिश्च महद्भिश्च॥५७॥

निघृष्वैरस्मायुतैः। कालैर्हरित्वमापृन्नैः। इन्द्रऽऽयहि सहस्र्ययुक्। अग्निर्विभ्राष्टिवसनः। वायुः श्वेतिसकद्भुकः। संवत्सरो विषूवर्णैः। नित्यास्तेऽनुचेरास्तव। सुब्रह्मण्योश सुब्रह्मण्योश सुब्रह्मण्योम्। इन्द्रऽऽगच्छ हरिव आगच्छ मेधातिथेः। मेष वृषणश्वेस्य मेने॥५८॥

गौरावस्किन्दिन्नहल्ययि जार। कौशिकब्राह्मण गौतमेब्रुवाण। अरुणाश्वां इहार्गताः। वस्तवः पृथिविक्षितः। अष्टौदिग्वासंसोऽग्नयः। अग्निश्च जातवेदाश्चेत्येते। ताम्राश्वांस्ताम्ररथाः। ताम्रवणांस्तथा-ऽसिताः। दण्डहस्ताः खाद्ग्दतः। इतो रुद्राः प्राङ्गताः॥५९॥

उक्त स्थानं प्रमाणं चं पुर इत। बृह्स्पतिश्च सिवता चं। विश्वक्रिपेरिहऽऽगंताम्। रथेनोद्कवर्त्मना। अप्सुषां इति तद्वयोः। उक्तो वेषो वासाक्ष्मि च। कालावयवानामितः प्रतीज्या। वासात्यां इत्यश्विनोः। कोऽन्तरिक्षे शब्दं करोतीति। वासिष्टो रौहिणो मीमार्स्सां चुके। तस्येषा भवति। वाश्रेवं विद्युदिति। ब्रह्मण उद्रेणमसि। ब्रह्मण उद्वीरणमसि। ब्रह्मण आस्तरेणमसि। ब्रह्मण उपस्तरेणमसि॥६०॥

-[१२]

[अपकामत गर्भिण्यः]

अष्टयौनीम्ष्टपुत्राम्। अष्टपितीम्मां महीम्। अहं वेद् न मे मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयौन्युष्टपुत्रम्। अष्टपिद्दम्नतिरक्षम्। अहं वेद् न मे मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयौनीम्ष्टपुत्राम्। अष्टपितीम्मां दिवम्॥६१॥

अहं वेद न में मृत्युः। न चामृत्युरघाऽऽहरत्। सुत्रामाणं महीमू षु। अदितिचौरिदितिर्न्तिरिक्षम्। अदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वे देवा अदितिः पञ्चजनाः। अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्। अष्टौ पुत्रासो अदितेः। ये जातास्तुन्वः परि। देवां (२) उपप्रैत्सप्तभिः॥६२॥

प्रा मार्ताण्डमास्यंत्। सप्तिभिः पुत्रैरिदितिः। उपप्रैत्पूर्वी युगम्। प्रजाये मृत्यवे तंत्। प्रा मार्ताण्डमाभरदिति। ताननुक्रमिष्यामः। मित्रश्च वर्रुणश्च। धाता चार्यमा चं। अश्रशश्च भगश्च। इन्द्रश्च विवस्वाईश्चेत्येते। हिर्ण्यगुर्भो हुर्सः श्चेचिषत्। ब्रह्मजज्ञानं तदित्पदमिति। गुर्भः प्राजापत्यः। अथु पुर्रुषः सप्त पुर्रुषः॥६३॥

[यथास्थानं गर्भिण्यः]

-[१३]

योऽसौ तपत्रुदेति। स सर्वेषां भूतानां प्राणानादायोदेति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममें प्राणानादायोदेगाः। असौ यौऽस्तमेति। स सर्वेषां भूतानां प्राणानादायाऽस्तमेति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममें प्राणानादायाऽस्तंङ्गाः। असौ य आपूर्यति। स सर्वेषां भूतानां प्राणेरापूर्यति॥६४॥

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा मर्म प्राणेरापूरिष्ठाः। असौ योऽपक्षीयिति। स सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंक्षीयति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा मर्म प्राणेरपंक्षेष्ठाः। अमूनि नक्षंत्राणि। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पन्ति चोत्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा मर्म प्राणेरपंप्रसृपत् मोत्स्पत्॥६५॥

इमे मासाश्चार्धमासाश्च। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पन्ति

चोत्संपिन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृपत् मोत्संपत। इम ऋतवः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसपिन्ति चोत्संपिन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रस्पत् मोत्संपत। अयश संवत्सरः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसपिति चोत्संपिति च॥६६॥

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृप् मोत्सृप। इदमहंः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पति चोत्संपति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृप् मोत्सृप। इयश्रात्रिः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसपिति चोत्संपिति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृप् मोत्सृप। ॐ भूभुंवः स्वंः। एतद्वो मिथुनं मा नो मिथुनश्रीद्वम्॥६७॥

-[88]

अथऽऽदित्यस्याष्टपुंरुषस्य। वसूनामादित्यानाङ् स्थाने स्वतेजिसा भानि। रुद्राणामादित्यानाङ् स्थाने स्वतेजिसा भानि। आदित्यानामादित्यानाङ् स्थाने स्वतेजिसा भानि। सतार्थं सत्यानाम्। आदित्यानाङ् स्थाने स्वतेजिसा भानि। अभिधून्वतामिभिन्नताम्। वातवंतां मुरुताम्। आदित्यानाङ् स्थाने स्वतेजंसा भानि। ऋभूणामादित्यानाङ् स्थाने स्वतेजंसा भानि। विश्वेषां देवानाम्। आदित्यानाङ् स्थाने स्वतेजंसा भानि। संवत्सर्रस्य स्वितुः। आदित्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वः। रइमयो वो मिथुनं मा नो मिथुनः रीद्वम्॥६८॥

आरोगस्य स्थाने स्वतेर्जसा भानि। भ्राजस्य स्थाने स्वतेर्जसा भानि। पटरस्य स्थाने स्वतेर्जसा भानि। पतङ्गस्य स्थाने स्वतेर्जसा भानि। स्वर्णरस्य स्थाने स्वतेर्जसा भानि। ज्योतिषीमतस्य स्थाने स्वतेर्जसा भानि। विभासस्य स्थाने स्वतेर्जसा भानि। कश्यपस्य स्थाने स्वतेर्जसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वः। आपो वो मिथुनं मा नो मिथुन १ रीद्वम्॥६९॥

-[१६]

अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैकादशंस्त्रीक्स्य। प्रभ्राजमानानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजसा भानि। व्यवदातानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजसा भानि। वासुकिवैद्युतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजसा भानि। रजतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजसा भानि। परुषाणाः

[१७]

रुद्राणाः स्थाने स्वतेजेसा भानि। इयामानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजेसा भानि। कपिलानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजेसा भानि। अतिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजेसा भानि। ऊर्ध्वानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजेसा भानि॥७०॥

अवपतन्ताना र रुद्राणा इस्थाने स्वते जसा भानि। वैद्युताना र रुद्राणाः स्थाने स्वतेजेसा भानि। प्रभ्राजमानीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजसा भानि। व्यवदातीना रुद्राणीना स्थाने स्वतेजसा भानि। वासुकिवैद्युतीना रुद्राणीना इस्थाने स्वतेजसा भानि। रजतानाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजसा भानि। परुषाणाः -रुद्राणीनाङ् स्थाने स्वतेजंसा भानि। इयामानाश रुद्राणीनाङ् स्थाने स्वतेजेसा भानि। कपिलानाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजेसा भानि। अतिलोहितीना रुद्राणीना इस्थाने स्वतेजेसा भानि। _ ऊर्ध्वानाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जसा भानि। अवपतन्तीनाः रुद्राणीनाङ् स्थाने स्वतेजंसा भानि। वैद्युतीनाः रुद्राणीनाङ् स्थाने स्वतेजेसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वः। रूपाणि वो मिथुनं मा नो मिथुन रीद्वम्॥ ७१॥

अथाग्नेरष्टपुरुष्ट्य। अग्नेः पूर्विद्श्यस्य स्थाने स्वतेजेसा भानि। जातवेदस उपिद्श्यस्य स्थाने स्वतेजेसा भानि। सहोजसो दक्षिणिद्श्यस्य स्थाने स्वतेजेसा भानि। अजिराप्रभव उपिद्श्यस्य स्थाने स्वतेजेसा भानि। वैश्वानरस्यापरिद्श्यस्य स्थाने स्वतेजेसा भानि। नर्यापस उपिद्श्यस्य स्थाने स्वतेजेसा भानि। पिङ्कराधस उदिग्द्श्यस्य स्थाने स्वतेजेसा भानि। विसर्पिण उपिद्श्यस्य स्थाने स्वतेजेसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वः। दिशो वो मिथुनं मा नो मिथुन १ रीड्वम्॥७२॥

दक्षिणपूर्वस्यां दिशि विसंपीं नुरकः। तस्मान्नः परिपाहि। दक्षिणापरस्यां दिश्यविसंपीं नुरकः। तस्मान्नः परिपाहि। उत्तरपूर्वस्यां दिशि विषादी नुरकः। तस्मान्नः परिपाहि। उत्तरापरस्यां दिश्यविषादी नुरकः। तस्मान्नः परिपाहि। आ यस्मिन्त्सप्त वासवा इन्द्रियाणि शतकर्तवित्येते॥७३॥

इन्द्रघोषा वो वसुंभिः पुरस्तादुपंदधताम्। मनौजवसो वः पितृभिर्दक्षिणत उपंदधताम्। प्रचेता वो रुद्रैः पृश्चादुपंदधताम्। विश्वकर्मा व आदित्यैरुत्तर्त उपद्धताम्। त्वष्टां वो रूपेरुपरिष्टादुपंद्धताम्। संज्ञानं वः पश्चादिति। आदित्यः सर्वोऽिमः पृथिव्याम्। वायुर्न्तिरक्षे। सूर्यो दिवि। चन्द्रमा दिक्षु। नक्षेत्राणि स्वलोके। एवा ह्येव। एवा ह्येमे। एवा हि वायो। एवा हीन्द्र। एवा हि पूषन्। एवा हि देवाः॥७४॥
————[२०]

आपंमापाम्पः सर्वौः। अस्माद्स्माद्तितोऽमुतः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्क्ररिद्धिया। वाय्वश्वां रिश्मपत्यः। मरीच्यात्मानो अद्भेहः। देवीर्भवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। महसो महसः स्वः॥७५॥

देवीः पर्जन्यसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। अपाश्चिष्णम्पा रक्षः। अपाश्चिष्णम्पारघम्। अपाष्ट्रामपंचावर्तिम्। अपदेवीरितो हित। वज्रं देवीरजीताङ्श्च। भुवंनं देवसूर्वरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत॥७६॥

भद्रं कर्णेभिः श्रणुयामं देवाः। भद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजेत्राः। स्थिरेरङ्गैस्तुष्टुवाः संस्तुनूभिः। व्यशेम देविहतां यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रौ वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्द्धातु। केतवो अर्रुणासश्च। ऋषयो वात्तरञ्चनाः। प्रतिष्ठाः श्वातधां हि। समाहितासो सहस्रधायसम्। श्विवा नः शन्तमा भवन्तु। दिव्या आपु ओष्धयः। सुमृडीका सर्रस्वति। मा ते व्योम सन्हिश्चा। ७७॥

योऽपां पुष्पं वेदं। पुष्पंवान् प्रजावान् पशुमान् भवति। चन्द्रमा वा अपां पुष्पम्। पुष्पंवान् प्रजावान् पशुमान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतेनं वेदं। आयतेनवान् भवति। अग्निर्वा अपामायतेनम्। आयतेनवान् भवति। यौऽग्नेरायतनं वेदं॥७८॥

आयतेनवान् भवति। आपो वा अग्नेरायतेनम्। आयतेनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतेनं वेदं। आयतेनवान् भवति। वायुर्वा अपामायतेनम्। आयतेनवान् भवति। यो वायोरायतेनं वेदं। आयतेनवान् भवति॥७९॥

आपो वै वायोरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं

वेदं। योऽपामायतेनं वेदं। आयतेनवान् भवति। असौ वै तपेन्नपामायतेनम्। आयतेनवान् भवति। योऽमुष्य तपेत आयतेनं वेदं। आयतेनवान् भवति। आपो वा अमुष्य तपेत आयतेनम्॥८०॥

आयतेनवान् भवति। य एवं वेदे। यौऽपामायतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। चन्द्रमा वा अपामायतेनम्। आयतेनवान् भवति। यश्चन्द्रमेस आयतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। आपो वै चन्द्रमेस आयतेनम्। आयतेनवान् भवति॥८१॥

य एवं वेदं। यौऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। नक्षंत्राणि वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो नक्षंत्राणामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै नक्षंत्राणामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं॥८२॥

योऽपामायतेनं वेदं। आयतेनवान् भवति। पूर्जन्यो वा अपामायतेनम्। आयतेनवान् भवति। यः पूर्जन्यस्यऽऽयतेनं वेदं। आयतेनवान् भवति। आपो वै पूर्जन्यस्यऽऽयतेनम्। आयतेनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतेनं वेदं॥८३॥ आयतेनवान् भवति। संवृत्सरो वा अपामायतेनम्। आयतेनवान् भवति। यः संवृत्सरस्यऽऽयतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। आपो वे संवृत्सरस्यऽऽयतेनम्। आयतेनवान् भवति। य एवं वेदे। यौऽप्सु नावं प्रतिष्ठितां वेदे। प्रत्येव तिष्ठति॥८४॥

इमे वै लोका अप्सु प्रतिष्ठिताः। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। अपाश् रस्ममुद्रंयश्सन्न्। सूर्ये शुक्रश् समार्भृतम्। अपाश् रसंस्य यो रसंः। तं वो गृह्णाम्युत्तमिति। इमे वे लोका अपाश् रसंः। तेऽमुष्मिन्नादित्ये समार्भृताः। जानुद्व्रीमुत्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरियत्वा गुल्फद्व्रम्॥८५॥

पुष्करपणैः पुष्करदण्डैः पुष्करैश्चं सङ्स्तीर्य। तस्मिन्विह् । अग्निः प्रणीयौपसमाधायं। ब्रह्मवादिनौ वदन्ति। कस्मौत्प्रणीते-ऽयम् प्रिश्चीयतै। साप्रणीतेऽयम्प्सु ह्ययं चीयतै। असौ भुवनेप्यनहिताग्निरेताः। तम्भितं एता अबीष्टंका उपद्धाति। अग्निहोत्रे देर्शपूर्णमासयौः। पृशुबन्धे चतुर्मास्येषु॥८६॥

अथौ आहुः। सर्वेषु यज्ञकृतुष्विति। एतर्द्ध स्म वा आहुः

शण्डिलाः। कम्प्रिं चिनुते। सित्रियम्प्रिं चिन्वानः। संवत्सरं प्रत्यक्षेण। कम्प्रिं चिनुते। सावित्रम्प्रिं चिन्वानः। अमुमदित्यं प्रत्यक्षेण। कम्प्रिं चिनुते॥८७॥

नाचिकेतम् सिं चिन्वानः। प्राणान्यत्यक्षेण। कम् सिं चिनुते। चातुर्होत्रियम् सिं चिन्वानः। ब्रह्मं प्रत्यक्षेण। कम् सिं चिनुते। वैश्वसृजम् सिं चिन्वानः। शरीरं प्रत्यक्षेण। कम् सिं चिनुते। उपानुवाक्यमाशुम् सिं चिन्वानः॥८८॥

इमाँ ह्वोकान्य्रत्यक्षेण। कम्प्रिं चिनुते। इमम्रीरुणकेतुकम्प्रिं चिन्वान इति। य एवासौ। इतश्चाऽमृतश्चाऽव्यतीपाती। तमिति। यौऽग्नेमिथूया वेदे। मिथुनवान्भवति। आपो वा अग्नेमिथूयाः। मिथुनवान्भवति। य एवं वेदे॥८९॥

-[२२]

आपो वा इदमासन्त्सिल्लमेव। स प्रजापितिरेकः पुष्करपणें सम्भवत्। तस्यान्तुर्मनिस कामः समवर्तत। इदश् सृजेयमिति। तस्माद्यत्पुरुषो मनसाऽभिगच्छिति। तद्घाचा वदित। तत्कर्मणा करोति। तदेषाऽभ्यनूक्ता। कामस्तद्ये समवर्त्तताधि। मनसो रेतः प्रथमं यदासीत्॥९०॥

सतो बन्धुमसिति निरिविन्दन्न। हृदि प्रतीष्यां क्वयो मनीषेति। उपैनन्तदुपेनमित। यत्कामो भविति। य एवं वेदे। स तपौऽतप्यत। स तपस्तिह्वा। शरीरमधूनुत। तस्य यन्मा श्समासीत्। ततौऽरुणाः केतवो वातंरशना ऋषय उद्तिष्ठन्न्॥९१॥

ये नर्खाः। ते वैखानुसाः। ये वालाः। ते वलिखिल्याः। यो रसः। सौऽपाम्। अन्तर्तः कूर्मं भूतश् सपैन्तम्। तमेब्रवीत्। मम् वैत्वङ्माश्सा। समेभूत्॥९२॥

नेत्यंब्रवीत्। पूर्वमेवाहमिहासमिति। तत्पुरुषस्य पुरुष्त्वम्। स सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। भूत्वोदंतिष्ठत्। तमंब्रवीत्। त्वं वै पूर्वर्ं सम्भूः। त्विमदं पूर्वः कुरुष्वेति। स इत आदायापः॥९३॥

अञ्जलिनां पुरस्तांदुपादंघात्। एवाद्येवेति। ततं आदित्य उदितिष्ठत्। सा प्राची दिक्। अर्थाऽरुणः केतुर्देक्षिणत उपादंघात्। एवाद्यम्न इति। ततो वा अग्निरुदंतिष्ठत्। सा देक्षिणा दिक्। अर्थारुणः केतुः पृश्चादुपादंघात्। एवा हि वायो

इति॥९४॥

ततौ वायुरुदितिष्ठत्। सा प्रतीची दिक्। अथारुणः केतुरुत्तर्त उपादिधात्। एवाहीन्द्रेति। ततो वा इन्द्र उदितिष्ठत्। सोदीची दिक्। अथारुणः केतुर्मध्ये उपादिधात्। एवा हि पूषिन्निति। ततो वै पूषोदितिष्ठत्। सेयं दिक्॥९५॥

अथारुणः केतुरुपरिष्टादुपादंधात्। एवा हि देवा इति। ततौ देवमनुष्याः पितर्रः। गृन्धर्वाप्सरस्थ्रोदंतिष्ठन्न्। सोध्वा दिक्। या विप्रुषौ विपर्गपतन्न्। ताभ्योऽसुरा रक्षार्रसि पिशाचाश्रोदंतिष्ठन्न्। तस्मात्ते पर्गभवन्न्। विप्रुङ्गो हि ते सम्भवन्न्। तदेषाऽभ्यनूक्ता॥९६॥

आपौ ह यहूंहतीर्गर्भमायम्। दक्षं दर्धाना जनयन्तीः स्वयम्भुम्। ततं इमेध्यसृज्यन्त सर्गाः। अद्यो वा इदश्सम्भूत्। तस्मद्विदश्सर्वं ब्रह्मं स्वयम्भिवति। तस्मद्विदश्सर्वश्च क्रिष्टं विधिलम्वाऽध्रुवंमिवाभवत्। प्रजापितिर्वाव तत्। आत्मनाऽऽत्मानं विधायं। तदेवानुप्राविश्वात्। तदेषाऽभ्यनूक्ता॥९७। विधायं लोकान् विधायं भूतानि। विधायं सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च।

प्रजापितिः प्रथम्जा ऋतस्ये। आत्मनाऽऽत्मानमि संविवेशेति। सर्वमेवेदमास्वा। सर्वमवरुद्धे। तदेवानुप्रविशति। य एवं वेदं॥९८॥

-[२३]

चतुष्टय्य आपों गृह्णाति। चत्वारि वा अपाश रूपाणि। मेघों विद्युत्। स्तन्यिलुर्वृष्टिः। तान्येवावंरुन्धे। आतपिति वर्ष्यो गृह्णाति। ताः पुरस्तादुपंद्धाति। एता वै ब्रह्मवर्चस्या आपः। मुख्त एव ब्रह्मवर्चसमवंरुन्धे। तस्मान्मुखतो ब्रह्मवर्चिसित्रंः॥९९॥

कूप्यां गृह्णाति। ता देक्षिणत उपद्धाति। पता वै तेजिस्विनीरापः। तेजं प्वास्यं दक्षिणतो दंधाति। तस्माद्दक्षिणोऽर्धस्तेजस्वितरः। स्थावरा गृह्णाति। ताः पृश्चादुपद्धाति। प्रतिष्ठिता वै स्थावराः। पृश्चादेव प्रतितिष्ठति। वर्हन्तीर्गृह्णाति॥१००॥

ता उत्तर्त उपद्धाति। ओर्जसा वा एता वहन्तीरिवोर्द्गतीरिव आकूर्जतीरिव धार्वन्तीः। ओर्ज एवास्यौत्तर्तो दंधाति। तस्मादुत्तरोऽधी ओजस्वितरः। सम्भार्या गृह्णाति। ता मध्य उपद्धाति। इयं वै सम्मार्याः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। पुल्वल्या गृह्णाति। ता उपरिष्टादुपाद्धाति॥१०१॥

असौ वै पंत्वयाः। अमुष्यमिव प्रतितिष्ठति। दिक्षूपंदधाति। दिक्षु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अन्नो वा अन्नं जायते। यदेवन्नोऽन्नं जायते। तदवंरुन्ये। तं वा एतमंरुणाः केतवो वातरशना ऋषयोऽचिन्वन्न्। तस्मदारुणकेतुकः॥१०२॥

तदेषाऽभ्यनूँका। केतवो अर्रुणासश्च। ऋष्यो वातरशानाः। प्रतिष्ठाः श्वातधां हि। समाहितासो सहस्रधार्यसमिति। श्वातशिश्चेव सहस्रशिश्च प्रतितिष्ठति। य एतम्प्तिं चिनुते। य उचैनमेवं वेदं॥१०३॥

-[38]

जानुद्ग्नीमुत्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरयति। अपाश सर्वत्वाये। पुष्करपर्णश रुकां पुरुषमित्युपद्धाति। तपो वै पुष्करपर्णम्। सत्यश रुकाः। अमृतं पुरुषः। एतावृद्वा वाऽस्ति। यार्वदेतत्। यार्वदेवास्ति॥१०४॥

तदवरुन्धे। कूर्ममुपद्धाति। अपामेव मेधमवरुन्धे।

.[રૂપ]

अथौ स्वर्गस्यं लोकस्य समिष्टौ। आपमापामपः सर्वौः। अस्माद्स्मादितोऽमुतः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्रस्करिद्धया इति। वाय्वश्वा रिमपतयः। लोकंपृणिच्छुद्रं पृण॥१०५॥

यास्तिस्रः परम्जाः। इन्द्रघोषा वो वसुभिरेवाद्येवेति। पञ्चचित्यं उपद्धाति। पाङ्कोऽग्निः। यावानेवाग्निः। तं चिनुते। लोकं पृणया द्वितीयामुपद्धाति। पञ्च पदा वै विराट्। तस्या वा इयं पादः। अन्तरिक्षं पादः। द्यौः पादः। दिशः पादः। प्ररोर्जाः पादः। विराज्येव प्रतितिष्ठति। य एतम्गिं चिनुते। य उचैनमेवं वेदं॥१०६॥

अग्निं प्रणीयौपसमाधाये। तम्भित एता अबीष्टका उपद्धाति। अग्निहोत्रे दर्शपूर्णमासयौः। पृशुबन्धे चांतुर्मास्येषुं। अथौ आहुः। सर्वेषुं यज्ञकृतुष्विति। अर्थं ह स्माहारुणः स्वायम्भुवंः। सावित्रः सर्वोऽग्निरित्यनंनुषङ्गं मन्यामहे। नाना वा एतेषां वीर्याणि। कम्ग्निं चिनुते॥१०७॥

स्तियम्प्रिं चिन्वानः। कम्प्रिं चिनुते। सावित्रम्प्रिं चिन्वानः।

कम्पिः चिनुते। नाचिकेतम्पिः चिन्वानः। कम्पिः चिनुते। चातुर्होत्रियम्पिः चिन्वानः। कम्पिः चिनुते। वैश्वसृजम्पिः चिन्वानः। कमिः चिनुते॥१०८॥

उपानुवार्क्यमाशुम्पिः चिन्वानः। कम्पिः चिनुते। इममारुणकेतुक-मिः चिन्वान इति। वृषा वा अग्निः। वृषाणौ सङ्स्फालयेत्। हृन्येतास्य युज्ञः। तस्मान्नानुषज्यः। सोत्तरवेदिषुं कृतुषुं चिन्वीत। उत्तरवेद्याङ् ह्यंग्निश्चीयते। प्रजाकामश्चिन्वीत॥१०९॥

प्राजापत्यो वा एषौँऽग्निः। प्राजापत्याः प्रजाः। प्रजावान् भवति। य एवं वेदं। पुशुकामश्चिन्वीत। सुंज्ञानुं वा एतत् पश्चूनाम्। यदापः। पुश्चूनामेव सुंज्ञानेऽग्निं चिनुते। पुशुमान् भवति। य एवं वेदं॥११०॥

वृष्टिकामिश्चन्वीत। आपो वै वृष्टिः। पूर्जन्यो वर्षुको भवति। य एवं वेद्। आमयावी चिन्वीत। आपो वै भेषुजम्। भेषजमेवास्मै करोति। सर्वमायुरिति। अभिचर श्रीक्वन्वीत। वज्रो वा आपः॥१११॥

वर्ज्रमेव भ्रातृं व्येभ्यः प्रहंरति। स्तृणुत एनम्। तेर्जस्कामो

यशस्कामः। <u>ब्रह्मवर्च</u>सकामः स्वर्गकामश्चिन्वीत। <u>प्ताव</u>द्वा वाऽस्ति। यावेदेतत्। यावेदेवास्ति। तदवरुन्धे। तस्यैतद्वतम्। वरुषति न धावेत्॥११२॥

अमृतं वा आपंः। अमृतस्यानंन्तरित्यै। नाप्सु मूत्रंपुरीषं कुर्यात्। न निष्ठीवेत्। न विवसनः स्नायात्। गुह्यो वा एषौंऽग्निः। एतस्याग्नेरनंतिदाहाय। न पुष्करपणांनि हिरंण्यं वाऽधितिष्ठैत्। एतस्याग्नेरनंभ्यारोहाय। न कूर्मस्याश्नीयात्। नोद्कस्याघातुंकान्येनंमोद्कानि भवन्ति। अघातुंका आपंः। य एतम्गिं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥११३॥

——[२६]

इमार्नुकं भुवना सीषधेम। इन्द्रेश्च विश्वे च देवाः। युइं चे नस्तन्वं चे प्रजां चे। आदित्यैरिन्द्रेः सह सीषधातु। आदित्यैरिन्द्रः सर्गणो मुरुद्भिः। अस्माकं भूत्विवता तुनूनौम्। आस्रवस्व प्रस्नवस्व। आण्डीभेवज् मा मुहुः। सुखादीन्दुःखिन्धनाम्। प्रतिमुञ्चस्व स्वां पुरम्॥११४॥

मरीचयः स्वायम्भुवाः। ये शर्रीराण्यंकल्पयन्न्। ते ते देहं कंल्पयन्तु। मा चे ते ख्यास्मं तीरिषत्। उत्तिष्ठत मा स्वप्त।

अग्निमिच्छध्वं भारताः। राज्ञः सोमस्य तृप्तासः। सूर्येण सयुजोषसः। युवां सुवासाः। अष्टाचेका नवेद्वारा॥११५॥

वेवानां पूर्योध्या। तस्या हिरण्मयः कोशः। स्वर्गो लोको ज्योतिषाऽऽवृंतः। यो वै तां ब्रह्मणो वेद। अमृतेनऽऽवृतां पुरीम्। तस्में ब्रह्म चं ब्रह्मा च। आयुः कीर्ति प्रजां दृंदुः। विभ्राजमाना हिर्णीम्। यशसां सम्परीवृंताम्। पुर हिरण्मयीं ब्रह्मा॥११६॥ विवेशांऽपुराजिता। पराङेत्यंज्यामयी। पराङेत्यंनाश्वकी। इह चामुत्रं चान्वेति। विद्वान्देवासुरानुभयान्। यत्कुमारी मन्द्रयंते।

चीमुत्रं चान्वेति। विद्वान्देवासुरानुभयान्। यत्कुमारी मन्द्रयते। यद्योषिद्यत्पतिव्रता। अरिष्टं यत्किं चे क्रियते। अग्निस्तदनुवेधति। अश्वतासः श्वेतासश्च॥११७॥

युज्वानो येऽप्ययुज्वनः। स्वर्यन्तो नापैक्षन्ते। इन्द्रेम्पिः चे विदुः। सिर्कता इव संयन्ति। रिश्मिनः समुदीरिताः। अस्माछ्रोकादमुष्माच। ऋषिभिरदात्पृक्षिभिः। अपेत वीत वि चे सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूर्तनाः। अहौभिरद्भिरकु-भिर्व्यक्तम्॥११८॥

यमो दंदात्ववसानंमस्मै। नृ मुंणन्तु नृपात्वर्यः। अकृष्टा ये च

कृष्टंजाः। कुमारीषु क्नीनीषु। जारिणीषु च ये हिताः। रेतः पीता आण्डंपीताः। अङ्गरिषु च ये हुताः। उभयान् पुत्रंपौत्रकान्। युवेऽहं यमराजंगान्। श्वातमिन्नु श्वरदंः॥११९॥

अद्यो यद्वह्मं विल्वम्। पितृणां चं यमस्यं च। वर्रुणस्यार्श्वनोर्ग्नः। मरुतां च विहायंसाम्। काम्प्रयवंणं मे अस्तु। स ह्यंवास्मि सुनातनः। इति नाको ब्रह्मिश्रवो रायो धनम्। पुत्रानापो देवीरिहऽऽहित॥१२०॥

विशीष्णीं गृध्रेशीष्णीं च। अपेतो निर्ऋति हथः। परिबाध श्रेतकुक्षम्। निजङ्ग श्रेतकुक्षम्। निजङ्ग श्रेतकुक्षम्। निजङ्ग श्रेतकुक्षम्। निजङ्ग श्रे शब्लोद्रम्। स् तान् वाच्यायया सह। अग्ने नाश्य सन्दर्शः। ईर्ष्यासूये बुंभुक्षाम्। मन्युं कृत्यां चं दीधिरे। रथेन कि श्र्युकावता। अग्ने नाश्य सन्दर्शः॥१२१॥——[२८]

पुर्जन्याय प्रगायत। दिवस्पुत्रायं मीढुषै। स नौ यवसंमिच्छतु। इदं वर्चः पुर्जन्याय स्वराजै। हृदो अस्त्वन्तर्रन्तद्यंयोत। मयोभूर्वातौ विश्वकृष्टयः सन्त्वस्मे। सुपिप्पुला ओषंधीर्देवगौपाः। यो गर्भमोषंधीनाम्। गवाँ कृणोत्यर्वताम्। पुर्जन्यः पुरुषीणाम्॥१२२॥

-[२९]

पुर्नर्मामैत्विन्द्रियम्। पुन्रायुः पुनर्भगः। पुन्र्ब्राह्मणमैतु
मा। पुनर्द्रविणमैतु मा। यन्मेऽद्य रेतः पृथिवीमस्कान्।
यदोषधीरप्यसंर्द्यदापः। इदं तत्पुन्राददे। दीर्घायुत्वाय वर्चसे।
यन्मे रेतः प्रसिच्यते। यन्म आजायते पुनः। तेन माम्मृतं कुरु।
तेन सुप्रजसं कुरु॥ १२३॥

-[३०]

अद्यस्तिरोऽधाऽजीयत। तर्व वैश्रवणः संदा। तिरौऽधेहि सप्लान्नः। ये अपोऽश्नन्ति केचन। त्वाष्ट्रीं मायां वैश्रवणः। रथर्थं सहस्रवन्धुरम्। पुरुश्चक्रः सर्हस्राश्वम्। आस्थायायाहि नो बुलिम्। यस्मै भूतानि बुलिमार्वहन्ति। धनुं गावो हस्ति हिर्रण्यमश्वान्॥१२४॥

असीम सुमृतौ युज्ञियस्य। श्रियं बिभ्रुतोऽन्नमुखीं विराजम्। सुदुर्शने च क्रौश्चे च। मैनागे च महागिरौ। शतद्वाद्वारंगमन्ता। सुरहार्यं नगरं तर्व। इति मन्त्राः। कल्पोऽत ऊर्ध्वम्। यदि बलिश् हरैत्। हिर्ण्यनाभये वितुद्ये कौबेरायायं बेलिः॥१२५॥

सर्वभूताधिपतये नम इति। अथ बिलश् हत्वोपितिष्ठेत। क्षत्रं क्षत्रं वैश्रवणः। ब्राह्मणां वयु स्मः। नमस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। अस्मात्प्रविश्यान्नमद्धीति। अथ तमग्निमाद्धीत। यस्मिन्नेतत्कर्मप्रुष्ट्चीत। तिरोऽधा भूः। तिरोऽधा भुवंः॥१२६॥

तिरोऽधाः स्वंः। तिरोऽधा भूर्भुवः स्वंः। सर्वेषां लोकानामाधिपत्यं सीदेति। अथ तमिन्निमिन्धीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुक्जीत। तिरोऽधा भूः स्वाहाँ। तिरोऽधा भुवः स्वाहाँ। तिरोऽधाः स्वंः स्वाहाँ। तिरोऽधा भूर्भुवः स्वंः स्वाहाँ। यस्मिन्नस्य काले सर्वा आहुतीर् हुतां भवेयुः॥१२७॥

अपि ब्राह्मणंमुखीनाः। तस्मिन्नहः काले प्रंयुङ्गीत। परंः सुप्तजनाद्वेपि। मास्म प्रमाद्यन्तमाध्यापयेत्। सर्वार्थाः सिद्धन्ते। य एवं वेद। क्षुध्यन्निद्मजानताम्। सर्वार्था नं सिद्धन्ते। यस्ते विघातुको भ्राता। ममान्तर्ह्हंदये श्रितः॥१२८॥

तस्मा इममग्रपिण्डं जुहोमि। स मेंऽर्थान्मा विविधीत्। मिय स्वाहां। राजाधिराजायं प्रसह्यसाहिने। नमो वयं वैश्रवणायं कुर्महे। स में कामान्कामकामांय मह्म । कामेश्वरो वैश्रवणो दंदातु। कुबेरायं वैश्रवणायं। महाराजाय नर्मः। केतवो अर्फणासश्च। ऋषयो वातंरज्ञानाः। प्रतिष्ठाः ज्ञातधां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। द्दावा नः ज्ञान्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमृडीका सर्रस्वति। मा ते व्योम सन्दिश्तं॥१२९॥

-[३१]

संवत्सरमेतंद्वतं चरेत्। द्वौ वा मासौ। नियमः संमासेन। तस्मिन्नियमेविशोषाः। त्रिषवणमुद्कौपस्पुर्शी। चतुर्थकालपानंभक्तः स्यात्। अहरहर्वा भैक्षंमश्वीयात्। औदुम्बरीभिः समिद्भिरिग्नं परिचरेत्। पुनर्मामैक्त्विन्द्रियमित्येतेनऽनुवाकेन। उद्धृतपरिपूताभि-रिद्भः कार्यं कुर्वीत॥१३०॥

असञ्चयवान्। अग्नये वायवे सूर्याय। ब्रह्मणे प्रजापतये। चन्द्रमसे नक्षत्रेभ्यः। ऋतुभ्यः संवित्सराय। वरुणायारुणायेति व्रतहोमाः। प्रवर्ग्यवदादेशः। अरुणाः काण्डऋषयः। अरण्येऽधीयीरन्न्। भद्रं कर्णीभिरिति द्वे जिपत्वा॥१३१॥

महानाम्नीभिरुदक संङ्स्पुर्य। तमाचौर्यो दद्यात्। शिवा नः शन्तमेत्योषधीरालभते। सुमृडीकेति भूमिम्। एवमपवर्गे। धेनुर्दक्षिणा। कश्सं वासंश्च क्षौमम्। अन्यद्वा शुक्कम्। यथाशक्ति वा। एवङ्स्वाध्यायंधर्मेण। अरण्यंऽधीयीत। तपस्वी पुण्यो भवति तपस्वी पुंण्यो भवति॥१३२॥

-[३२]

मुद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भुद्रं पश्येमाक्षभिर्यजेत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्ट्रवाश् संस्तनूभिः। व्यशेम देवहितं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रौ वृद्धश्रेवाः। स्वस्ति नेः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्तार्क्ष्यौ अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृहस्पतिर्द्धातु॥

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

विभागः २

स्तोत्राणि

॥ आदित्यहृदयम्॥

ततो युद्धपरिश्रान्तं समरे चिन्तया स्थितम् । रावणं चाय्रतो दृष्ट्वा युद्धाय समुपस्थितम् ॥१॥

दैवतैश्च समागम्य द्रष्टुमभ्यागतो रणम् । उपागम्याबवीदामम् अगस्त्यो भगवान् ऋषिः॥२॥

राम राम महाबाहो शृणु गुह्यं सनातनम् । येन सर्वानरीन् वत्स समरे विजयिष्यसि॥३॥

आदित्यहृदयं पुण्यं सर्वशात्रुविनाशनम् । जयावहं जपेन्नित्यम् अक्षय्यं परमं शिवम् ॥४॥

सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं सर्वपापप्रणाशनम् । चिन्ताशोकप्रशमनम् आयुर्वर्धनमुत्तमम् ॥५॥

रिश्ममन्तं समुद्यन्तं देवासुरनमस्कृतम् । पूजयस्व विवस्वन्तं भास्करं भुवनेश्वरम् ॥६॥

सर्वदेवात्मको ह्येष तेजस्वी रिश्मभावनः। एष देवासुरगणान् लोकान् पाति गभस्तिभिः॥७॥ एष ब्रह्मा च विष्णुश्च शिवः स्कन्दः प्रजापितः। महेन्द्रो धनदः कालो यमः सोमो ह्यपां पितः॥८॥

पितरो वसवः साध्या ह्यश्विनौ मरुतो मनुः। वायुर्वह्यिः प्रजाप्राण ऋतुकर्ता प्रभाकरः॥९॥

आदित्यः सविता सूर्यः खगः पूषा गभस्तिमान् । सुवर्णसदृशो भानुर्हिरण्यरेता दिवाकरः॥१०॥

हरिदश्वः सहस्राचिः सप्तसप्तिर्मरीचिमान् । तिमिरोन्मथनः शम्भुस्त्वष्टा मार्ताण्ड अंशुमान् ॥११॥

हिरण्यगर्भः शिशिरस्तपनो भास्करो रविः। अग्निगर्भोऽदितेः पुत्रः शङ्खः शिशिरनाशनः॥१२॥ व्योमनाथस्तमोभेदी ऋग्यजुस्सामपारगः। घनवृष्टिरपां मित्रो विन्ध्यवीथीप्लवङ्गमः॥१३॥ आतपी मण्डली मृत्युः पिङ्गलः सर्वतापनः।

आतपा मण्डला मृत्युः ।पङ्गलः सवतापनः। कविर्विश्वो महातेजा रक्तः सर्वभवोद्भवः॥१४॥ नक्षत्रग्रहताराणाम् अधिपो विश्वभावनः। तेजसामपि तेजस्वी द्वादशात्मन् नमोऽस्तुते॥१५॥

नमः पूर्वाय गिरये पश्चिमायाद्रये नमः। ज्योतिर्गणानां पतये दिनाधिपतये नमः॥१६॥ जयाय जयभद्राय हर्यश्वाय नमो नमः। नमो नमः सहस्रांशो आदित्याय नमो नमः॥१७॥ नम उग्राय वीराय सारङ्गाय नमो नमः। नमः पद्मप्रबोधाय मार्ताण्डाय नमो नमः॥१८॥ ब्रह्मेशानाच्युतेशाय सूर्यायादित्यवर्चसे। भास्वते सर्वभक्षाय रौद्राय वपुषे नमः॥१९॥ तमोघ्नाय हिमघ्नाय रात्रुघ्नायामितात्मने। कृतघ्नघ्नाय देवाय ज्योतिषां पतये नमः॥२०॥ तप्तचामीकराभाय वह्नये विश्वकर्मणे। नमस्तमोऽभिनिघ्नाय रुचये लोकसाक्षिणे॥२१॥ नाशयत्येष वै भूतं तदेव सृजित प्रभुः। पायत्येष तपत्येष वर्षत्येष गभस्तिभिः॥२२॥ एष सप्तेषु जागर्ति भूतेषु परिनिष्ठितः। एष एवाग्निहोत्रं च फलं चैवाग्निहोत्रिणाम् ॥२३॥

वेदाश्च कतवश्चैव कतूनां फलमेव च। यानि कृत्यानि लोकेषु सर्व एष रविः प्रभुः॥२४॥ एनमापत्सु कृच्छ्रेषु कान्तारेषु भयेषु च। कीर्तयन् पुरुषः कश्चिन्नावसीदित राघव॥२५॥ पूजयस्वैनमेकाग्रो देवदेवं जगत्पितम्। एतत् त्रिगुणितं जह्वा युद्धेषु विजयिष्यसि॥२६॥ अस्मिन् क्षणे महाबाहो रावणं त्वं विधिष्यसि। एवमुक्तवा तदाऽगस्त्यो जगाम च यथाऽऽगतम्॥२७॥

एतच्छुत्वा महातेजा नष्टशोकोऽभवत्तदा। धारयामास सुप्रीतो राघवः प्रयतात्मवान् ॥२८॥ आदित्यं प्रेक्ष्य जम्वा तु परं हर्षमवाप्तवान् । त्रिराचम्य शुचिर्भूत्वा धनुरादाय वीर्यवान् ॥२९॥ रावणं प्रेक्ष्य हृष्टात्मा युद्धाय समुपागमत् । सर्वयत्नेन महता वधे तस्य धृतोऽभवत् ॥३०॥

अथ रविरवदन्निरीक्ष्य रामं मुदितमनाः परमं प्रहृष्यमाणः। निशिचरपतिसङ्खयं विदित्वा सुरगणमध्यगतो वचस्त्वरेति॥३१॥ ॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये युद्धकाण्डे आदित्यहृद्यं नाम सप्तोत्तरशततमः सर्गः॥

॥ सूर्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्॥

धौम्य उवाच सूर्योऽर्यमा भगस्त्वष्टा पूषाऽर्कः सविता रविः। गभस्तिमानजः कालो मृत्युर्धाता प्रभाकरः॥१॥ पृथिव्यापश्च तेजश्च खं वायुश्च परायणम् । सोमो बृहस्पतिः शुक्रो बुधोऽङ्गारक एव च॥२॥ इन्द्रो विवस्वान् दीप्तांद्युः द्युचिः शौरिः शनैश्चरः। ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च स्कन्दो वै वरुणो यमः॥३॥ वैद्युतो जाठरश्चाग्निरैन्धनस्तेजसां पतिः। धर्मध्वजो वेदकर्ता वेदाङ्गो वेदवाहनः॥४॥ कृतं त्रेता द्वापरश्च किलः सर्वमलाश्रयः। कलाकाष्ट्रामुहूर्तश्च क्षपा यामस्तथा क्षणः॥५॥ संवत्सरकरोऽश्वत्थः कालचक्रो विभावसुः। पुरुषः शाश्वतो योगी व्यक्ताव्यक्तः सनातनः॥६॥

कालाध्यक्षः प्रजाध्यक्षो विश्वकर्मा तमोनुदः। वरुणः सागरोंऽशुश्च जीमूतो जीवनोऽरिहा॥७॥

भूताश्रयो भूतपतिः सर्वलोकनमस्कृतः। स्रष्टा संवर्तको वह्निः सर्वस्यादिरलोलुपः॥८॥

अनन्तः कपिलो भानुः कामदः सर्वतोमुखः। जयो विशालो वरदः सर्वभूतनिषेवितः॥९॥

मनः सुपर्णो भूतादिः शीघ्रगः प्राणधारकः। धन्वतरिर्धूमकेतुरादिदेवोऽदितेः सुतः॥१०॥

द्वाद्शात्माऽरविन्दाक्षः पिता माता पितामहः। स्वर्गद्वारं प्रजाद्वारं मोक्षद्वारं त्रिविष्टपम् ॥११॥

देहकर्ता प्रशान्तात्मा विश्वात्मा विश्वतोमुखः। चराचरात्मा सूक्ष्मात्मा मैत्रेयः करुणान्वितः॥१२॥

एतद्वै कीर्तनीयस्य सूर्यस्यामिततेजसः। नामाष्टशतकं चेदं प्रोक्तमेतत् स्वयम्भुवा॥१३॥

सुरगणितृयक्षसेवितं ह्यसुरिनशाचरिसद्धविन्दितम् । वरकनकहुताशनप्रभं प्रणिपिततोऽस्मि हिताय भास्करम् ॥१४॥ सूर्योदये यः सुसमाहितः पठेत् स पुत्रदारान् धनरत्नसश्चयान् । लभेत जातिस्मरतां नरः सदा धृतिं च मेधां च स विन्दते पुमान् ॥१५॥ इमं स्तवं देववरस्य यो नरः प्रकीर्तयेच्छुद्धमनाः समाहितः। विमुच्यते शोकदवाग्निसागरात् लभेत कामान् मनसा यथेप्सितान् ॥१६॥ ॥इति श्रीमन्महाभारते वनपर्वणि धौम्ययुधिष्ठिरसंवादे श्री सूर्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ सूर्यकवचम्॥

याज्ञवल्का उवाच शृणुष्व मुनिशार्दूल सूर्यस्य कवचं शुभम् । शरीरारोग्यदं दिव्यं सर्वसौभाग्यदायकम् ॥१॥ देदीप्यमानमुकुटं स्फुरन्मकरकुण्डलम् । ध्यात्वा सहस्रकिरणं स्तोत्रमेतदुदीरयेत् ॥२॥ शिरो मे भास्करः पातु ललाटं मेऽमितद्युतिः। नेत्रे दिनमणिः पातु श्रवणे वासरेश्वरः॥३॥

घ्राणं घर्मघृणिः पातु वदनं वेदवाहनः। जिह्वां मे मानदः पातु कण्ठं मे सुरवन्दितः॥४॥

स्कन्धौ प्रभाकरः पातु वक्षः पातु जनप्रियः। पातु पादौ द्वादशात्मा सर्वाङ्गं सकलेश्वरः॥५॥

सूर्यरक्षात्मकं स्तोत्रं लिखित्वा भूर्जपत्रके। द्धाति यः करे तस्य वशगाः सर्वसिद्धयः॥६॥

सुस्नातो यो जपेत्सम्यग्योऽधीते स्वस्थमानसः। स रोगमुक्तो दीर्घायुः सुखं पुष्टिं च विन्दति॥७॥

॥ इति श्री याज्ञवल्क्यमुनिविरचितं श्री सूर्यकवचस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ गायत्री स्तवनम्॥

यन्मण्डलं दीप्तिकरं विशालं रत्नप्रभं तीव्रमनादिरूपम् । दारिद्यदुःखक्षयकारणं च पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥१॥

यन्मण्डलं देवगणैः सुपूजितं विप्रैः स्तुतं मानवमुक्तिकोविदम् । तं देवदेवं प्रणमामि सूर्यं पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥२॥ यन्मण्डलं ज्ञानघनं त्वगम्यं त्रैलोक्यपूज्यं त्रिगुणात्मरूपम् । समस्त-तेजोमय-दिव्यरूपं पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥३॥ यन्मण्डलं गूढमतिप्रबोधं धर्मस्य वृद्धिं कुरुते जनानाम् । यत्सर्वपापक्षयकारणं च पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥४॥ यन्मण्डलं व्याधिविनाशदक्षं यदृग्यजुःसामसु सम्प्रगीतम् । प्रकाशितं येन च भूर्भुवः स्वः पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥५॥ यन्मण्डलं वेदविदो वदन्ति गायन्ति यचारण-सिद्धसङ्घाः। यद्योगिनो योगजुषां च सङ्घाः पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥६॥ यन्मण्डलं सर्वजनेषु पूजितं ज्योतिश्च कुर्यादिह मर्त्यलोके। यत्कालकल्पक्षयकारणं च पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥७॥ यन्मण्डलं विश्वसृजां प्रसिद्धमुत्पत्ति-रक्षा-प्रलय-प्रगल्भम् । यस्मिञ्जगत्संहरतेऽखिलं च पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥८॥ यन्मण्डलं सर्वजनस्य विष्णोरात्मा परं धाम विशुद्धतत्त्वम् । सूक्ष्मान्तरैर्योगपथानुगम्यं पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥९॥

यन्मण्डलं ब्रह्मविदो वदिन्ति गायिन्ति यच्चारण-सिद्धसङ्घाः। यन्मण्डलं वेदिवदः स्मरिन्ति पुनातु मां तत्सिवितुर्वरेण्यम् ॥१०॥ यन्मण्डलं वेदिवदोपगीतं यद्योगिनां योगपथानुगम्यम् । तत्सर्ववेदं प्रणमामि सूर्यं पुनातु मां तत्सिवितुर्वरेण्यम् ॥११॥

॥ सूर्यसहस्रनामस्तोत्रम्॥

शतानीक उवाच नाम्नां सहस्रं सवितुः श्रोतुमिच्छामि हे द्विज। येन ते दर्शनं यातः साक्षाद्देवो दिवाकरः॥१॥ सर्वमङ्गलमङ्गल्यं सर्वपापप्रणाशनम्। स्तोत्रमेतन्महापुण्यं सर्वोपद्रवनाशनम् ॥२॥ न तदस्ति भयं किश्चिद्यदनेन न नश्यति। ज्वराद्यैर्मुच्यते राजन् स्तोत्रेऽस्मिन् पठिते नरः॥३॥ अन्ये च रोगाः शाम्यन्ति पठतः शृण्वतस्तथा। सम्पद्यन्ते यथा कामाः सर्व एव यथेप्सिताः॥४॥ य एतदादितः श्रुत्वा सङ्ग्रामं प्रविशेन्नरः। स जित्वा समरे रात्रूनभ्येति गृहमक्षतः॥५॥

वन्ध्यानां पुत्रजननं भीतानां भयनाशनम् । भूतिकारि दरिद्राणां कुष्ठिनां परमौषधम् ॥६॥

बालानां चैव सर्वेषां ग्रहरक्षोनिवारणम् । पठते संयतो राजन् स श्रेयः परमाप्नुयात् ॥७॥

स सिद्धः सर्वसङ्कल्पः सुखमत्यन्तमश्चते। धर्मार्थिभिर्धर्मलुब्धैः सुखाय च सुखार्थिभिः॥८॥

राज्याय राज्यकामैश्च पठितव्यमिदं नरैः। विद्यावहं तु विप्राणां क्षत्रियाणां जयावहम् ॥९॥

पश्चाहं तु वैश्यानां शूद्राणां धर्मवर्धनम् । पठतां शृण्वतामेतद्भवतीति न संशयः॥१०॥

तच्छृणुष्व नृपश्रेष्ठ प्रयतात्मा बवीमि ते। नाम्नां सहस्रं विख्यातं देवदेवस्य धीमतः॥११॥

॥ध्यानम्॥

ध्येयः सदा सवितृमण्डलमध्यवर्तीं नारायणः सरसिजासनसन्निविष्टः। केयूरवान् मकरकुण्डलवान् किरीटी हारी हिरण्मयवपूर्धतशङ्खचकः॥

॥स्तोत्रम्॥

ॐ विश्वविद्विश्वजित्कर्ता विश्वातमा विश्वतोमुखः। विश्वेश्वरो विश्वयोनिर्नियतात्मा जितेन्द्रियः॥१॥

कालाश्रयः कालकर्ता कालहा कालनाशनः। महायोगी महासिद्धिर्महात्मा सुमहाबलः॥२॥

प्रभुर्विभुर्भूतनाथो भूतात्मा भुवनेश्वरः। भूतभव्यो भावितात्मा भूतान्तःकरणं शिवः॥३॥

शरण्यः कमलानन्दो नन्दनो नन्दवर्धनः। वरेण्यो वरदो योगी सुसंयुक्तः प्रकाशकः॥४॥

प्राप्तयानः परप्राणः पूतात्मा प्रयतः प्रियः। नयः सहस्रपात् साधुर्दिव्यकुण्डलमण्डितः॥५॥

अव्यङ्गधारी धीरात्मा सविता वायुवाहनः। समाहितमतिर्दाता विधाता कृतमङ्गलः॥६॥ कपर्दी कल्पपाद्भद्रः सुमना धर्मवत्सलः। समायुक्तो विमुक्तात्मा कृतात्मा कृतिनां वरः॥७॥ अविचिन्त्यवपुः श्रेष्ठो महायोगी महेश्वरः। कान्तः कामारिरादित्यो नियतात्मा निराकुलः॥८॥ कामः कारुणिकः कर्ता कमलाकरबोधनः। सप्तसिरचिन्त्यात्मा महाकारुणिकोत्तमः॥९॥ सञ्जीवनो जीवनाथो जयो जीवो जगत्पतिः। अयुक्तो विश्वनिलयः संविभागी वृषध्वजः॥१०॥ वृषाकिः कल्पकर्ता कल्पान्तकरणो रविः। एकचकरथो मौनी सुरथो रथिनां वरः॥११॥ सक्रोधनो रिममाली तेजोराशिर्विभावसुः। दिव्यकृद्दिनकृद्देवो देवदेवो दिवस्पतिः॥१२॥ दीननाथो हरो होता दिव्यबाहुर्दिवाकरः। यज्ञो यज्ञपतिः पूषा स्वर्णरेताः परावरः॥१३॥

परापरज्ञस्तरणिरंशुमाली मनोहरः। प्राज्ञः प्राज्ञपतिः सूर्यः सविता विष्णुरंशुमान् ॥१४॥

सदागतिर्गन्धवहो विहितो विधिराशुगः। पतङ्गः पतगः स्थाणुर्विहङ्गो विहगो वरः॥१५॥

हर्यश्वो हरिताश्वश्च हरिदश्वो जगत्प्रियः। त्र्यम्बकः सर्वदमनो भावितात्मा भिषग्वरः॥१६॥

आलोककृष्ठोकनाथो लोकालोकनमस्कृतः। कालः कल्पान्तको विह्नस्तपनः सम्प्रतापनः॥१७॥

विरोचनो विरूपाक्षः सहस्राक्षः पुरन्दरः। सहस्ररिमर्मिहिरो विविधाम्बरभूषणः॥१८॥

खगः प्रतर्दनो धन्यो हयगो वाग्विशारदः। श्रीमानिशिशारो वाग्मी श्रीपितः श्रीनिकेतनः॥१९॥ श्रीकण्ठः श्रीधरः श्रीमान् श्रीनिवासो वसुप्रदः। कामचारी महामायो महोग्रोऽविदितामयः॥२०॥ तीर्थिकयावान् सुनयो विभक्तो भक्तवत्सलः। कीर्तिः कीर्तिकरो नित्यः कुण्डली कवची रथी॥२१॥ हिरण्यरेताः सप्ताश्वः प्रयतात्मा परन्तपः। बुद्धिमानमरश्रेष्ठो रोचिष्णुः पाकशासनः॥२२॥ समुद्रो धनदो धाता मान्धाता कश्मलापदः। तमोघ्नो ध्वान्तहा विहुर्होताऽन्तःकरणो गुहः॥२३॥ पशुमान् प्रयतानन्दो भूतेशः श्रीमतां वरः। नित्योऽदितो नित्यरथः सुरेशः सुरपूजितः॥२४॥ अजितो विजितो जेता जङ्गमस्थावरात्मकः। जीवानन्दो नित्यगामी विजेता विजयप्रदः॥२५॥ पर्जन्योऽग्निः स्थितिः स्थेयः स्थिवरोऽथ निरञ्जनः। प्रद्योतनो स्थारूढः सर्वलोकप्रकाशकः॥२६॥

ध्रुवो मेषी महावीर्यो हंसः संसारतारकः। सृष्टिकर्ता क्रियाहेतुर्मार्तण्डो मरुतां पतिः॥२७॥

मरुत्वान् दहनस्त्वष्टा भगो भगोऽर्यमा कपिः। वरुणेशो जगन्नाथः कृतकृत्यः सुलोचनः॥२८॥

विवस्वान् भानुमान् कार्यः कारणस्तेजसां निधिः। असङ्गगामी तिग्मांशुर्घर्मांशुर्दीप्तदीधितिः॥२९॥ सहस्रदीधितिर्ब्रधः सहस्रांशुर्दिवाकरः। गभस्तिमान् दीधितिमान् स्रग्वी मणिकुलद्युतिः॥३०॥

भास्करः सुरकार्यज्ञः सर्वज्ञस्तीक्ष्णदीधितिः। सुरज्येष्टः सुरपतिर्बहुज्ञो वचसां पतिः॥३१॥

तेजोनिधिर्बृहत्तेजा बृहत्कीर्तिर्बृहस्पतिः। अहिमानूर्जितो धीमानामुक्तः कीर्तिवर्धनः॥३२॥

महावैद्यो गणपतिर्धनेशो गणनायकः।

तीव्रप्रतापनस्तापी तापनो विश्वतापनः॥३३॥

कार्तस्वरो हृषीकेशः पद्मानन्दोऽतिनन्दितः। पद्मनाभोऽमृताहारः स्थितिमान् केतुमान् नभः॥३४॥

अनाद्यन्तोऽच्युतो विश्वो विश्वामित्रो घृणिर्विराट् ।

आमुक्तकवचो वाग्मी कञ्जुकी विश्वभावनः॥३५॥

अनिमित्तगतिः श्रेष्ठः शरण्यः सर्वतोमुखः।

विगाही वेणुरसहः समायुक्तः समाक्रतुः॥३६॥

धर्मकेतुर्धर्मरतिः संहर्ता संयमो यमः।

प्रणतार्तिहरो वायुः सिद्धकार्यो जनेश्वरः॥३७॥

नभो विगाहनः सत्यः सवितात्मा मनोहरः। हारी हरिर्हरो वायुर्ऋतुः कालानलसुतिः॥३८॥ सुखसेव्यो महातेजा जगतामेककारणम् । महेन्द्रो विष्टुतः स्तोत्रं स्तुतिहेतुः प्रभाकरः॥३९॥ सहस्रकर आयुष्मान् अरोषः सुखदः सुखी। व्याधिहा सुखदः सौख्यं कल्याणः कलतां वरः॥४०॥ आरोग्यकारणं सिद्धिर्ऋद्विर्विद्विहस्पतिः। हिरण्यरेता आरोग्यं विद्वान् ब्रध्नो बुधो महान् ॥४१॥ प्राणवान् धृतिमान् घर्मो घर्मकर्ता रुचिप्रदः। सर्वसहः सर्वशत्रुविनाशनः॥४२॥ सर्वप्रियः प्रांशुर्विद्योतनो द्योतः सहस्रकिरणः कृती। केयूरी भूषणोद्भासी भासितो भासनोऽनलः॥४३॥ शरण्यार्तिहरो होता खद्योतः खगसत्तमः। सर्वचोतो भवचोतः सर्वचुतिकरो मतः॥४४॥ कल्याणः कल्याणकरः कल्यः कल्यकरः कविः। कल्याणकृत् कल्यवपुः सर्वकल्याणभाजनम् ॥४५॥

शान्तिप्रियः प्रसन्नात्मा प्रशान्तः प्रशमप्रियः। उदारकर्मा सुनयः सुवर्चा वर्चसोज्ज्वलः॥४६॥ वर्चस्वी वर्चसामीशस्त्रैलोक्येशो वशानुगः। तेजस्वी सुयशा वर्ष्मी वर्णाध्यक्षो बलिप्रियः॥४७॥ यशस्वी तेजोनिलयस्तेजस्वी प्रकृतिस्थितः। आकाशगः शीघ्रगतिराशुगो गतिमान् खगः॥४८॥ गोपतिर्यहदेवेशो गोमानेकः प्रभञ्जनः। जनिता प्रजनो जीवो दीपः सर्वप्रकाशकः॥४९॥ सर्वसाक्षी योगनित्यो नभस्वानसुरान्तकः। रक्षोघ्नो विघ्नशमनः किरीटी सुमनःप्रियः॥५०॥ मरीचिमाली सुमतिः कृताभिख्यविशेषकः। शिष्टाचारः शुभाकारः स्वचाराचारतत्परः॥५१॥ मन्दारो माठरो वेणुः क्षुधापः क्ष्मापतिर्गुरुः। सुविशिष्टो विशिष्टात्मा विधेयो ज्ञानशोभनः॥५२॥ महाश्वेतः प्रियो ज्ञेयः सामगो मोक्षदायकः। सर्ववेदप्रगीतात्मा सर्ववेदलयो महान् ॥५३॥

वेदमूर्तिश्चतुर्वेदो वेदमृद्वेदपारगः। कियावानसितो जिष्णुर्वरीयांशुर्वरप्रदः॥५४॥ व्रतचारी व्रतधरो लोकबन्धुरलङ्कतः। अलङ्काराक्षरो वेद्यो विद्यावान् विदिताशयः॥५५॥ आकारो भूषणो भूष्यो भूष्णुर्भुवनपूजितः। चक्रपाणिर्ध्वजधरः सुरेशो लोकवत्सलः॥५६॥ वाग्मिपतिर्महाबाहुः प्रकृतिर्विकृतिर्गुणः। अन्धकारापहः श्रेष्ठो युगावर्तौ युगादिकृत् ॥५७॥ अप्रमेयः सदायोगी निरहङ्कार ईश्वरः। शुभप्रदः शुभः शास्ता शुभकर्मा शुभप्रदः॥५८॥ सत्यवान् श्रुतिमानुचैर्नकारो वृद्धिदोऽनलः। बलभृद्धलदो बन्धुर्मतिमान् बलिनां वरः॥५९॥ अनङ्गो नागराजेन्द्रः पद्मयोनिर्गणेश्वरः। संवत्सर ऋतुर्नेता कालचकप्रवर्तकः॥६०॥ पद्मेक्षणः पद्मयोनिः प्रभावानमरः प्रभुः। सुमूर्तिः सुमतिः सोमो गोविन्दो जगदादिजः॥६१॥ पीतवासाः कृष्णवासा दिग्वासास्त्विन्द्रयातिगः।

अतीन्द्रियोऽनेकरूपः स्कन्दः परपुरञ्जयः॥६२॥

शक्तिमाञ्जलधृग्भास्वान् मोक्षहेतुरयोनिजः। सर्वदर्शी जितादर्शो दुःस्वप्नाशुभनाशनः॥६३॥

माङ्गल्यकर्ता तरणिर्वेगवान् कश्मलापहः। स्पष्टाक्षरो महामन्त्रो विशाखो यजनप्रियः॥६४॥

विश्वकर्मा महाशक्तिर्युतिरीशो विहङ्गमः।

विचक्षणो दक्ष इन्द्रः प्रत्यूषः प्रियदर्शनः॥६५॥

अखिन्नो वेदनिलयो वेदविद्विदिताशयः।

प्रभाकरो जितरिपुः सुजनोऽरुणसारिथः॥६६॥

कुनाशी सुरतः स्कन्दो महितोऽभिमतो गुरुः।

ग्रहराजो ग्रहपतिर्ग्रहनक्षत्रमण्डलः॥६७॥

भास्करः सततानन्दो नन्दनो नरवाहनः। मङ्गलोऽथ मङ्गलवान् माङ्गल्यो मङ्गलावहः॥६८॥

मङ्गल्यचारुचरितः शीर्णः सर्वव्रतो व्रती। चतुर्मुखः पद्ममाली पूतात्मा प्रणतार्तिहा॥६९॥

अकिञ्चनः सतामीशो निर्गुणो गुणवाञ्छुचिः। सम्पूर्णः पुण्डरीकाक्षो विधेयो योगतत्परः॥७०॥ सहस्रांशुः कतुमतिः सर्वज्ञः सुमतिः सुवाक्। सुवाहनो माल्यदामा कृताहारो हरिप्रियः॥७१॥ ब्रह्मा प्रचेताः प्रथितः प्रयतात्मा स्थिरात्मकः। श्वातविन्दुः शतमुखो गरीयाननलप्रभः॥७२॥ धीरो महत्तरो विप्रः पुराणपुरुषोत्तमः। विद्याराजाधिराजो हि विद्यावान् भूतिदः स्थितः॥७३॥ अनिर्देश्यवपुः श्रीमान् विपाप्मा बहुमङ्गलः। स्वःस्थितः सुरथः स्वर्णो मोक्षदो बलिकेतनः॥७४॥ निर्द्वन्द्वो द्वन्द्वहा सर्गः सर्वगः सम्प्रकाशकः। द्यालुः सूक्ष्मधीः क्षान्तिः क्षेमाक्षेमस्थितिप्रियः॥७५॥ भूधरो भूपतिर्वक्ता पवित्रात्मा त्रिलोचनः। महावराहः प्रियकृदाता भोक्ताऽभयप्रदः॥७६॥ चकवर्ती धृतिकरः सम्पूर्णोऽथ महेश्वरः। चतुर्वेद्धरोऽचिन्त्यो विनिन्द्यो विविधाशनः॥७७॥

विचित्ररथ एकाकी सप्तसप्तिः परात्परः। सर्वोदधिस्थितिकरः स्थितिस्थेयः स्थितिप्रियः॥७८॥ निष्कलः पुष्कलो विभुर्वसुमान् वासवप्रियः। पशुमान् वासवस्वामी वसुधामा वसुप्रदः॥७९॥ बलवान् ज्ञानवांस्तत्त्वमोङ्कारस्त्रिषु संस्थितः। सङ्कल्पयोनिर्दिनकुद्भगवान् कारणापहः॥८०॥ नीलकण्ठो धनाध्यक्षश्चतुर्वेदप्रियंवदः। वषद्कारोद्गाता होता स्वाहाकारो हुताहुतिः॥८१॥ जनार्दनो जनानन्दो नरो नारायणोऽम्बुदः। सन्देहनाशनो वायुर्धन्वी सुरनमस्कृतः॥८२॥ विग्रही विमलो विन्दुर्विशोको विमलद्युतिः। द्युतिमान् द्योतनो विद्युद्विद्यावान् विदितो बली॥८३॥ घर्मदो हिमदो हासः कृष्णवर्त्मा सुताजितः। सावित्रीभावितो राजा विश्वामित्रो घृणिर्विराट् ॥८४॥ सप्तार्चिः सप्ततुरगः सप्तलोकनमस्कृतः। सम्पूर्णोऽथ जगन्नाथः सुमनाः शोभनप्रियः॥८५॥

सर्वात्मा सर्वकृत् सृष्टिः सप्तिमान् सप्तमीप्रियः। सुमेधा मेधिको मेध्यो मेधावी मधुसूद्नः॥८६॥ अङ्गिरःपतिः कालज्ञो धूमकेतुः सुकेतनः। सुखी सुखप्रदः सौख्यं कामी कान्तिप्रियो मुनिः॥८७॥

सन्तापनः सन्तपन आतपः तपसां पतिः। उमापतिः सहस्रांशुः प्रियकारी प्रियङ्करः॥८८॥

प्रीतिर्विमन्युरम्भोत्थः खञ्जनो जगतां पितः। जगत्पिता प्रीतमनाः सर्वः खर्वो गुहोऽचलः॥८९॥ सर्वगो जगदानन्दो जगन्नेता सुरारिहा। श्रेयः श्रेयस्करो ज्यायान् महानुत्तम उद्भवः॥९०॥

उत्तमो मेरुमेयोऽथ धरणो धरणीधरः। धराध्यक्षो धर्मराजो धर्माधर्मप्रवर्तकः॥९१॥ रथाध्यक्षो रथगतिस्तरुणस्तनितोऽनलः। उत्तरोऽनुत्तरस्तापी अवाक्पतिरपां पतिः॥९२॥ पुण्यसङ्कीर्तनः पुण्यो हेतुर्लोकत्रयाश्रयः।

पुण्यसङ्कातनः पुण्या हतुलाकत्रयाश्रयः। स्वर्भानुर्विगतानन्दो विशिष्टोत्कृष्टकर्मकृत् ॥९३॥

व्याधिप्रणाशनः क्षेमः शूरः सर्वजितां वरः। एकरथो रथाधीराः पिता रानैश्चरस्य हि॥९४॥ वैवस्वतगुरुर्मृत्युर्धर्मनित्यो महाव्रतः। प्रलम्बहारसञ्चारी प्रद्योतो द्योतितानलः ॥९५॥ सन्तापहृत् परो मन्त्रो मन्त्रमूर्तिर्महाबलः। श्रेष्ठात्मा सुप्रियः शम्भुर्मरुतामीश्वरेश्वरः॥९६॥ संसारगतिविच्छेता संसारार्णवतारकः। सप्तजिह्नः सहस्राचीं रत्नगर्भोऽपराजितः॥९७॥ धर्मकेतुरमेयात्मा धर्माधर्मवरप्रदः। लोकसाक्षी लोकगुरुलीकेशश्चण्डवाहनः॥९८॥ धर्मयूपो यूपवृक्षो धनुष्पाणिर्धनुर्धरः। पिनाकधृड्महोत्साहो महामायो महाशनः॥९९॥ वीरः शक्तिमतां श्रेष्ठः सर्वशस्त्रभृतां वरः। ज्ञानगम्यो दुराराध्यो लोहिताङ्गो विवर्धनः॥१००॥ खगोऽन्धो धर्मदो नित्यो धर्मकृचित्रविक्रमः। भगवानात्मवान् मन्त्रस्त्र्यक्षरो नीललोहितः॥१०१॥

एकोऽनेकस्त्रयी कालः सविता समितिञ्जयः। शार्क्षधन्वाऽनलो भीमः सर्वप्रहरणायुधः॥१०२॥ सुकर्मा परमेष्ठी च नाकपाली दिविस्थितः। वदान्यो वासुकिवैँद्य आत्रेयोऽथ पराक्रमः॥ १०३॥ द्वापरः परमोदारः परमो ब्रह्मचर्यवान् । उदीच्यवेषो मुकुटी पद्महस्तो हिमांशुभृत् ॥१०४॥ सितः प्रसन्नवदनः पद्मोदरनिभाननः। सायं दिवा दिव्यवपुरनिर्देश्यो महालयः॥१०५॥ महारथो महानीशः शेषः सत्त्वरजस्तमः। धृतातपत्रप्रतिमो विमर्षी निर्णयः स्थितः॥१०६॥ अहिंसकः शुद्धमतिरद्वितीयो विवर्धनः। सर्वदो धनदो मोक्षो विहारी बहुदायकः॥ १०७॥ चारुरात्रिहरो नाथो भगवान सर्वगोऽव्ययः। मनोहरवपुः शुभ्रः शोभनः सुप्रभावनः॥१०८॥ सुप्रभावः सुप्रतापः सुनेत्रो दिग्विदिक्पतिः। राज्ञीप्रियः राब्दकरो ग्रहेशस्तिमिरापहः॥१०९॥

सैंहिकेयरिपुर्देवो वरदो वरनायकः। चतुर्भुजो महायोगी योगीश्वरपतिस्तथा॥११०॥ अनादिरूपोऽदितिजो रत्नकान्तिः प्रभामयः। जगत्प्रदीपो विस्तीर्णो महाविस्तीर्णमण्डलः॥१११॥ एकचकरथः स्वर्णरथः स्वर्णशरीरधृक्। निरालम्बो गगनगो धर्मकर्मप्रभावकृत् ॥११२॥ धर्मात्मा कर्मणां साक्षी प्रत्यक्षः परमेश्वरः। मेरुसेवी सुमेधावी मेरुरक्षाकरो महान् ॥११३॥ आधारभूतो रतिमांस्तथा च धनधान्यकृत् । पापसन्तापहर्ता मनोवाञ्छितदायकः॥११४॥ रोगहर्ता राज्यदायी रमणीयगुणोऽनृणी। कालत्रयानन्तरूपो मुनिवृन्दनमस्कृतः॥११५॥ सन्ध्यारागकरः सिद्धः सन्ध्यावन्दनवन्दितः। साम्राज्यदाननिरतः समाराधनतोषवान् ॥११६॥ भक्तदुःखक्षयकरो भवसागरतारकः। भयापहर्ता भगवानप्रमेयपराक्रमः। मनुस्वामी मनुपतिर्मान्यो मन्वन्तराधिपः॥११७॥

॥ फलश्रुतिः ॥

एतत्ते सर्वमाख्यातं यन्मां त्वं परिपृच्छिसि। नाम्नां सहस्रं सवितुः पाराशर्यो यदाह मे॥१॥ धन्यं यशस्यमायुष्यं दुःखदुःस्वप्ननाशनम् । बन्धमोक्षकरं चैव भानोर्नामानुकीर्तनात् ॥२॥ यस्त्वदं शृणुयान्नित्यं पठेद्वा प्रयतो नरः। अक्षयं सुखमन्नाद्यं भवेत्तस्योपसाधितम् ॥३॥ नुपाग्नितस्करभयं व्याधितो न भयं भवेत् । विजयी च भवेन्नित्यमाश्रयं परमाप्नुयात् ॥४॥ कीर्तिमान् सुभगो विद्वान् स सुखी प्रियद्र्शनः। सर्वव्याधिविवर्जितः॥५॥ जीवेद्वर्षशतायुश्च नाम्नां सहस्रमिदमंशुमतः पठेद्यः प्रातः शुचिर्नियमवान् सुसमृद्धियुक्तः। दूरेण तं परिहरन्ति सदैव रोगाः भूताः सुपर्णमिव सर्वमहोरगेन्द्राः॥६॥ ॥ इति श्री भविष्यपुराणे सप्तमकल्पे श्रीभगवत्सूर्यस्य

सहस्रनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ शिवमानसपूजा॥

रहैः कित्पतमासनं हिमजलैः स्नानं च दिव्याम्बरम् नानारत्नविभूषितं मृगमदामोदाङ्कितं चन्दनम् । जातीचम्पकबिल्वपत्ररचितं पुष्पं च धूपं तथा दीपं देव दयानिधे पशुपते हृत्किल्पतं गृह्यताम् ॥१॥

सौवर्णे नवरत्नखण्डरिचते पात्रे घृतं पायसम् भक्ष्यं पञ्चविधं पयोद्धियुतं रम्भाफलं पानकम् । शाकानामयुतं जलं रुचिकरं कर्पूरखण्डोज्ज्वलम् ताम्बूलं मनसा मया विरचितं भक्त्या प्रभो स्वीकुरु॥२॥

छत्रं चामरयोर्युगं व्यजनकं चादर्शकं निर्मलम् वीणाभेरिमृदङ्गकाहलकला गीतं च नृत्यं तथा। साष्टाङ्गं प्रणितः स्तुतिर्बहुविधा ह्येतत् समस्तं मया सङ्कल्पेन समर्पितं तव विभो पूजां गृहाण प्रभो॥३॥ आत्मा त्वं गिरिजा मितः सहचराः प्राणाः शरीरं गृहम् पूजा ते विषयोपभोगरचना निद्रा समाधिस्थितिः। सञ्चारः पदयोः प्रदक्षिणविधिः स्तोत्राणि सर्वा गिरो-यद्यत्कर्म करोमि तत्तद्खिलं शम्भो तवऽऽराधनम् ॥४॥

> करचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा श्रवणनयनजं वा मानसं वाऽपराधम् । विहितमविहितं वा सर्वमेतत् क्षमस्व जय जय करुणाब्धे श्रीमहादेव शम्भो॥५॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचिता श्रीशिवमानसपूजा सम्पूर्णा॥

॥ शिवप्रातःस्मरणस्तोत्रम्॥

प्रातः स्मरामि भवभीतिहरं सुरेशम् गङ्गाधरं वृषभवाहनमम्बिकेशम् । खद्वाङ्गशूलवरदाभयहस्तमीशम् संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम् ॥१॥ प्रातर्नमामि गिरिशं गिरिजार्धदेहम् सर्गस्थितिप्रलयकारणमादिदेवम् । विश्वेश्वरं विजितविश्वमनोभिरामम् संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम् ॥२॥ प्रातर्भजामि शिवमेकमनन्तमाद्यम् वेदान्तवेद्यमनघं पुरुषं महान्तम् । नामादिभेदरहितं षङ्गावशून्यम् संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम् ॥३॥ ॥इति श्री शिवप्रातःस्मरणस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ शिवाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्॥ ॥ध्यानम्॥

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतिगरिनिमं चारुचन्द्रावतंसम् रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम् । पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानम् विश्वाद्यं विश्वबीजं निखिलभयहरं पश्चवक्रं त्रिनेत्रम् ॥

॥स्तोत्रम्॥

शिवो महेश्वरः शम्भुः पिनाकी शशिशेखरः।

वामदेवो विरूपाक्षः कपर्दी नीललोहितः॥१॥

राङ्करः राूलपाणिश्च खद्वाङ्गी विष्णुवल्लभः।

शिपिविष्टोऽम्बिकानाथः श्रीकण्ठो भक्तवत्सलः॥२॥

भवः शर्वस्त्रिलोकेशः शितिकण्ठः शिवाप्रियः।

उग्रः कपालिः कामारिरन्धकासुरसूदनः॥३॥

गङ्गाधरो ललाटाक्षः कालकालः कृपानिधिः।

भीमः परशुहस्तश्च मृगपाणिर्जटाधरः॥४॥

कैलासवासी कवची कठोरस्त्रिपुरान्तकः। वृषाङ्को वृषभारूढो भस्मोद्गूलितविग्रहः॥५॥

सामप्रियः स्वरमयस्त्रयीमूर्तिरनीश्वरः। सर्वज्ञः परमात्मा च सोमसूर्याग्निलोचनः॥६॥

हविर्यज्ञमयः सोमः पञ्चवऋः सदाशिवः। विश्वेश्वरो वीरभद्रो गणनाथः प्रजापतिः॥७॥

हिरण्यरेता दुर्धर्षो गिरीशो गिरिशोऽनघः। भुजङ्गभूषणो भर्गो गिरिधन्वा गिरिप्रियः॥८॥ कृत्तिवासाः पुरारातिर्भगवान् प्रमथाधिपः। मृत्युञ्जयः सूक्ष्मतनुर्जगद्यापी जगद्गुरुः॥९॥ व्योमकेशो महासेनजनकश्चारुविक्रमः। रुद्रो भूतपतिः स्थाणुरहिर्बुध्यो दिगम्बरः॥१०॥ अष्टमूर्तिरनेकात्मा सात्त्विकः शुद्धविग्रहः। शाश्वतः खण्डपरशुरजपाशविमोचकः॥११॥ मुडः पशुपतिर्देवो महादेवोऽव्ययः प्रभुः। पुषदन्तभिदव्ययो दक्षाध्वरहरो हरः॥१२॥ भगनेत्रभिदव्यक्तः सहस्राक्षः सहस्रपात् । अपवर्गप्रदोऽनन्तस्तारकः परमेश्वरः॥१३॥

॥फलश्रुतिः॥

इमानि दिव्यनामानि जप्यन्ते सर्वदा मया। नामकल्पलतेयं मे सर्वाभीष्टप्रदायिनि॥१४॥ नामान्येतानि सुभगे शिवदानि न संशयः।
वेदसर्वस्वभूतानि नामान्येतानि वस्तुतः॥१५॥
एतानि यानि नामानि तानि सर्वार्थदान्यतः।
जप्यन्ते सादरं नित्यं मया नियमपूर्वकम् ॥१६॥
वेदेषु शिवनामानि श्रेष्ठान्यघहराणि च।
सन्त्यनन्तानि सुभगे वेदेषु विविधेष्वपि॥१७॥
तेभ्यो नामानि सङ्गृद्य कुमाराय महेश्वरः।
अष्टोत्तरसहस्रं तु नाम्नामुपदिशत् पुरा॥१८॥
॥इति शाक्तप्रमोदे श्रीशिवाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ उमामहेश्वरस्तोत्रम्॥

नमः शिवाभ्यां नवयौवनाभ्याम् परस्पराश्चिष्टवपुर्धराभ्याम् नगेन्द्रकन्यावृषकेतनाभ्याम् नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम् ॥१॥ नमः शिवाभ्यां सरसोत्सवाभ्याम् नमस्कृताभीष्टवरप्रदाभ्याम् । नारायणेनार्चितपादुकाभ्याम् नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम् ॥२॥ नमः शिवाभ्यां वृषवाहनाभ्याम् विरिश्चिविष्ण्वन्द्रसुपूजिताभ्याम् । विभूतिपाटीरविलेपनाभ्याम् नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम् ॥३॥ नमः शिवाभ्यां जगदीश्वराभ्याम् जगत्पतिभ्यां जयविग्रहाभ्याम् । जम्भारिमुख्यैरभिवन्दिताभ्याम् नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम् ॥४॥

नमः शिवाभ्यां परमौषधाभ्याम् पञ्चाक्षरी-पञ्जररञ्जिताभ्याम् । प्रपञ्च-सृष्टि-स्थिति-संहृताभ्याम् नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम् ॥५॥

नमः शिवाभ्यामितसुन्दराभ्याम् अत्यन्तमासक्तहृदम्बुजाभ्याम् । अशेषलोकैकहितङ्कराभ्याम् नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम् ॥६॥

नमः शिवाभ्यां किलनाशनाभ्याम् कङ्कालकल्याणवपुर्धराभ्याम् । कैलासशैलस्थितदेवताभ्याम् नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम् ॥७॥

नमः शिवाभ्यामशुभापहाभ्याम् अशेषलोकैकविशेषिताभ्याम् । अकुण्ठिताभ्यां स्मृतिसम्भृताभ्याम् नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम् ॥८॥ नमः शिवाभ्यां रथवाहनाभ्याम् रवीन्दुवैश्वानरलोचनाभ्याम् । राका-शशाङ्काभ-मुखाम्बुजाभ्याम् नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम् ॥९॥

नमः शिवाभ्यां जिटलन्धराभ्याम् जरामृतिभ्यां च विवर्जिताभ्याम् । जनार्दनाङ्गोद्भवपूजिताभ्याम् नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम् ॥१०॥

नमः शिवाभ्यां विषमेक्षणाभ्याम् बिल्वच्छदामिक्ठकदामभृद्भ्याम् । शोभावती-शान्तवतीश्वराभ्याम् नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम् ॥११॥

नमः शिवाभ्यां पशुपालकाभ्याम् जगत्रयीरक्षण-बद्धहृद्भ्याम् । समस्तदेवासुरपूजिताभ्याम् नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम् ॥१२॥ स्तोत्रं त्रिसन्थ्यं शिवपार्वतीभ्याम् भक्त्या पठेद्-द्वादशकं नरो यः। स सर्वसौभाग्य-फलानि भुङ्के शतायुरन्ते शिवलोकमेति॥१३॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं श्री उमामहेश्वरस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ अर्धनारीश्वर अष्टकम्॥

चाम्पेयगौरार्ध-शरीरकायै
कर्पूरगौरार्ध-शरीरकाय ।
धिम्मिल्लकायै च जटाधराय
नमः शिवायै च नमः शिवाय॥१॥

कस्तूरिकाकुङ्कमचर्चितायै चितारजःपुञ्जविचर्चिताय । कृतस्मरायै विकृतस्मराय नमः शिवायै च नमः शिवाय॥२॥ झणत्कणत्कङ्कण-नूपुरायै पादाज्जराजत्-फणिनूपुराय । हेमाङ्गदायै च भुजङ्गदाय नमः शिवायै च नमः शिवाय॥३॥

विशालनीलोत्पललोचनायै विकासिपङ्केरुहलोचनाय । समेक्षणायै विषमेक्षणाय नमः शिवायै च नमः शिवाय॥४॥

मन्दारमालाकितालकायै
कपालमालाङ्कितकन्धराय ।
दिव्याम्बरायै च दिगम्बराय
नमः शिवायै च नमः शिवाय॥५॥

अम्भोधरश्यामलकुन्तलायै तटित्प्रभाताम्रजटाधराय । निरीश्वरायै निखिलेश्वराय नमः शिवायै च नमः शिवाय॥६॥ प्रपञ्चसृष्ट्यन्मुखलास्यकायै समस्तसंहारकताण्डवाय । जगज्जनन्यै जगदेकपित्रे नमः शिवायै च नमः शिवाय॥७॥

प्रदीप्तरत्नोज्ज्वलकुण्डलायै
स्फुरन्महापन्नगभूषणाय ।
शिवान्वितायै च शिवान्विताय
नमः शिवायै च नमः शिवाय॥८॥

एतत्पठेदष्टकिमिष्टदं यो भक्त्या स मान्यो भुवि दीर्घजीवी। प्राप्तोति सौभाग्यमनन्तकालम् भूयात् सदा तस्य समस्तिसिद्धिः॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं श्री अर्धनारीश्वर अष्टकं सम्पूर्णम्॥

॥ शिवशिवास्तुतिः॥

नमो नमस्ते गिरिशाय तुभ्यम् नमो नमस्ते गिरिकन्यकायै। नमो नमस्ते वृषभध्वजाय सिंहध्वजायै च नमो नमस्ते॥१॥ नमो नमो भूतिविभूषणाय नमो नमश्चन्दनरूषितायै। नमो नमः फालविलोचनाय नमो नमः पद्मविलोचनायै॥२॥ त्रिशूलहस्ताय नमो नमस्ते नमो नमः पद्मलसत्करायै। नमो नमो दिग्वसनाय तुभ्यम् चित्राम्बरायै च नमो नमस्ते॥३॥ चन्द्रावतंसाय नमो नमस्ते नमोऽस्तु चन्द्राभरणाञ्चितायै। नमः सुवर्णाङ्कितकुण्डलाय नमोऽस्तु रत्नोज्ज्वलकुण्डलायै॥४॥ नमोऽस्तु ताराग्रहमालिकाय नमोऽस्तु हारान्वितकन्धरायै। सुवर्णवर्णाय नमो नमस्ते नमः सुवर्णाधिकसुन्दरायै॥५॥

नमो नमस्ते त्रिपुरान्तकाय नमो नमस्ते मधुनाशनायै। नमो नमस्त्वन्धकसूदनाय नमो नमः कैटभसूदनायै॥६॥

नमो नमो ज्ञानमयाय नित्यम् नमश्चिदानन्दघनप्रदाये । नमो जटाजूटविराजिताय नमोऽस्तु वेणीफणिमण्डिताये॥७॥

नमोऽस्तु कर्पूरसाकराय नमो लसत्कुङ्कममण्डितायै। नमोऽस्तु बिल्वाम्रफलार्चिताय नमोऽस्तु कुन्दप्रसवार्चितायै॥८॥ नमो जगन्मण्डलमण्डनाय नमो मणिभ्राजितमण्डनायै। नमोऽस्तु वेदान्तगणस्तुताय नमोऽस्तु विश्वेश्वरसंस्तुतायै॥९॥

नमोऽस्तु सर्वामरपूजिताय नमोऽस्तु पद्मार्चितपादुकायै। नमः शिवालिङ्गितविग्रहाय नमः शिवालिङ्गितविग्रहायै॥१०॥

नमो नमस्ते जनकाय नित्यम् नमो नमस्ते गिरिजे जनन्यै। नमो नमोऽनङ्गहराय नित्यम् नमो नमोऽनङ्गविवर्धनायै॥११॥

नमो नमस्तेऽस्तु विषाशनाय नमो नमस्तेऽस्तु सुधाशनायै। नमो नमस्तेऽस्तु महेश्वराय श्रीचन्दने देवि नमो नमस्ते॥१२॥ ॥ इति श्रीमत्कार्तिकेयविरचितः श्री शिवशिवास्तुतिः सम्पूर्णः॥

॥ मीनाक्षीपञ्चरत्नम्॥

उद्यद्भानु-सहस्रकोटिसदृशां केयूरहारोज्ज्वलाम् बिम्बोष्ठीं स्मितद्न्तपङ्किरुचिरां पीताम्बरालङ्कृताम् । विष्णुब्रह्मसुरेन्द्रसेवितपदां तत्त्वस्वरूपां शिवाम् मीनाक्षीं प्रणतोऽस्मि सन्ततमहं कारुण्यवारान्निधिम् ॥१॥

मुक्ताहारलसिक्तरीटरुचिरां पूर्णेन्दुवऋप्रभाम् शिञ्जन्नूपुरिकिङ्किणीमणिधरां पद्मप्रभाभासुराम् । सर्वाभीष्टफलप्रदां गिरिसुतां वाणीरमासेविताम् मीनाक्षीं प्रणतोऽस्मि सन्ततमहं कारुण्यवारान्निधिम् ॥२॥

श्रीविद्यां शिववामभागनिलयां हीङ्कारमन्त्रोज्वलाम् श्रीचक्राङ्कित-बिन्दुमध्यवसतीं श्रीमत्सभानायकीम् । श्रीमद्वण्मुखविघ्नराजजननीं श्रीमज्जगन्मोहिनीम् मीनाक्षीं प्रणतोऽस्मि सन्ततमहं कारुण्यवारान्निधिम् ॥३॥ श्रीमत्सुन्दरनायकीं भयहरां ज्ञानप्रदां निर्मलाम् श्र्यामाभां कमलासनार्चितपदां नारायणस्यानुजाम् । वीणावेणुमृदङ्गवाद्यरिसकां नानाविधाडाम्बिकाम् मीनाक्षीं प्रणतोऽस्मि सन्ततमहं कारुण्यवारान्निधिम् ॥४॥

नानायोगिमुनीन्द्रहृन्निवसतीं नानार्थसिद्धिप्रदाम् नानापुष्पविराजिताङ्कियुगलां नारायणेनार्चिताम् । नादब्रह्ममयीं परात्परतरां नानार्थतत्त्वात्मिकाम् मीनाक्षीं प्रणतोऽस्मि सन्ततमहं कारुण्यवारान्निधिम् ॥५॥ ॥इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं श्री मीनाक्षीपञ्चरत्नं सम्पूर्णम्॥

॥ षष्ठीदेवी स्तोत्रम्॥

प्रियव्रत उवाच

नमो देव्यै महादेव्यै सिद्ध्यै शान्त्यै नमो नमः। शुभायै देवसेनायै षष्टीदेव्यै नमो नमः॥१॥

वरदायै पुत्रदायै धनदायै नमो नमः। सुखदायै मोक्षदायै षष्ठीदेव्यै नमो नमः॥२॥

शक्तेः षष्ठांशरूपायै सिद्धायै च नमो नमः। मायाये सिद्धयोगिन्ये षष्ठीदेव्ये नमो नमः॥३॥ पाराये पारदाये च षष्ठीदेव्ये नमो नमः। सारायै सारदायै च पारायै सर्वकर्मणाम् ॥४॥ बालाधिष्टातदेव्यै च षष्ठीदेव्यै नमो नमः। कल्याणदायै कल्याण्ये फलदायै च कर्मणाम् । प्रत्यक्षायै च भक्तानां षष्टीदेव्यै नमो नमः॥५॥ पूज्यायै स्कन्दकान्तायै सर्वेषां सर्वकर्मसु। देवरक्षणकारिण्यै षष्ठीदेव्यै नमो नमः॥६॥ शुद्धसत्त्वस्वरूपायै वन्दितायै नृणां सदा। हिंसाकोधैर्वर्जितायै षष्ठीदेव्यै नमो नमः॥७॥ धनं देहि प्रियां देहि पुत्रं देहि सुरेश्वरि। धर्मं देहि यशो देहि षष्ठीदेव्यै नमो नमः॥८॥ भूमिं देहि प्रजां देहि देहि विद्यां सुपूजिते। कल्याणं च जयं देहि षष्ठीदेव्यै नमो नमः॥९॥ इति देवीं च संस्त्रय लेभे पुत्रं प्रियव्रतः। यशस्विनं च राजेन्द्रं षष्टीदेवीप्रसादतः॥१०॥

षष्ठीस्तोत्रमिदं ब्रह्मण् यः शृणोति च वत्सरम् । अपुत्रो लभते पुत्रं वरं सुचिरजीवनम् ॥११॥ वर्षमेकं च या भक्त्या संयतेदं शृणोति च। सर्वपापाद्विनिर्मुक्ता महावन्ध्या प्रसूयते॥१२॥ वीरपुत्रं च गुणिनं विद्यावन्तं यशस्विनम् । सुचिरायुष्मन्तमेव षष्ठीमातृप्रसाद्तः॥१३॥ काकवन्थ्या च या नारी मृतापत्या च या भवेत्। वर्षं श्रुत्वा लभेत्पुत्रं षष्टीदेवीप्रसादतः॥१४॥ रोगयुक्ते च बाले च पिता माता शृणोति च। मासं च मुच्यते बालः षष्ठीदेवीप्रसादतः॥१५॥ ॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्तमहापुराणे प्रकृतिखण्डे श्री नारद-नारायण-संवादे षष्ट्यपाख्याने श्री प्रियव्रतविरचितं श्री षष्ठीदेवीस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ गौर्यष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्॥

गौरी गणेशजननी गिरिराजतन्द्भवा। गुहाम्बिका जगन्माता गङ्गाधरकुटुम्बिनी॥१॥

वीरभद्रप्रसूर्विश्वव्यापिनी विश्वरूपिणी। अष्टमूर्त्यात्मिका कष्टदारिद्यशमनी शिवा॥२॥ शाम्भवी शङ्करी बाला भवानी भद्रदायिनी। माङ्गल्यदायिनी सर्वमङ्गला मञ्जूभाषिणी॥३॥ महेश्वरी महामाया मन्त्राराध्या महाबला। हेमाद्रिजा हैमवती पार्वती पापनाशिनी॥४॥ नारायणांशजा नित्या निरीशा निर्मलाऽम्बिका। मृडानी मुनिसंसेव्या मानिनी मेनकात्मजा॥५॥ कुमारी कन्यका दुर्गा कलिदोषनिषूदिनी। कात्यायनी कृपापूर्णा कल्याणी कमलार्चिता॥६॥ सती सर्वमयी चैव सौभाग्यदा सरस्वती। अमलाऽमरसंसेव्या अन्नपूर्णाऽमृतेश्वरी॥७॥ अखिलागमसंसेव्या सुखसच्चित्सुधारसा। बाल्याराधितभूतेशा भानुकोटिसमद्युतिः॥८॥ हिरण्मयी परा सूक्ष्मा शीतांशुकृतशेखरा। हरिद्राकुङ्कमाराध्या सर्वकालसुमङ्गली॥९॥

सर्वबोधप्रदा सामशिखा वेदान्तलक्षणा। कर्मब्रह्ममयी कामकलना काङ्क्षितार्थदा॥१०॥ चन्द्राकायितताटङ्का चिदम्बरशरीरिणी। श्रीचक्रवासिनी देवी कला कामेश्वरप्रिया॥११॥ मारारातिप्रियार्घाङ्गी मार्कण्डेयवरप्रदा। पुत्रपौत्रप्रदा पुण्या पुरुषार्थप्रदायिनी॥१२॥ सत्यधर्मरता सर्वसाक्षिणी सर्वरूपिणी। रयामला बगला चण्डी मातृका भगमालिनी॥१३॥ शूलिनी विरजा स्वाहा स्वधा प्रत्यिङ्गराम्बिका। आर्या दाक्षायणी दीक्षा सर्ववस्तूत्तमोत्तमा॥१४॥ शिवाभिधाना श्रीविद्या प्रणवार्थस्वरूपिणी। हीङ्कारी नादरूपा च त्रिपुरा त्रिगुणेश्वरी। सुन्दरी स्वर्णगौरी च षोडशाक्षरदेवता॥१५॥ ॥ इति श्री गौर्यष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ अन्नपूर्णाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्॥

॥ध्यानम्॥

सिन्दूराभां त्रिनेत्राममृतशशिकलां खेचरीं रत्नवस्त्राम् पीनोत्तुङ्गस्तनाढ्यामभिनवविलसद्यौवनारम्भरम्याम् । नानालङ्कारयुक्तां सरसिजनयनामिन्दुसङ्कान्तमूर्तिम् देवीं पाशाङ्कशाढ्यामभयवरकरामन्नपूर्णां नमामि॥

॥स्तोत्रम्॥

वेदिवद्या महाविद्या विद्यादात्री विशारदा। कुमारी त्रिपुरा बाला लक्ष्मीः श्रीभेयहारिणी॥१॥ भवानी विष्णुजननी ब्रह्मादिजननी तथा। गणेशजननी शक्तिः कुमारजननी शुभा॥२॥ भोगप्रदा भगवती भक्ताभीष्टप्रदायिनी। भवरोगहरा भव्या शुभ्रा परममङ्गला॥३॥ भवानी चञ्चला गौरी चारुचन्द्रकलाधरा। विशालाक्षी विश्वमाता विश्ववन्द्या विलासिनी॥४॥

आर्या कल्याणनिलाया रुद्राणी कमलासना। शुभप्रदा शुभावर्ता वृत्तपीनपयोधरा॥५॥ अम्बा संहारमथनी मुडानी सर्वमङ्गला। विष्णुसंसेविता सिद्धा ब्रह्माणी सुरसेविता॥६॥ परमानन्ददा शान्तिः परमानन्दरूपिणी। परमानन्दजननी परानन्दप्रदायिनी॥७॥ परोपकारनिरता परमा भक्तवत्सला। पूर्णचन्द्राभवद्ना पूर्णचन्द्रनिभांशुका॥८॥ शुभलक्षणसम्पन्ना शुभानन्दगुणार्णवा। शुभसौभाग्यनिलया शुभदा च रतिप्रिया॥९॥ चण्डिका चण्डमथनी चण्डदर्पनिवारिणी। मार्ताण्डनयना साध्वी चन्द्राग्निनयना सती॥१०॥ पुण्डरीकहरा पूर्णा पुण्यदा पुण्यरूपिणी। मायातीता श्रेष्ठमाया श्रेष्ठधर्मात्मवन्दिता॥११॥ असृष्टिः सङ्गरहिता सृष्टिहेतुः कपर्दिनी। वृषारूढा शूलहस्ता स्थितिसंहारकारिणी॥१२॥

मन्दिस्मिता स्कन्दमाता शुद्धचित्ता मुनिस्तुता।
महाभगवती दक्षा दक्षाध्वरिवनाशिनी॥१३॥
सर्वार्थदात्री सावित्री सदाशिवकुटुम्बिनी।
नित्यसुन्दरसर्वाङ्गी सिच्चदानन्दलक्षणा॥१४॥
नाम्नामष्टोत्तरशतमम्बायाः पुण्यकारणम् ।
सर्वसौभाग्यसिद्धर्थं जपनीयं प्रयत्नतः॥१५॥
एतानि दिव्यनामानि श्रुत्वा ध्यात्वा निरन्तरम् ।
स्तुत्वा देवीं च सततं सर्वान् कामानवाग्नुयात् ॥१६॥
॥इति श्रीशिवरहस्ये श्री अन्नपूर्णाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ लिलतापञ्चरत्नम्॥

प्रातः स्मरामि लिलतावदनारविन्दम् बिम्बाधरं पृथुलमौक्तिकशोभिनासम् । आकर्णदीर्घनयनं मणिकुण्डलाढ्यम् मन्दिस्मतं मृगमदोज्ज्वलभालदेशम् ॥१॥

प्रातर्भजामि लिलताभुजकल्पवल्लीम् रत्नाङ्गुलीयलसदङ्गुलिपल्लवाढ्याम् । माणिक्यहेमवलयाङ्गदशोभमानाम् पुण्ड्रेक्षुचापकुसुमेषुसृणीर्द्धानाम् ॥२॥

प्रातर्नमामि लिलताचरणारविन्दम् भक्तेष्टदानिनरतं भवसिन्धुपोतम् । पद्मासनादिसुरनायकपूजनीयम् पद्माङ्कराध्वजसुदर्शनलाञ्छनाढ्यम् ॥३॥ प्रातः स्तुवे परिशवां लिलतां भवानीम् त्रय्यन्तवेद्यविभवां करुणानवद्याम् । विश्वस्य सृष्टिविलयस्थितिहेतुभूताम् विश्वेश्वरीं निगमवाङ्मनसातिदूराम् ॥४॥

प्रातर्वदामि लिलते तव पुण्यनाम कामेश्वरीति कमलेति महेश्वरीति। श्रीशाम्भवीति जगतां जननी परेति वाग्देवतेति वचसा त्रिपुरेश्वरीति॥५॥

यः श्लोकपञ्चकिमदं लिलताम्बिकायाः सौभाग्यदं सुलिलतं पठित प्रभाते। तस्मै ददाति लिलता झिटिति प्रसन्ना विद्यां श्रियं विमलसौख्यमनन्तकीर्तिम् ॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं श्री लिलतापञ्चरत्नं सम्पूर्णम्॥

॥ सुब्रह्मण्यभुजङ्गम्॥

सदा बालरूपाऽपि विघ्नादिहन्त्री महादन्तिवऋ।ऽपि पञ्चास्यमान्या। विधीन्द्रादिमृग्या गणेशाभिधा मे विधत्तां श्रियं काऽपि कल्याणमूर्तिः॥१॥ न जानामि शब्दं न जानामि चार्थं न जानामि पद्यं न जानामि गद्यम् । चिदेका षडास्य हृदि द्योतते मे मुखान्निःसरन्ते गिरश्चापि चित्रम् ॥२॥ मयूराधिरूढं महावाक्यगूढं मनोहारिदेहं महचित्तगेहम्। महीदेवदेवं महावेदभावं महादेवबालं भजे लोकपालम् ॥३॥ यदा सन्निधानं गता मानवा मे भवाम्भोधिपारं गतास्ते तदेव। इति व्यञ्जयन् सिन्धुतीरे य आस्ते तमीडे पवित्रं पराशक्तिपुत्रम् ॥४॥

यथाब्धेस्तरङ्गा लयं यन्ति तुङ्गाः तथैवापदः सन्निधौ सेवतां मे। इतीवोर्मिपङ्किर्नृणां दर्शयन्तं सदा भावये हृत्सरोजे गुहं तम् ॥५॥

गिरौ मन्निवासे नरा येऽधिरूढाः तदा पर्वते राजते तेऽधिरूढाः। इतीव ब्रुवन् गन्धशैलाधिरूढः स देवो मुदे मे सदा षण्मुखोऽस्तु॥६॥

महाम्भोधितीरे महापापचोरे मुनीन्द्रानुकूले सुगन्धाख्यशैले। गुहायां वसन्तं स्वभासा लसन्तं जनार्तिं हरन्तं श्रयामो गृहं तम् ॥७॥

लसत् स्वर्णगेहे नृणां कामदोहे सुमस्तोमसञ्छन्नमाणिक्यमञ्चे । समुद्यत् सहस्रार्कतुल्यप्रकाशं सदा भावये कार्तिकेयं सुरेशम् ॥८॥ रणद्वंसके मञ्जलेऽत्यन्तशोणे मनोहारिलावण्यपीयूषपूर्णे । मनःषद्दो मे भवक्षेशतप्तः सदा मोदतां स्कन्द ते पादपद्मे॥९॥

सुवर्णाभदिव्याम्बरैर्भासमानाम् कणत्किङ्किणीमेखलाशोभमानाम् । लसद्धेमपट्टेन विद्योतमानाम् कटिं भावये स्कन्द ते दीप्यमानाम् ॥ १०॥

पुलिन्देशकन्याघनाभोगतुङ्गः तनालिङ्गनासक्तकाश्मीररागम् । नमस्यामहं तारकारे तवोरः स्वभक्तावने सर्वदा सानुरागम् ॥११॥

विधौ क्रुप्तदण्डान् स्वलीलाधृताण्डान् निरस्तेभशुण्डान् द्विषत् कालदण्डान् । हतेन्द्रारिषण्डान् जगन्त्राणशौण्डान् सदा ते प्रचण्डान् श्रये बाहुदण्डान् ॥१२॥ सदा शारदाः षण्मृगाङ्का यदि स्युः समुद्यन्त एव स्थिताश्चेत् समन्तात् । सदा पूर्णिबम्बाः कलङ्केश्च हीनाः तदा त्वन्मुखानां ब्रुवे स्कन्द साम्यम् ॥१३॥

स्फुरन् मन्दहासैः सहंसानि चन्नत् कटाक्षावलीभृङ्गसङ्घोज्ज्वलानि । सुधास्यन्दिबिम्बाधरणीशसूनो तवऽऽलोकये षण्मुखाम्भोरुहाणि॥१४॥

विशालेषु कर्णान्तदीर्घेष्वजस्रं दयास्यन्दिषु द्वादशस्वीक्षणेषु। मयीषत्कटाक्षः सकृत् पातितश्चेत् भवेत्ते दयाशील का नाम हानिः॥१५॥

सुताङ्गोद्भवो मेऽसि जीवेति षङ्घा जपन् मन्त्रमीशो मुदा जिघ्नते यान् । जगद्भारभृद्धो जगन्नाथ तेभ्यः किरीटोज्ज्वलेभ्यो नमो मस्तकेभ्यः॥१६॥ स्फुरद्रत्नकेयूरहाराभिरामः चलत् कुण्डलश्रीलसद्गण्डभागः। कटौ पीतवासः करे चारुशक्तिः पुरस्तान्ममास्तां पुरारेस्तनूजः॥१७॥

इहऽऽयाहि वत्सेति हस्तान् प्रसार्यऽऽ-ह्वयत्यादराच्छङ्करे मातुरङ्कात् । समुत्पत्य तातं श्रयन्तं कुमारं हराश्चिष्टगात्रं भजे बालमूर्तिम् ॥१८॥

कुमारेशसूनो गुह स्कन्द सेना-पते शक्तिपाणे मयूराधिरूढ। पुलिन्दात्मजाकान्त भक्तार्तिहारिन् प्रभो तारकारे सदा रक्ष मां त्वम् ॥१९॥

प्रशान्तेन्द्रिये नष्टसंज्ञे विचेष्टे कफोद्गारिवक्रे भयोत्किम्पगात्रे। प्रयाणोन्मुखे मय्यनाथे तदानीं दुतं मे दयालो भवाग्रे गृह त्वम् ॥२०॥ कृतान्तस्य दूतेषु चण्डेषु कोपात् दहच्छिन्द्धि भिन्द्धीति मां तर्जयत्सु। मयूरं समारुद्य मा भैरिति त्वं पुरः शक्तिपाणिर्ममऽऽयाहि शीघ्रम् ॥२१॥

प्रणम्यासकृत्पादयोस्ते पतित्वा प्रसाद्य प्रभो प्रार्थयेऽनेकवारम् । न वक्तुं क्षमोऽहं तदानीं कृपाब्ये न कार्यान्तकाले मनागप्युपेक्षा॥२२॥

सहस्राण्डभोक्ता त्वया शूरनामा हतस्तारकः सिंहवऋश्च दैत्यः। ममान्तर्हदिस्थं मनःक्षेशमेकं न हंसि प्रभो किं करोमि क यामि॥२३॥

अहं सर्वदा दुःखभारावसन्नो
भवान् दीनबन्धुस्त्वदन्यं न याचे।
भवद्भक्तिरोधं सदा क्रुप्तबाधं
ममाधिं द्भृतं नाशयोमासुत त्वम् ॥२४॥

अपस्मारकुष्ठक्षयार्शः प्रमेह-ज्वरोन्मादगुल्मादिरोगा महान्तः। पिशाचाश्च सर्वे भवत् पत्रभूतिं विलोक्य क्षणात् तारकारे द्रवन्ते॥२५॥

दृशि स्कन्दमूर्तिः श्रुतौ स्कन्दकीर्तिः मुखे मे पवित्रं सदा तच्चरित्रम् । करे तस्य कृत्यं वपुस्तस्य भृत्यं गुहे सन्तु लीना ममाशेषभावाः॥२६॥

मुनीनामुताहो नृणां भक्तिभाजाम् अभीष्टप्रदाः सन्ति सर्वत्र देवाः। नृणामन्त्यजानामपि स्वार्थदाने गुहाद्देवमन्यं न जाने न जाने॥२७॥

कलत्रं सुता बन्धुवर्गः पशुर्वा नरो वाऽथ नारि गृहे ये मदीयाः। यजन्तो नमन्तः स्तुवन्तो भवन्तं स्मरन्तश्च ते सन्तु सर्वे कुमार॥२८॥ मृगाः पक्षिणो दंशका ये च दुष्टाः तथा व्याधयो बाधका ये मदङ्गे। भवच्छक्तितीक्ष्णाग्रभिन्नाः सुदूरे विनश्यन्तु ते चूर्णितकौञ्चशैले॥२९॥

जिनत्री पिता च स्वपुत्रापराधम् सहेते न किं देवसेनाधिनाथ। अहं चातिबालो भवान् लोकतातः क्षमस्वापराधं समस्तं महेश॥३०॥

नमः केकिने शक्तये चापि तुभ्यम् नमश्छाग तुभ्यं नमः कुक्कटाय। नमः सिन्धवे सिन्धुदेशाय तुभ्यम् पुनः स्कन्दमूर्ते नमस्ते नमोऽस्तु॥३१॥

जयानन्दभूमन् जयापारधामन् जयामोघकीर्ते जयानन्दमूर्ते। जयानन्दिसन्धो जयाशेषबन्धो जय त्वं सदा मुक्तिदानेशसूनो॥३२॥ भुजङ्गाख्यवृत्तेन क्कृप्तं स्तवं यः
पठेद्भक्तियुक्तो गुहं सम्प्रणम्य।
स पुत्रान् कलत्रं धनं दीर्घमायुः
लभेत् स्कन्दसायुज्यमन्ते नरः सः॥३३॥
॥इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं श्री सुब्रह्मण्यभुजङ्गं सम्पूर्णम्॥

॥ गुहपञ्चरत्नम्॥

ओङ्कारनगरस्थं तं निगमान्तवनेश्वरम्। नित्यमेकं शिवं शान्तं वन्दे गृहमुमासृतम्॥१॥ वाचामगोचरं स्कन्दं चिदुद्यानिवहारिणम्। गुरुमूर्तिं महेशानं वन्दे गृहमुमासृतम्॥२॥ सिचदनन्दरूपेशं संसारध्वान्तदीपकम्। सुब्रह्मण्यमनाद्यन्तं वन्दे गृहमुमासृतम्॥३॥ स्वामिनाथं द्यासिन्धं भवाब्येस्तारकं प्रभुम्। निष्कलङ्कं गुणातीतं वन्दे गृहमुमासृतम्॥४॥ निराकारं निराधारं निर्विकारं निरामयम्। निर्ह्वन्द्वं च निरालम्बं वन्दे गृहमुमासृतम्॥५॥

॥ इति श्री गुहपञ्चरत्नं सम्पूर्णम्॥

॥ सुब्रह्मण्यपश्चरत्नम्॥

षडाननं चन्दनलेपिताङ्गं महोरसं दिव्यमयूरवाहनम् । रुद्रस्य सूनुं सुरलोकनाथं ब्रह्मण्यदेवं शरणं प्रपद्ये॥१॥

जाज्वत्यमानं सुरवृन्दवन्द्यं कुमार-धारातट-मन्दिरस्थम् । कन्दर्परूपं कमनीयगात्रं ब्रह्मण्यदेवं शरणं प्रपद्ये॥२॥

द्विषङ्गुजं द्वादशिद्यनेत्रं त्रयीतनुं शूलमसीद्धानम् । शेषावतारं कमनीयरूपं ब्रह्मण्यदेवं शरणं प्रपद्ये॥३॥ सुरारिघोराहवशोभमानं सुरोत्तमं शक्तिधरं कुमारम् । सुधार-शक्त्वायुध-शोभिहस्तं ब्रह्मण्यदेवं शरणं प्रपद्ये॥४॥

इष्टार्थसिद्धिप्रदमीशपुत्रं मिष्टान्नदं भूसुरकामधेनुम् । गङ्गोद्भवं सर्वजनानुकूलं ब्रह्मण्यदेवं शरणं प्रपद्ये॥५॥

यः श्लोकपञ्चकिमदं पठतीह भक्त्या ब्रह्मण्यदेव-विनिवेशित-मानसः सन् । प्राप्नोति भोगमिखलं भुवि यद्यदिष्टम् अन्ते स गच्छिति मुदा गुहसाम्यमेव॥ ॥इति श्री सुब्रह्मण्यपञ्चरत्नं सम्पूर्णम्॥

॥ प्रज्ञाविवर्धन कार्तिकेय स्तोत्रम्॥

स्कन्द उवाच

योगीश्वरो महासेनः कार्तिकेयोऽग्निनन्दनः। स्कन्दः कुमारः सेनानीः स्वामी शङ्करसम्भवः॥१॥

गाङ्गेयस्ताम्रचूडश्च ब्रह्मचारी शिखिध्वजः। तारकारिरुमापुत्रः कौञ्चारिश्च षडाननः॥२॥

शब्दब्रह्मसमुद्रश्च सिद्धः सारस्वतो गुहः। सनत्कुमारो भगवान् भोगमोक्षफलप्रदः॥३॥

शरजन्मा गणाधीशपूर्वजो मुक्तिमार्गकृत् । सर्वागमप्रणेता च वाञ्छितार्थप्रदर्शनः॥४॥

अष्टाविंशतिनामानि मदीयानीति यः पठेत् । प्रत्यूषं श्रद्धया युक्तो मूको वाचस्पतिर्भवेत् ॥५॥

महामन्त्रमयानीति मम नामानुकीर्तनम् । महाप्रज्ञामवाप्नोति नात्र कार्या विचारणा॥६॥

॥ इति श्री रुद्रयामले प्रज्ञाविवर्धनाख्यं श्रीमत्कार्तिकेयस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ सुब्रह्मण्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्॥

स्कन्दो गुहः षण्मुखश्च फालनेत्रसुतः प्रभुः। पिङ्गलः कृत्तिकासूनुः शिखिवाहो द्विषङ्गुजः॥१॥

द्विषण्णेत्रः शक्तिधरः पिशिताशप्रभञ्जनः। तारकासुरसंहारी रक्षोबलविमर्दनः॥२॥

मत्तः प्रमत्तोन्मत्तश्च सुरसैन्यसुरक्षकः। देवसेनापतिः प्राज्ञः कृपालो भक्तवत्सलः॥३॥

उमासुतः शक्तिधरः कुमारः क्रौञ्चदारणः। सेनानीरग्निजन्मा च विशाखः शङ्करात्मजः॥४॥

शिवस्वामी गणस्वामी सर्वस्वामी सनातनः। अनन्तमूर्तिरक्षोभ्यः पार्वतीप्रियनन्दनः॥५॥

गङ्गासुतः शरोद्भूत आहूतः पावकात्मजः। जृम्भः प्रजृम्भ उज्जृम्भः कमलासनसंस्तुतः॥६॥

एकवर्णो द्विवर्णश्च त्रिवर्णः सुमनोहरः। चतुर्वर्णः पञ्चवर्णः प्रजापतिरहःपतिः॥७॥ अग्निगर्भः शमीगर्भो विश्वरेता सुरारिहा। हरिद्वर्णः शुभकरो वटुश्च पटुवेषभृत् ॥८॥

पूषा गभस्तिर्गहनश्चन्द्रवर्णः कलाधरः। मायाधरो महामायी कैवल्यः शङ्करात्मजः॥९॥

विश्वयोनिरमेयात्मा तेजोयोनिरनामयः। परमेष्ठी परब्रह्म वेदगर्भो विराद्वतः॥१०॥

पुलिन्दकन्याभर्ता च महासारस्वतावृतः। आश्रिताखिलदाता च चोरघ्नो रोगनाशनः॥११॥

अनन्तमूर्तिरानन्दः शिखण्डी-कृतकेतनः। डम्भः परमडम्भश्च महाडम्भो वृषाकपिः॥१२॥

कारणोत्पत्ति-देहश्च कारणातीत-विग्रहः। अनीश्वरोऽमृतः प्राणः प्राणायामपरायणः॥१३॥

विरुद्धहन्तो वीरघ्नो रक्तश्यामगलोऽपि च। सुब्रह्मण्यो गुहः प्रीतो ब्रह्मण्यो ब्राह्मणप्रियः। वंशवृद्धिकरो वेदवेद्योऽक्षयफलप्रदः॥१४॥

॥ इति श्री सुब्रह्मण्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ रामरक्षास्तोत्रम्॥

अस्य श्रीरामरक्षास्तोत्रमन्त्रस्य। बुधकौशिक ऋषिः। श्रीसीतारामचन्द्रो देवता। अनुष्टुप् छन्दः। सीता शक्तिः। श्रीमद्-हनुमान कीलकम्। श्रीरामचन्द्रप्रीत्यर्थे रामरक्षास्तोत्रजपे विनियोगः॥

॥ध्यानम्॥

ध्यायेदाजानुबाहुं धृतशरधनुषं बद्धपद्मासनस्थम् पीतं वासो वसानं नवकमलदलस्पर्धिनेत्रं प्रसन्नम् । वामाङ्कारूढ-सीतामुखकमलिमलल्लोचनं नीरदाभम् नानालङ्कारदीप्तं दधतमुरुजटामण्डनं रामचन्द्रम् ॥ चरितं रघुनाथस्य शतकोटि-प्रविस्तरम् । एकैकमक्षरं पुंसां महापातकनाशनम् ॥ ध्यात्वा नीलोत्पलश्यामं रामं राजीवलोचनम्

ध्यात्वा नालात्पलश्याम राम राजावलाचनम् जानकीलक्ष्मणोपेतं जटामुकुटमण्डितम् । सासितूणधनुर्बाणपाणिं नक्तञ्चरान्तकम् स्वलीलया जगत्वातुम् आविर्भूतम् अजं विभुम् ॥

रामरक्षां पठेत्प्राज्ञः पापघ्नीं सर्वकामदाम्॥ ॥कवचम्॥

शिरो मे राघवः पातु भालं दुशरथात्मजः। कौसल्येयो दशौ पातु विश्वामित्रप्रियः श्रुती॥१॥ घ्राणं पातु मखत्राता मुखं सौमित्रिवत्सलः। जिह्वां विद्यानिधिः पातु कण्ठं भरतवन्दितः॥२॥ स्कन्धौ दिव्यायुधः पातु भुजौ भग्नेशकार्मुकः। करौ सीतापतिः पातु हृदयं जामदृश्यजित् ॥३॥ मध्यं पातु खरध्वंसी नाभिं जाम्बवदाश्रयः। गुह्यं जितेन्द्रियः पातु पृष्टः पातु रघूत्तमः॥४॥ वक्षः पातु कबन्धारिः स्तनौ गीर्वाणवन्दितः। पार्श्वो कुलपतिः पातु कुक्षिमिक्ष्वाकुनन्दनः॥५॥ सुग्रीवेशः कटी पातु सिक्थनी हनुमत्प्रभुः। ऊरू रघूत्तमः पातु रक्षःकुलविनाशकृत् ॥६॥ जानुनी सेतुकृत् पातु जङ्घे दशमुखान्तकः। पादौ विभीषणश्रीदः पातु रामोऽखिलं वपुः॥७॥

एतां रामबलोपेतां रक्षां यः सुकृती पठेत्। स चिरायुः सुखी पुत्री विजयी विनयी भवेत् ॥८॥

पातालभूतलव्योमचारिणश्छद्मचारिणः । न द्रष्टुमपि शक्तास्ते रक्षितं रामनामभिः॥९॥

रामेति रामभद्रेति रामचन्द्रेति वा स्मरन् । नरो न लिप्यते पापैर्भुक्तिं मुक्तिं च विन्दति॥१०॥

जगजैत्रैकमन्त्रेण रामनाम्नाऽभिरक्षितम्। यः कण्ठे धारयेत्तस्य करस्थाः सर्वसिद्धयः॥११॥ वज्रपञ्जरनामेदं यो रामकवचं स्मरेत्। अव्याहताज्ञः सर्वत्र लभते जयमङ्गलम् ॥१२॥

आदिष्टवान् यथा स्वप्ने रामरक्षामिमां हरः। तथा लिखितवान् प्रातः प्रबुद्धो बुधकौशिकः॥१३॥

आरामः कल्पवृक्षाणां विरामः सकलापदाम् । अभिरामस्त्रिलोकानां रामः श्रीमान् स नः प्रभुः॥१४॥

तरुणौ रूपसम्पन्नौ सुकुमारौ महाबलौ। पुण्डरीकविशालाक्षौ चीरकृष्णाजिनाम्बरौ॥१५॥ फलमूलाशिनो दान्तौ तापसौ ब्रह्मचारिणौ। पुत्रौ दशरथस्यैतौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ॥१६॥ शरण्यौ सर्वसत्त्वानां श्रेष्ठौ सर्वधनुष्मताम् । रक्षः कुलनिहन्तारौ त्रायेतां नो रघूत्तमौ॥१७॥

आत्तसज्जधनुषाविषुस्पृशौ अक्षयाशुगनिषङ्गसङ्गिनौ। रक्षणाय मम रामलक्ष्मणौ अग्रतः पथि सदैव गच्छताम् ॥१८॥

सन्नद्धः कवची खङ्गी चापबाणधरो युवा। यच्छन्मनोरथोऽस्माकं रामः पातु सलक्ष्मणः॥१९॥

रामो दाशरिथः शूरो लक्ष्मणानुचरो बली। काकुतस्थः पुरुषः पूर्णः कौसल्येयो रघूत्तमः॥२०॥

वेदान्तवेद्यो यज्ञेशः पुराणपुरुषोत्तमः। जानकीवल्लभः श्रीमान् अप्रमेयपराक्रमः॥२१॥

इत्येतानि जपन्नित्यं मद्भक्तः श्रद्धयान्वितः। अश्वमेधाधिकं पुण्यं सम्प्राप्नोति न संशयः॥२२॥

॥ इति पद्मपुराणे वेदव्यासकृतौ भगवद्वसिष्ठ-श्रीबुधकौशिकप्रणीतं वज्रपञ्जरं नाम श्री रामकवचं सम्पूर्णम्॥ रामं दूर्वादलश्यामं पद्माक्षं पीतवाससम् । स्तुवन्ति नामभिर्दिव्यैर्न ते संसारिणो नरः॥१॥

रामं लक्ष्मणपूर्वजं रघुवरं सीतापतिं सुन्दरम् काकुत्स्थं करुणार्णवं गुणिनिधिं विप्रप्रियं धार्मिकम् । राजेन्द्रं सत्यसन्धं दशरथतनयं श्यामलं शान्तमूर्तिम् वन्दे लोकाभिरामं रघुकुलतिलकं राघवं रावणारिम् ॥२॥

> रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे। रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः॥३॥

श्रीराम राम रघुनन्दन राम राम श्रीराम राम भरतायज राम राम। श्रीराम राम रणकर्कश राम राम श्रीराम राम शरणं भव राम राम॥४॥

श्रीरामचन्द्रचरणौ मनसा स्मरामि श्रीरामचन्द्रचरणौ वचसा गृह्णामि। श्रीरामचन्द्रचरणौ शिरसा नमामि श्रीरामचन्द्रचरणौ शरणं प्रपद्ये॥५॥ माता रामो मित्पता रामचन्द्रः
स्वामी रामो मत्सखा रामचन्द्रः।
सर्वस्वं मे रामचन्द्रो दयालुः
नान्यं जाने नैव जाने न जाने॥६॥
दक्षिणे लक्ष्मणो यस्य वामे तु जनकात्मजा।
पुरतो मारुतिर्यस्य तं वन्दे रघुनन्दनम्॥७॥
लोकाभिरामं रणरङ्गधीरं राजीवनेत्रं रघुवंशनाथम्।
कारुण्यरूपं करुणाकरं तं श्रीरामचन्द्रं शरणं प्रपद्ये॥८॥
मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां विरिष्ठम्।

कूजन्तं राम रामेति मधुरं मधुराक्षरम् । आरुह्य कविताशाखां वन्दे वाल्मीकिकोकिलम् ॥१०॥

वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये॥९॥

आपदाम् अपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम् । लोकाभिरामं श्रीरामं भूयो भूयो नमाम्यहम् ॥११॥

भर्जनं भवबीजानाम् अर्जनं सुखसम्पदाम् । तर्जनं यमदूतानां राम रामेति गर्जनम् ॥१२॥ रामो राजमणिः सदा विजयते रामं रमेशं भजे रामेणाभिहता निशाचरचमू रामाय तस्मै नमः। रामान्नास्ति परायणं परतरं रामस्य दासोऽस्म्यहम् रामे चित्तलयः सदा भवतु मे भो राम मामुद्धर॥१३॥ राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे। सहस्रनाम तत्तुल्यं रामनाम वरानने॥१४॥ ॥श्री सीतारामचन्द्रार्पणमस्तु॥



मङ्गळम् कोसलेन्द्राय महनीयगुणाब्धये। चक्रवर्तितनूजाय सार्वभौमाय मङ्गलम्॥

॥ अहल्याकृत-रामस्तोत्रम्॥

अहल्योवाच अहो कृतार्थाऽस्मि जगन्निवास ते पादाज्जसंलग्नरजः कणादहम् । स्पृशामि यत्पद्मजशङ्करादिभिः विमृग्यते रन्धितमानसैः सदा॥१॥ अहो विचित्रं तव राम चेष्टितम् मनुष्यभावेन विमोहितं जगत्। चलस्यजस्रं चरणादिवर्जितः सम्पूर्ण आनन्दमयोऽतिमायिकः॥२॥

यत्पाद्पङ्कजपरागपवित्रगात्रा भागीरथी भवविरिञ्चिमुखान् पुनाति। साक्षात्स एव मम दृग्विषयो यदाऽऽस्ते किं वर्ण्यते मम पुराकृतभागधेयम् ॥३॥

मर्त्यावतारे मनुजाकृतिं हरिम् रामाभिधेयं रमणीयदेहिनम् । धनुर्धरं पद्मविशाललोचनम् भजामि नित्यं न परान् भजिष्ये ॥४॥

यत्पादपङ्कजरजः श्रुतिभिर्विमृग्यम् यन्नाभिपङ्कजभवः कमलासनश्च। यन्नामसाररसिको भगवान्पुरारिः तं रामचन्द्रमनिशं हृदि भावयामि॥५॥ यस्यावतारचरितानि विरिश्चिलोके गायन्ति नारदमुखा भवपद्मजाद्माः। आनन्दजाश्रुपरिषिक्तकुचाग्रसीमा वागीश्वरी च तमहं शरणं प्रपद्ये॥६॥

सोऽयं परात्मा पुरुषः पुराणः एषः स्वयं ज्योतिरनन्त आद्यः। मायातनुं लोकविमोहनीयाम् धत्ते परानुग्रह एष रामः॥७॥

अयं हि विश्वोद्भवसंयमानाम् एकः स्वमायागुणबिम्बितो यः। विरिञ्चिविष्ण्वीश्वरनामभेदान् धत्ते स्वतन्त्र परिपूर्ण आत्मा॥८॥

नमोऽस्तु ते राम तवाङ्किपङ्कजम् श्रिया घृतं वक्षसि लालितं प्रियात् । आक्रान्तमेकेन जगत्त्रयं पुरा ध्येयं मुनीन्द्रैरभिमानवर्जितैः॥९॥

जगतामादिभूतस्त्वं जगत्त्वं जगदाश्रयः। सर्वभूतेष्वसंयुक्त एको भाति भवान् परः॥१०॥ ओङ्कारवाच्यस्त्वं राम वाचामविषयः पुमान् । वाच्यवाचकभेदेन भवानेव जगन्मयः॥११॥ कार्यकारणकर्तृत्वफलसाधनभेदतः एको विभासि राम त्वं मायया बहुरूपया॥१२॥ त्वन्मायामोहितधियस्त्वां न जानन्ति तत्त्वतः। मानुषं त्वाऽभिमन्यन्ते मायिनं परमेश्वरम् ॥१३॥ आकाशवत्त्वं सर्वत्र बहिरन्तर्गतोऽमलः। असङ्गो ह्यचलो नित्यः शुद्धो बुद्धः सद्व्ययः॥१४॥ योषिन्मूढाऽहमज्ञाते तत्त्वं जाने कथं विभो। तस्मात्ते शतशो राम नमस्कुर्यामनन्यधीः॥१५॥ देव मे यत्रकुत्रापि स्थिताया अपि सर्वदा। त्वत्पादकमले सक्ता भक्तिरेव सदाऽस्तु मे॥१६॥ नमस्ते पुरुषाध्यक्ष नमस्ते भक्तवत्सल। नमस्तेऽस्तु हृषीकेश नारायण नमोऽस्तु ते॥१७॥

भवभयहरमेकं भानकोटिप्रकाशम् करधृतशरचापं कालमेघावभासम् । कनकरुचिरवस्त्रं रत्नवत्कुण्डलाड्यम् कमलविशदनेत्रं सानुजं राममीडे॥१८॥ स्तुत्वैवं पुरुषं साक्षाद्राघवं पुरतः स्थितम् । परिक्रम्य प्रणम्याशु सानुज्ञाता ययौ पतिम् ॥१९॥ अहल्यया कृतं स्तोत्रं यः पठेद्भक्तिसंयुतः। स मुच्यतेऽखिलैः पापैः परं ब्रह्माधिगच्छति॥२०॥ पुत्राद्यर्थे पठेद्भक्त्या रामं हृदि निधाय च। संवत्सरेण लभते वन्ध्या अपि सुपुत्रकम् ॥२१॥ सर्वान् कामानवाप्नोति रामचन्द्रप्रसादतः॥२२॥ ब्रह्मघ्नो गुरुतल्पगोऽपि पुरुषः स्तेयी सुरापोऽपि वा। मातृभ्रातृविहिंसकोऽपि सततं भोगैकबद्धादरः॥२३॥ नित्यं स्तोत्रमिदं जपन् रघुपतिं भक्त्या हृदिस्थं स्मरन् । ध्यायन् मुक्तिमुपैति किं पुनरसौ स्वाचारयुक्तो नरः॥२४॥ ॥ इति श्रीमद्ध्यात्मरामायणे श्री अहल्याविरचितं

श्री रामचन्द्रस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ रामाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्॥

॥ध्यानम्॥

श्रीराघवं दशरथात्मजमप्रमेयं सीतापतिं रघुकुलान्वयरत्नदीपम् । आजानुबाहुमरविन्ददलायताक्षं रामं निशाचरविनाशकरं नमामि॥

॥स्तोत्रम्॥

श्रीरामो रामभद्रश्च रामचन्द्रश्च शाश्वतः। राजीवलोचनः श्रीमान् राजेन्द्रो रघुपुङ्गवः॥१॥ जानकीवल्लभो जैत्रो जितामित्रो जनार्दनः। विश्वामित्रप्रियो दान्तः शरणत्राणतत्परः॥२॥ वालिप्रमथनो वाग्मी सत्यवाक् सत्यविक्रमः। सत्यव्रतो व्रतधरः सदा हनुमदाश्रितः॥३॥ कौसलेयः खरध्वंसी विराधवधपण्डितः।

विभीषणपरित्राता हरकोदण्डखण्डनः॥४॥

सप्ततालप्रभेत्ता च दशग्रीविशरोहरः। जामदृश्यमहाद्र्पद्लनस्ताटकान्तकः॥५॥ वेदान्तसारो वेदात्मा भवरोगस्य भेषजम् । दूषणित्रशिरोहन्ता त्रिमूर्तिस्त्रिगुणात्मकः॥६॥ त्रिविकमस्त्रिलोकात्मा पुण्यचारित्रकीर्तनः। त्रिलोकरक्षको धन्वी दण्डकारण्यकर्तनः॥७॥

अहल्याशापशमनः पितृभक्तो वरप्रदः। जितेन्द्रियो जितक्रोधो जितामित्रो जगद्गुरुः॥८॥

ऋक्षवानरसङ्घाती चित्रकूटसमाश्रयः। जयन्तत्राणवरदः सुमित्रापुत्रसेवितः॥९॥

सर्वदेवादिदेवश्च मृतवानरजीवनः। मायामारीचहन्ता च महादेवो महाभुजः॥१०॥

सर्वदेवस्तुतः सौम्यो ब्रह्मण्यो मुनिसंस्तुतः। महायोगो महोदारः सुग्रीवेप्सितराज्यदः॥११॥

सर्वपुण्याधिकफलः स्मृतसर्वाघनाशनः। अनादिरादिपुरुषो महापूरुष एव च॥१२॥

पुण्योदयो दयासारः पुराणपुरुषोत्तमः। स्मितवक्रो मितभाषी पूर्वभाषी च राघवः॥१३॥ अनन्तगुणगम्भीरो धीरोदात्तगुणोत्तमः। मायामानुषचारित्रो महादेवादिपूजितः॥१४॥ सेतुकृज्जितवारीशः सर्वतीर्थमयो हरिः। रयामाङ्गः सुन्दरः शूरः पीतवासा धनुर्धरः॥१५॥ सर्वयज्ञाधिपो यज्वा जरामरणवर्जितः। शिवलिङ्गप्रतिष्ठाता सर्वापगुणवर्जितः॥१६॥ परमात्मा परं ब्रह्म सिचदानन्दविग्रहः। परञ्चोतिः परन्धाम पराकाशः परात्परः। परेशः पारगः पारः सर्वदेवात्मकः परः॥१७॥ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे उत्तरखण्डे श्रीरामाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ गायत्री रामयाणम्॥

तपः स्वाध्यायनिरतं तपस्वी वाग्विदां वरम् । नारदं परिपप्रच्छ वाल्मीकिर्मुनिपुङ्गवम् ॥१॥ स हत्वा राक्षसान् सर्वान् यज्ञघ्नान् रघुनन्दनः। ऋषिभिः पूजितः सम्यक् यथेन्द्रो विजयी पुरा॥२॥ विश्वामित्रस्तु धर्मात्मा श्रुत्वा जनकभाषितम् । वत्स राम धनुः पश्य इति राघवमब्रवीत् ॥३॥ तुष्टावास्य तदा वंशं प्रविश्य च विशाम्पतेः। शयनीयं नरेन्द्रस्य तदासाद्य व्यतिष्ठत॥४॥ वनवासं हि सङ्खाय वासांस्याभरणानि च। भर्तारमनुगच्छन्त्यै सीतायै श्वशुरो ददौ॥५॥ राजा सत्यं च धर्मं च राजा कुलवतां कुलम्।। राजा माता पिता चैव राजा हितकरो नृणाम् ॥६॥ निरीक्ष्य स मुहूर्तं तु दद्र्श भरतो गुरुम् । उटजे राममासीनं जटामण्डलधारिणम् ॥७॥ यदि बुद्धिः कृता द्रष्टुं अगस्त्यं तं महामुनिम् । अद्यैव गमने बुद्धिं रोचयस्व महायशाः॥८॥ भरतस्यार्यपुत्रस्य श्वश्रूणां मम च प्रभो। मृगरूपमिदं व्यक्तं विस्मयं जनयिष्यति ॥९॥

गच्छ शीघ्रमितो राम सुग्रीवं तं महाबलम् । वयस्यं तं कुरु क्षिप्रमितो गत्वाऽद्य राघव॥१०॥ देशकालौ प्रतीक्षस्व क्षममाणः प्रियाप्रिये। सुखदुःखसहः काले सुग्रीववशगो भव॥११॥ वन्द्यास्ते तु तपः सिद्धास्तपसा वीतकल्मषाः। प्रष्टव्याश्चापि सीतायाः प्रवृत्तिं विनयान्वितैः ॥१२॥ स निर्जित्य पुरीं श्रेष्ठां लङ्कां तां कामरूपिणीम् । विक्रमेण महातेजाः हनूमान्मारुतात्मजः॥१३॥ धन्या देवाः सगन्धर्वाः सिद्धाश्च परमर्षयः। मम पश्यन्ति ये नाथं रामं राजीवलोचनम् ॥१४॥ मङ्गलाभिमुखी तस्य सा तदासीन्महाकपेः। उपतस्थे विशालाक्षी प्रयता हव्यवाहनम् ॥१५॥

हितं महार्थं मृदु हेतुसंहितम् व्यतीतकालायतिसम्प्रतिक्षमम् । निशम्य तद्वाक्यमुपस्थितज्वरः प्रसङ्गवानुत्तरमेतदब्रवीत् ॥१६॥ धर्मात्मा रक्षसां श्रेष्ठः सम्प्राप्तोऽयं विभीषणः। लङ्केश्वर्यं ध्रुवं श्रीमानयं प्राप्तोत्यकण्टकम् ॥१७॥

यो वज्रपाताश्चानिसन्निपातान् न चुक्षुभे नापि चचाल राजा। स रामबाणाभिहतो भृशार्तः चचाल चापं च मुमोच वीरः॥१८॥

यस्य विक्रममासाद्य राक्षसा निधनं गताः। तं मन्ये राघवं वीरं नारायणमनामयम् ॥१९॥

न ते द्द्शिरे रामं द्हन्तमरिवाहिनीम् ।
मोहिताः परमास्त्रेण गान्धर्वेण महात्मना ॥२०॥

प्रणम्य देवताभ्यश्च ब्राह्मणेभ्यश्च मैथिली । बद्धाञ्जलिपुटा चेद्मुवाचाग्निसमीपतः॥२१॥

चलनात्पर्वतेन्द्रस्य गणा देवाश्च कम्पिताः। चचाल पार्वती चापि तदाश्चिष्टा महेश्वरम् ॥२२॥ दाराः पुत्राः पुरं राष्ट्रं भोगाच्छादनभोजनम् । सर्वमेवाविभक्तं नौ भविष्यति हरीश्वर॥२३॥ यामेव रात्रिं रात्रुघ्नः पर्णशालां समाविशत् । तामेव रात्रिं सीताऽपि प्रसूता दारकद्वयम् ॥२४॥

इदं रामायणं कृत्स्नं गायत्रीबीजसंयुतम् । त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नित्यं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ २५॥ ॥ इति श्री गायत्री रामायणं सम्पूर्णम्॥

॥ आपदुद्धारक-द्वाद्शमुख-हनुमान् स्तोत्रम्॥

ॐ अस्य श्री आपदुद्धारक-द्वादशमुख-हनुमान् स्तोत्र-महामन्त्रस्य विभीषण ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्री द्वादशमुख-प्रचण्ड-हनुमान् देवता। मारुतात्मज इति बीजम्। अञ्जनासूनुरिति शक्तिः। वायुपुत्रेति कीलकम्। श्रीहनुमत्प्रसादिसिद्धिद्वारा सर्वापन्निवारणार्थे जपे विनियोगः।

॥ध्यानम्॥

उष्ट्रारूढ-सुवर्चलासहचरन् सुग्रीविमत्राञ्जना-सूनो वायुकुमार केसिरतनूजाऽक्षादिदैत्यान्तक। सीतशोकहराग्निनन्दन सुमित्रासम्भवप्राणद् श्रीभीमाग्रज शम्भुपुत्र हनुमान् सूर्यास्य तुभ्यं नमः॥ खड्गं खेटक-भिण्डिपाल-परशुं पाश-त्रिशूल-द्रुमान् चक्रं शङ्ख-गदा-फलाङ्कुश-सुधाकुम्भान् हलं पर्वतम्। टङ्कं पर्वतकार्मुकाहिडमरूनेतानि दिव्यायुधान् एवं विंशतिबाहुभिश्च द्धतं ध्यायेत् हनूमत्प्रभुम्॥

॥स्तोत्रम्॥

ॐ नमो भगवते तुभ्यं नमो मारुतसूनवे। नमः श्रीरामभक्ताय श्यामास्याय च ते नमः॥१॥ नमो वानरवीराय सुग्रीवसख्यकारिणे। लङ्काविदाहकायाथ हेलासागरतारिणे॥२॥ सीताशोकविनाशाय राममुद्राधराय च। रावणस्य कुलच्छेदकारिणे ते नमो नमः॥३॥ मेघनादमखध्वंसकारिणे ते नमो नमः। अशोकवनविध्वंसकारिणे भयहारिणे॥४॥

वायुपुत्राय वीराय आकाशोद्रगामिने। वनपालशिरश्छेत्रे लङ्काप्रासादभञ्जिने॥५॥ ज्वलत्कनकवर्णाय दीर्घलाङ्गलधारिणे। सौमित्रिजयदात्रे च रामदूताय ते नमः॥६॥ अक्षस्य वधकर्त्रे च ब्रह्मशक्तिनिवारिणे। लक्ष्मणाङ्गमहाशक्ति-घात-क्षत-विनाशिने ॥७॥ रक्षोघ्नाय रिपुघ्नाय भूतघ्नाय च ते नमः। ऋक्षवानरवीरौघ-प्राणदायक ते नमः॥८॥ परसैन्यबलघ्वाय रास्त्रास्त्रविघनाय च। विषन्नाय द्विषन्नाय ज्वरन्नाय च ते नमः॥९॥ महाभयरिपुघ्नाय भक्तत्राणैककारिणे। परप्रेरितमन्त्राणां यन्त्राणां स्तम्भकारिणे॥१०॥ पयः-पाषाण-तरण-कारणाय नमो नमः। बालार्कमण्डलग्रासकारिणे भवतारिणे॥११॥ नखायुधाय भीमाय दन्तायुधधराय च। रिपुमायाविनाशाय रामाज्ञालोकरक्षिणे॥१२॥

प्रतिग्रामस्थितायाथ रक्षोभूतवधार्थिने। करालशैलशस्त्राय द्रमशस्त्राय ते नमः॥१३॥

बालैकब्रह्मचर्याय रुद्रमूर्तिधराय च। विहङ्गमाय शर्वाय वज्रदेहाय ते नमः॥१४॥

कौपीनवाससे तुभ्यं रामभक्तिरताय च। दक्षिणाशाभास्कराय शतचन्द्रोदयात्मने॥१५॥

कृत्या-क्षत-व्यथन्नाय सर्वक्रेशहराय च। स्वाम्याज्ञा-पार्थसङ्गाम-सङ्ख्ये सञ्जयधारिणे॥१६॥

भक्तानां दिव्यवादेषु सङ्ग्रामे जयदायिने। किलकिल्याबूबुरोच्चघोरशब्दकराय च॥१७॥

सर्पाग्निव्याधिसंस्तम्भकारिणे वनचारिणे। सदा वनफलाहार-सत्तृप्ताय विशेषतः। महार्णव-शिला-बद्ध-सेतवे ते नमो नमः॥१८॥

वादे विवादे सङ्ग्रामे भये घोरे महावने। सिंहव्याघ्रादि चौरेभ्यः स्तोत्रपाठाद्भयं न हि॥१९॥ दिव्ये भूतभये व्याधौ गृहे स्थावरजङ्गमे। राजशस्त्रभये चोग्रबाधा ग्रहभयेषु च॥२०॥

जले सर्वे महावृष्टो दुर्भिक्षे प्राणसम्स्रवे। पठेत् स्तोत्रं प्रमुच्येत भयेभ्यः सर्वतो नरः। तस्य क्वापि भयं नास्ति हनुमत् स्तवपाठतः॥२१॥

सर्वथा वै त्रिकालं च पठनीयमिमं स्तवम् । सर्वान् कामानवाप्नोति नात्र कार्या विचारणा॥२२॥

विनतायाः स्वमातुश्च दासीत्वस्य निवृत्तये। सुधार्णं यातुकामाय महापौरुषशालिने॥२३॥

विभीषणकृतं स्तोत्रं ताक्ष्येण समुदीरितम् । ये पठन्ति सदा भक्त्या सिद्धयस्तत्करे स्थिताः॥२४॥

॥ इति श्री सुदर्शनसंहितायां श्री विभीषणगरुडसंवादे श्री विभीषणकृतम् आपदुद्धारक श्री द्वादशमुख-हनुमान् स्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ आञ्जनेयाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्॥

आञ्जनेयो महावीरो हनुमान् मारुतात्मजः। तत्त्वज्ञानप्रदः सीतादेवीमुद्राप्रदायकः॥१॥

अशोकवनिकाच्छेत्ता सर्वमायाविभञ्जनः। सर्वबन्धविमोक्ता च रक्षोविध्वंसकारकः॥२॥

परविद्यापरीहर्ता परशौर्यविनाशकः। परमन्त्रनिराकर्ता परयन्त्रप्रभेदकः॥३॥

सर्वग्रहविनाशी च भीमसेनसहायकृत् । सर्वदुःखहरः सर्वलोकचारी मनोजवः॥४॥

पारिजातद्रमूलस्थः सर्वमन्त्रस्वरूपवान् । सर्वतन्त्रस्वरूपी च सर्वयन्त्रात्मिकस्तथा॥५॥

कपीश्वरो महाकायः सर्वरोगहरः प्रभुः। बलसिद्धिकरः सर्वविद्यासम्पत्प्रदायकः॥६॥

कपिसेनानायकश्च भविष्यचतुराननः। कुमारब्रह्मचारी च रत्नकुण्डलदीप्तिमान् ॥७॥

चञ्चलहालसन्नद्धो लम्बमानशिखोज्ज्वलः। गन्धर्वविद्यातत्त्वज्ञो महाबलपराक्रमः॥८॥ कारागृहविमोक्ता च शृङ्खलाबन्धमोचकः। सागरोत्तारकः प्राज्ञो रामदूतः प्रतापवान् ॥९॥ वानरः केसरीसूनुः सीताशोकनिवारणः। अञ्जनागर्भसम्भूतो बालार्कसदृशाननः॥१०॥ विभीषणप्रियकरो दशम्रीवकुलान्तकः। लक्ष्मणप्राणदाता च वज्रकायो महाद्युतिः॥११॥ चिरञ्जीवी रामभक्तो दैत्यकार्यविघातकः। अक्षहन्ता काञ्चनाभः पञ्चवक्रो महातपाः॥१२॥ लङ्किणीभञ्जनः श्रीमान् सिंहिकाप्राणभञ्जनः। गन्धमादनशैलस्थो लङ्कापुरविदाहकः॥१३॥ सुग्रीवसचिवो धीरः शूरो दैत्यकुलान्तकः । सुरार्चितो महातेजो रामचूडामणिप्रदः॥१४॥ कामरूपी पिङ्गलाक्षो वर्धिमैनाकपूजितः। कबलीकृतमार्ताण्डमण्डलो विजितेन्द्रियः॥१५॥

रामसुग्रीवसन्धाता महिरावणमर्दनः। स्फटिकाभो वागधीशो नवव्याकृतिपण्डितः॥१६॥

चतुर्बाहुर्दीनबन्धुर्महात्मा भक्तवत्सलः। सञ्जीवननगाहर्ता शुचिर्वाग्मी धृतव्रतः॥१७॥

कालनेमिप्रमथनो हिरमर्कटमर्कटः। दान्तः शान्तः प्रसन्नात्मा शतकण्ठमदापहः॥१८॥

योगी रामकथालोलः सीतान्वेषणपण्डितः। वज्रदंष्ट्रो वज्रनखो रुद्रवीर्यसमुद्भवः॥१९॥

इन्द्रजित्प्रहितामोघब्रह्मास्त्रविनिवारकः। पार्थध्वजाग्रसंवासी शरपञ्जरहेलकः॥२०॥

दशबाहुर्लोकपूज्यो जाम्बवत्प्रीतिवर्धनः। सीतासमेतश्रीरामपादसेवाधुरन्धरः॥ २१॥

॥ इति श्री आञ्जनेयाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ हनुमत् पश्चरत्नम्॥

वीताखिल-विषयेच्छं जातानन्दाश्रु-पुलकमत्यच्छम्। सीतापति-दूताद्यं वातात्मजमद्य भावये हृद्यम् ॥१॥ तरुणारुण-मुख-कमलं करुणा-रसपूर-पूरितापाङ्गम् । सञ्जीवनमाशासे मञ्जल-महिमानमञ्जना-भाग्यम् ॥२॥ शम्बरवैरि-शरातिगमम्बुजदल-विपुल-लोचनोदारम् । कम्बुगलमनिलदिष्टं बिम्ब-ज्वलितोष्ठमेकमवलम्बे॥३॥ दूरीकृत-सीतार्तिः प्रकटीकृत-रामवैभव-स्फूर्तिः। दारित-दशमुख-कीर्तिः पुरतो मम भातु हनुमतो मूर्तिः॥४॥ वानर-निकराध्यक्षं दानव-कुल-कुमुद्द-रविकर-सदृशम्। दीन-जनावन-दीक्षं पवनतपः पाकपुञ्जमद्राक्षम् ॥५॥ एतत् पवनसुतस्य स्तोत्रं यः पठति पञ्चरत्नाख्यम्। चिरमिह निखिलान् भोगान् भुक्तवा श्रीराम-भक्तिभाग् भवति॥६॥ ॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं श्री हनुमत्-पञ्चरत्नं सम्पूर्णम्॥ यत्र यत्र रघुनाथकीर्तनं तत्र तत्र कृत-मस्तकाञ्जलिम् । बाष्पवारिपरिपूर्ण-लोचनं मारुतिं नमत राक्षसान्तकम् ॥

उल्लह्य सिन्धोः सिललं सलीलम् यः शोकविहं जनकात्मजायाः। आदाय तेनैव ददाह लङ्काम् नमामि तं प्राञ्जलिराञ्जनेयम्॥ बुद्धिर्बलं यशो धेर्यं निर्भयत्वम् अरोगता। अजाङ्यं वाक्पटुत्वं च हनुमत्स्मरणाद्भवेत्॥ असाध्यसाधक स्वामिन् असाध्यं तव िकं वद। रामदूतकृपिसन्धो मत्कार्यं साधय प्रभो॥

॥ दक्षिणामूर्त्यष्टकम्॥

विश्वं द्र्पणदृश्यमाननगरीतुल्यं निजान्तर्गतम् पश्यन्नात्मिन मायया बहिरिवोद्भृतं यदा निद्रया। यः साक्षात्कुरुते प्रबोधसमये स्वात्मानमेवाद्वयम् तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये॥१॥

बीजस्यान्तरिवाङ्करो जगदिदं प्राङ्निर्विकल्पं पुनः मायाकल्पितदेशकालकलनावैचित्र्यचित्रीकृतम् । मायावीव विजृम्भयत्यपि महायोगीव यः स्वेच्छया तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये॥२॥

यस्यैव स्फुरणं सदाऽऽत्मकमसत्कल्पार्थगं भासते साक्षात् तत्त्वमसीति वेदवचसा यो बोधयत्याश्रितान् । यत्साक्षात्करणाद्भवेन्न पुनरावृत्तिर्भवाम्भोनिधौ तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये॥३॥ नानाच्छिद्रघटोद्रस्थितमहादीपप्रभाभास्वरम् ज्ञानं यस्य तु चक्षुरादिकरणद्वारा बिहः स्पन्दते। जानामीति तमेव भान्तमनुभात्येतत्समस्तं जगत् तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदिक्षणामूर्तये॥४॥

देहं प्राणमपीन्द्रियाण्यपि चलां बुद्धं च शून्यं विदुः स्त्रीबालान्धजडोपमास्त्वहमिति भ्रान्ता भृशं वादिनः। मायाशक्तिविलासकल्पितमहाव्यामोहसंहारिणे तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये॥५॥

राहुग्रस्तदिवाकरेन्दुसदृशो मायासमाच्छाद्नात् सन्मात्रः करणोपसंहरणतो योऽभूत्सुषुप्तः पुमान् । प्रागस्वाप्समिति प्रबोधसमये यः प्रत्यभिज्ञायते तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये॥६॥

बाल्यादिष्विप जाग्रदादिषु तथा सर्वास्ववस्थास्विप व्यावृत्तास्वनुवर्तमानमहिमत्यन्तः स्फुरन्तं सदा। स्वात्मानं प्रकटीकरोति भजतां यो मुद्रया भद्रया तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदिक्षणामूर्तये॥७॥ विश्वं पश्यति कार्यकारणतया स्वस्वामिसम्बन्धतः शिष्याचार्यतया तथैव पितृपुत्राद्यात्मना भेदतः। स्वप्ने जाग्रति वा य एष पुरुषो मायापरिभ्रामितः तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये॥८॥

भूरम्भांस्यनलोऽनिलोऽम्बरमहर्नाथो हिमांशुः पुमान् इत्याभाति चराचरात्मकिमदं यस्यैव मूर्त्यष्टकम् । नान्यत् किञ्चन विद्यते विमृश्चतां यस्मात्परस्माद्विभोः तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये॥

सर्वात्मत्विमिति स्फुटीकृतिमिदं यस्मादमुष्मिन् स्तवे तेनास्य श्रवणात्तदर्थमननाद्यानाच सङ्कीर्तनात् । सर्वात्मत्वमहाविभूतिसिहतं स्यादीश्वरत्वं स्वतः सिध्येत् तत्पुनरष्टधा परिणतं चैश्वर्यमव्याहतम् ॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं श्री दक्षिणामूर्त्यष्टकं सम्पूर्णम्॥



वटविटिपसमीपे भूमिभागे निषण्णम् सकलमुनिजनानां ज्ञानदातारमारात् । त्रिभुवनगुरुमीशं दक्षिणामूर्तिदेवम् जननमरणदुःखच्छेददक्षं नमामि॥

॥ दक्षिणामूर्तिस्तोत्रम्॥

उपासकानां यदुपासनीयम् उपात्तवासं वटशाखिमूले। तद्धाम दाक्षिण्यजुषा स्वमूर्त्या जागर्तु चित्ते मम बोधरूपम् ॥१॥

अद्राक्षमक्षीणद्यानिधानम् आचार्यमाद्यं वटमूलभागे। मौनेन मन्दस्मितभूषितेन महर्षि लोकस्य तमो नुदन्तम् ॥२॥ विद्राविताशेष-तमोगुणेन मुद्राविशेषेण मुहुर्मुनीनाम् । निरस्य मायां दयया विधत्ते देवो महांस्तत्त्वमसीति बोधम् ॥३॥

अपारकारुण्यसुधातरङ्गैः अपाङ्गपातैरवलोकयन्तम् । कठोरसंसारनिदाघतप्तान् मुनीनहं नौमि गुरुं गुरूणाम् ॥४॥

ममाद्यदेवो वटमूलवासी कृपाविशेषात्कृतसन्निधानः। ओङ्काररूपामुपदिश्य विद्याम् आविद्यकध्वान्तमपाकरोतु॥५॥

कलाभिरिन्दोरिव कल्पिताङ्गं मुक्ताकलापैरिव बद्धमूर्तिम् । आलोकये देशिकमप्रमेयम् अनाद्यविद्यातिमिरप्रभातम् ॥६॥ स्वदक्षजानुस्थितवामपादम् पादोदरालङ्कृतयोगपट्टम् । अपस्मृतेराहितपादमङ्गे प्रणौमि देवं प्रणिधानवन्तम् ॥७॥

तत्त्वार्थमन्तेवसतामृषीणाम् युवाऽपि यः सन्नुपदेष्टुमीष्टे। प्रणौमि तं प्राक्तनपुण्यजालैः आचार्यमाश्चर्यगुणाधिवासम् ॥८॥

एकेन मुद्रां परशुं करेण करेण चान्येन मृगं द्धानः। स्वजानुविन्यस्तकरः पुरस्तात् आचार्यचूडामणिराविरस्तु॥९॥

आलेपवन्तं मदनाङ्गभूत्या शार्दूलकृत्त्या परिधानवन्तम् । आलोकये कञ्चनदेशिकेन्द्रम् अज्ञानवाराकरबाडवाग्निम् ॥१०॥ चारुस्मितं सोमकलावतंसम् वीणाधरं व्यक्तजटाकलापम् । उपासते केचन योगिनस्त्वाम् उपात्तनादानुभवप्रमोदम् ॥११॥

उपासते यं मुनयः शुकाद्याः निराशिषो निर्ममताधिवासाः। तं दक्षिणामूर्तितनुं महेशम् उपास्महे मोहमहार्तिशान्त्यै॥१२॥

कान्त्या निन्दितकुन्दकन्दलवपुर्न्ययोधमूले वसन् कारुण्यामृतवारिभिर्मुनिजनं सम्भावयन् वीक्षितैः। मोहध्वान्तविभेदनं विरचयन् बोधेन तत्तादृशा देवस्तत्त्वमसीति बोधयतु मां मुद्रावता पाणिना॥१३॥

> अगौरगात्रैरललाटनेत्रैः अशान्तवेषैरभुजङ्गभूषैः। अबोधमुद्रैरनपास्तिनिद्रैः अपूर्णकामैरमरैरलं नः॥१४॥

दैवतानि कित सन्ति चावनौ नैव तानि मनसो मतानि मे। दीक्षितं जडिधयामनुग्रहे दक्षिणाभिमुखमेव दैवतम् ॥१५॥

मुदिताय मुग्धशशिनावतंसिने भसितावलेपरमणीयमूर्तये । जगदीन्द्रजालरचनापटीयसे महसे नमोऽस्तु वटमूलवासिने॥१६॥

व्यालिम्बनीभिः परितो जटाभिः कलावशेषेण कलाधरेण। पश्यक्ललाटेन मुखेन्दुना च प्रकाशसे चेतिस निर्मलानाम् ॥१७॥

उपासकानां त्वमुमासहायः पूर्णेन्दुभावं प्रकटीकरोषि। यद्द्य ते द्र्शनमात्रतो मे द्रवत्यहो मानसचन्द्रकान्तः॥१८॥ यस्ते प्रसन्नामनुसन्दधानो मूर्तिं मुदा मुग्धशशाङ्कमौलेः। ऐश्वर्यमायुर्लभते च विद्याम् अन्ते च वेदान्तमहारहस्यम् ॥१९॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं श्री दक्षिणामूर्तिस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ शङ्कराचार्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्॥

॥ध्यानम्॥

कैलासाचल-मध्यस्थं कामिताभीष्टदायकम् । ब्रह्मादि-प्रार्थना-प्राप्त-दिव्यमानुष-विग्रहम् ॥

भक्तानुग्रहणैकान्त-शान्त-स्वान्त-समुज्ज्वलम् । संयज्ञं संयमीन्द्राणां सार्वभौमं जगद्गुरुम्॥

किङ्करीभूतभक्तेनः पङ्कजातविशोषणम् । ध्यायामि शङ्कराचार्यं सर्वलोकेकशङ्करम् ॥

॥स्तोत्रम्॥

श्रीशङ्कराचार्यवर्यो ब्रह्मानन्दप्रदायकः। अज्ञानतिमिरादित्यः सुज्ञानाम्बुधिचन्द्रमा॥१॥ वर्णाश्रमप्रतिष्ठाता श्रीमान् मुक्तिप्रदायकः। शिष्योपदेशनिरतो भक्ताभीष्टप्रदायकः॥२॥ सूक्ष्मतत्त्वरहस्यज्ञः कार्याकार्यप्रबोधकः। ज्ञानमुद्राङ्कितकरः शिष्य-हत्ताप-हारकः॥३॥ परिवाजाश्रमोद्धर्ता सर्वतन्त्रस्वतन्त्रधीः। अद्वैतस्थापनाचार्यः साक्षाच्छङ्कररूपधृक् ॥४॥ षण्मतस्थापनाचार्यस्त्रयीमार्गप्रकाशकः। वेदवेदान्ततत्त्वज्ञो दुर्वादिमतखण्डनः॥५॥ वैराग्यनिरतः शान्तः संसारार्णवतारकः। प्रसन्नवदनाम्भोजः परमार्थप्रकाशकः॥६॥ पुराणस्मृतिसारज्ञो नित्यतृप्तो महच्छुचिः। नित्यानन्दो निरातङ्को निःसङ्गो निर्मलात्मकः॥७॥ निर्ममो निरहङ्कारो विश्ववन्द्यपदाम्बुजः। सत्त्वप्रदश्च सद्भावः सङ्खातीतगुणोज्ज्वलः॥८॥

अनघः सारहृदयः सुधीः सारस्वतप्रदः। सत्यात्मा पुण्यशीलश्च साह्ययोगविचक्षणः॥९॥ तपोराशिर्महातेजा गुणत्रयविभागवित्। कलिघ्नः कालकर्मज्ञस्तमोगुणनिवारकः॥१०॥ भगवान् भारतीजेता शारदाह्वानपण्डितः। धर्माधर्मविभागज्ञो लक्ष्यभेदप्रदर्शकः॥११॥ नादबिन्दुकलाभिज्ञो योगिहृत्पद्मभास्करः। अतीन्द्रिय-ज्ञाननिधिर्नित्यानित्यविवेकवान् ॥१२॥ चिदानन्दश्चिन्मयात्मा परकाय-प्रवेशकृत् । अमानुष-चरित्राढ्यः क्षेमदायी क्षमाकरः॥१३॥ भव्यो भद्रप्रदो भूरिमहिमा विश्वरञ्जकः। स्वप्रकाराः सदाधारो विश्वबन्धुः शुभोद्यः॥१४॥ विशालकीर्तिर्वागीशः सर्वलोकहितोत्सुकः। कैलासयात्रा-सम्प्राप्तश्चन्द्रमौलि-प्रपूजकः ॥१५॥ काञ्चां श्रीचक-राजाख्य-यन्त्रस्थापन-दीक्षितः। श्रीचकात्मक-ताटङ्क-तोषिताम्बा-मनोरथः ॥ १६॥ श्रीब्रह्मसूत्रोपनिषद्भाष्यादिग्रन्थकल्पकः। चतुर्दिकतुराम्नायप्रतिष्ठाता महामतिः॥१७॥

द्विसप्तति-मतोच्छेत्ता सर्वदिग्विजयप्रभुः। काषायवसनोपेतो भस्मोद्बृलितविग्रहः॥१८॥

ज्ञानात्मकैकदण्डाढ्यः कमण्डलुलसत्करः। गुरुभूमण्डलाचार्यो भगवत्पादसंज्ञकः॥१९॥

व्याससन्दर्शनप्रीत ऋश्यशृङ्गपुरेश्वरः। सौन्दर्यलहरीमुख्यबहुस्तोत्रविधायकः॥२०॥

चतुःषष्टिकलाभिज्ञो ब्रह्मराक्षस-मोक्षदः। श्रीमन्मण्डनमिश्राख्यस्वयम्भूजयसन्नुतः॥२१॥

तोटकाचार्यसम्पूज्यः पद्मपादार्चिताङ्किकः। हस्तामलकयोगीन्द्रब्रह्मज्ञानप्रदायकः॥ २२॥

सुरेश्वराख्य-सच्छिष्य-सन्न्यासाश्रम-दायकः। नृसिंहभक्तः सद्रत्नगर्भहेरम्बपूजकः। व्याख्यासिंहासनाधीशो जगत्पूज्यो जगद्गुरुः॥२३॥

॥ इति श्री शङ्कराचार्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ महिषासुरमर्दिनि स्तोत्रम्॥

अयि गिरिनन्दिन नन्दितमेदिनि विश्वविनोदिनि नन्दिनुते गिरिवर-विन्ध्य-शिरोधिनिवासिनि विष्णुविलासिनि जिष्णुनुते। भगवित हे शितिकण्ठकुटुम्बिनि भूरिकुटुम्बिनि भूरिकृते जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥१॥

सुरवरवर्षिणि दुर्घरधर्षिणि दुर्मुखमर्षिणि हर्षरते त्रिभुवनपोषिणि शङ्करतोषिणि किल्बिषमोषिणि घोषरते। दनुज-निरोषिणि दितिसुत-रोषिणि दुर्मद-शोषिणि सिन्धुसुते जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥२॥

अयि जगदम्ब-मदम्ब-कदम्ब-वनप्रिय-वासिनि हासरते शिखरि शिरोमणि तुङ्ग-हिमालय-शृङ्ग-निजालय-मध्यगते। मधु-मधुरे मधु-कैटभ-गञ्जिनि कैटभ-भञ्जिनि रासरते जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥३॥ अयि शतखण्ड-विखण्डित-रुण्ड-वितुण्डित-शुण्ड-गजाधिपते रिपु-गज-गण्ड-विदारण-चण्ड-पराक्रम-शुण्ड-मृगाधिपते। निज-भुज-दण्ड-निपातित-खण्ड-विपातित-मुण्ड-भटाधिपते जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥४॥

अयि रण-दुर्मद-शत्रु-वधोदित-दुर्धर-निर्जर-शक्तिभृते चतुर-विचार-धुरीण-महाशिव-दूतकृत-प्रमथाधिपते। दुरित-दुरीह-दुराशय-दुर्मित-दानवदूत-कृतान्तमते जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥५॥

अयि शरणागत-वैरि-वधूवर-वीर-वराभय-दायकरे त्रिभुवन-मस्तक-शूल-विरोधि शिरोधि कृतामल-शूलकरे। दुमिदुमि-तामर-दुन्दुभिनाद-महो-मुखरीकृत-तिग्मकरे जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥६॥

अयि निज-हुङ्कृति मात्र-निराकृत-धूम्रविलोचन-धूम्रशते समर-विशोषित-शोणित-बीज-समुद्भव-शोणित-बीजलते। शिव-शिव-शुम्भ-निशुम्भ-महाहव-तर्पित-भूत-पिशाचरते जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥७॥ धनुरनु-सङ्ग-रणक्षणसङ्ग-परिस्फुर-दङ्ग-नटत्कटके कनक-पिशङ्ग-पृषत्क-निषङ्ग-रसद्भट-शृङ्ग-हतावटुके। कृत-चतुरङ्ग-बलक्षिति-रङ्ग-घटद्वहुरङ्ग-रटद्वटुके जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥८॥

जय जय जप्य-जयेजय-शब्द-परस्तुति-तत्पर-विश्वनुते भण-भण-भिञ्जिमि-भिङ्कृत-नूपुर-सिञ्जित-मोहित-भूतपते। निटत-नटार्ध-नटीनट-नायक-नाटित-नाट्य-सुगानरते जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥९॥

अयि सुमनः सुमनः सुमनः सुमनोहर-कान्तियुते श्रित-रजनी-रजनी-रजनी-रजनी-रजनीकर-वऋवृते। सुनयन-विभ्रमर-भ्रमर-भ्रमर-भ्रमराधिपते जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥१०॥

सित-महाहव-मल्लम-तिलक-मिल्लित-रल्लक-मल्लरते विरचित-विलक-पिल्लिक-मिल्लिक-भिल्लिक-वर्गवृते। सितकृत-फुल्लसमुल्ल-सितारुण-तल्लज-पल्लव-सल्लिलेते जय जय हे मिहिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥११॥ अविरल-गण्ड-गलन्मद-मेदुर-मत्त-मतङ्गज-राजपते त्रिभुवन-भूषण-भूत-कलानिधि रूप-पयोनिधि राजसुते। अयि सुद-तीजन-लालसमानस-मोहन-मन्मथ-राजसुते जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥१२॥

कमल-दलामल-कोमल-कान्ति कलाकिलामल-भाललते सकल-विलास-कलानिलयकम-केलि-चलत्कल-हंसकुले। अलिकुल-सङ्कल-कुवलय-मण्डल-मौलिमिलद्भकुलालि-कुले जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥१३॥

करमुरली-रव-वीजित-कूजित-लज्जित-कोकिल-मञ्जमते मिलित-पुलिन्द-मनोहर-गुञ्जित-रञ्जितशैल-निकुञ्जगते। निजगुणभूत-महाशबरीगण-सद्गुण-सम्भृत-केलितले जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥१४॥

कटितट-पीत-दुकूल-विचित्र-मयूख-तिरस्कृत-चन्द्ररुचे प्रणत-सुरासुर-मौलिमणिस्फुर-दंशुल-सन्नख-चन्द्ररुचे। जित-कनकाचल-मौलिपदोर्जित-निर्भर-कुञ्जर-कुम्भकुचे जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥१५॥ विजित-सहस्रकरैक-सहस्रकरैक-सहस्रकरैकनुते कृतसुरतारक-सङ्गरतारक-सङ्गरतारक-सृनुसुते । सुरथ-समाधि समानसमाधि समाधिसमाधि सुजातरते जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥१६॥

पदकमलं करुणानिलये वरिवस्यित योऽनुदिनं स शिवे अयि कमले कमलानिलये कमलानिलयः स कथं न भवेत् । तव पदमेव परम्पदिमत्यनुशीलयतो मम किं न शिवे जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥१७॥

कनकलसत्कल-सिन्धुजलैरनुसिश्चिनुते गुण-रङ्गभुवम् भजित स किं न शचीकुच-कुम्भ-तटी-परिरम्भ-सुखानुभवम् । तव चरणं शरणं करवाणि नतामरवाणि निवासि शिवम् जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥१८॥

तव विमलेन्दुकुलं वदनेन्दुमलं सकलं ननु कूलयते किमु पुरुहूत-पुरीन्दुमुखी-सुमुखीभिरसौ विमुखी क्रियते। मम तु मतं शिवनामधने भवती कृपया किमुत क्रियते जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥१९॥ अयि मिय दीनद्यालुतया कृपयैव त्वया भवितव्यमुमे अयि जगतो जननी कृपयाऽसि यथाऽसि तथाऽनुमितासिरते। यदुचितमत्र भवत्युरिर कुरुतादुरुतापमपाकुरुते जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते॥२०॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं श्री महिषासुरमर्दिनि-स्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ गायत्रीस्तोत्रम्॥

नारद उवाच

भक्तानुकम्पिन् सर्वज्ञ हृदयं पापनाशनम्। गायत्र्याः कथितं तस्माद्गायत्र्याः स्तोत्रमीरय॥१॥ आदिशक्ते जगन्मातर्भक्तानुग्रहकारिणि। सर्वत्र व्यापिकेऽनन्ते श्रीसन्ध्ये ते नमोऽस्तु ते॥२॥ त्वमेव सन्ध्या गायत्री सावित्री च सरस्वती। ब्रह्माणी वैष्णवी रौद्री रक्तश्वेता सितेतरा॥३॥ प्रातर्बाला च मध्याह्ने यौवनस्था भवेत्पुनः। वृद्धा सायं भगवती चिन्त्यते मुनिभिः सदा॥४॥

हंसस्था गरुडारूढा तथा वृषभवाहिनी। ऋग्वेदाध्यायिनी भूमौ दृश्यते या तपस्विभिः॥५॥ यजुर्वेदं पठन्ती च अन्तरिक्षे विराजते। या सामगापि सर्वेषु भ्राम्यमाणा तथा भुवि॥६॥ रुद्रलोकं गता त्वं हि विष्णुलोकनिवासिनी। त्वमेव ब्रह्मणो लोकेऽमर्त्यानुग्रहकारिणी॥७॥ सप्तर्षिप्रीतिजननी माया बहुवरप्रदा। शिवयोः करनेत्रोत्था ह्यश्रुस्वेदसमुद्भवा॥८॥ आनन्दजननी दुर्गा दशधा परिपठ्यते। वरेण्या वरदा चैव वरिष्ठा वरवर्णिनी॥९॥ गरिष्ठा च वराही च वरारोहा च सप्तमी। नीलगङ्गा तथा सन्ध्या सर्वदा भोगमोक्षदा॥१०॥ भागीरथी मर्त्यलोके पाताले भोगवत्यपि। त्रिलोकवाहिनी देवी स्थानत्रयनिवासिनी॥११॥ भूलोंकस्था त्वमेवासि धरित्री शोकधारिणी। भुवो लोके वायुशक्तिः स्वर्लोके तेजसां निधिः॥१२॥

महर्लोके महासिद्धिर्जनलोकेऽजनेत्यि। तपस्विनी तपोलोके सत्यलोके तु सत्यवाक्॥१३॥ कमला विष्णुलोके च गायत्री ब्रह्मलोकगा। रुद्रलोके स्थिता गौरी हरार्घाङ्गनिवासिनी॥१४॥ अहमो महतश्चेव प्रकृतिस्त्वं हि गीयसे। साम्यावस्थात्मिका त्वं हि शबलब्रह्मरूपिणी॥१५॥ ततः परापरा शक्तिः परमा त्वं हि गीयसे। इच्छाराक्तिः क्रियाराक्तिर्ज्ञानराक्तिस्त्रिराक्तिदा॥१६॥ गङ्गा च यमुना चैव विपाशा च सरस्वती। सरयू रेविका सिन्धुर्नर्मदैरावती तथा॥१७॥ गोदावरी शतद्रश्च कावेरी देवलोकगा। कौशिकी चन्द्रभागा च वितस्ता च सरस्वती॥१८॥ गण्डकी तापिनी तोया गोमती वेत्रवत्यपि। इडा च पिङ्गला चैव सुषुम्णा च तृतीयका॥१९॥ गान्धारी हस्तजिह्ना च पूषाऽपूषा तथैव च। अलम्बुषा कुहूश्चैव शंखिनी प्राणवाहिनी॥२०॥

नाडी च त्वं शरीरस्था गीयसे प्राक्तनैर्बुधैः। हृत्पद्मस्था प्राणशक्तिः कण्ठस्था स्वप्ननायिका॥२१॥ तालुस्था त्वं सदाधारा बिन्दुस्था बिन्दुमालिनी। मूले तु कुण्डलीशक्तिर्व्यापिनी केशमूलगा॥२२॥ शिखामध्यासना त्वं हि शिखाग्रे तु मनोन्मनी। किमन्यद्वहुनोक्तेन यत्किञ्चिज्जगतीत्रये ॥ २३ ॥ तत्सर्वं त्वं महादेवि श्रिये सन्ध्ये नमोऽस्तु ते। इतीदं कीर्तितं स्तोत्रं सन्ध्यायां बहुपुण्यदम् ॥२४॥ महापापप्रशमनं महासिद्धिविदायकम् । य इदं कीर्तयेत् स्तोत्रं सन्ध्याकाले समाहितः॥२५॥ अपुत्रः प्राप्नुयात् पुत्रं धनार्थी धनमाप्नुयात् । सर्वतीर्थतपोदानयज्ञयोगफलं लभेत् ॥२६॥ भोगान् भुक्तवा चिरं कालमन्ते मोक्षमवाप्रुयात्। तपस्विभिः कृतं स्तोत्रं स्नानकाले तु यः पठेत् ॥२७॥ यत्र कुत्र जले मग्नः सन्ध्यामज्जनजं फलम् । लभते नात्र सन्देहः सत्यं सत्यं तु नारद्॥२८॥

शृणुयाद्योऽपि तद्भक्त्या स तु पापात् प्रमुच्यते। पीयूषसदृशं वाक्यं सन्ध्योक्तं नारदेरितम् ॥२९॥ ॥ इति श्री गायत्री स्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ शीतलाष्टकम् ॥

अस्य श्रीशीतलास्तोत्रस्य महादेव ऋषिः। अनुष्टृप् छन्दः। शीतला देवता। लक्ष्मीर्बीजम्। भवानी शक्तिः। सर्वविस्फोटकनिवृत्यर्थे जपे विनियोगः॥ ईश्वर उवाच वन्देऽहं शीतलां देवीं रासभस्थां दिगम्बराम् । मार्जनीकलशोपेतां शूर्पालङ्कतमस्तकाम् ॥१॥ वन्देऽहं शीतलां देवीं सर्वरोगभयापहाम् । यामासाद्य निवर्तेत विस्फोटकभयं महत् ॥२॥ शीतले शीतले चेति यो ब्र्याद्दाहपीडितः। विस्फोटकभयं घोरं क्षिप्रं तस्य प्रणइयति॥३॥ यस्त्वामुद्दकमध्ये तु ध्यात्वा सम्पूजयेन्नरः। विस्फोटकभयं घोरं गृहे तस्य न जायते॥४॥

शीतले ज्वरदग्धस्य पूर्तिगन्धयुतस्य च। प्रणष्टचक्षुषः पुंसस्त्वामाहुर्जीवनौषधम् ॥५॥ शीतले तनुजान् रोगान् नृणां हरसि दुस्त्यजान् । विस्फोटकविदीर्णानां त्वमेकाऽमृतवर्षिणी॥६॥ गलगण्डग्रहा रोगा ये चान्ये दारुणा नृणाम् । त्वदनुध्यानमात्रेण शीतले यान्ति सङ्घयम् ॥७॥ न मन्त्रो नौषधं तस्य पापरोगस्य विद्यते। त्वामेकां शीतले धात्रीं नान्यां पश्यामि देवताम् ॥८॥ मृणालतन्तुसदृशीं नाभिहृन्मध्यसंस्थिताम् । यस्त्वां सञ्चिन्तयेद्देवि तस्य मृत्युर्न जायते॥९॥ अष्टकं शीतलादेव्या यो नरः प्रपठेत्सदा। विस्फोटकभयं घोरं गृहे तस्य न जायते॥१०॥ श्रोतव्यं पठितव्यं च श्रद्धाभक्तिसमन्वितैः। उपसर्गविनाशाय परं स्वस्त्ययनं महत् ॥११॥ शीतले त्वं जगन्माता शीतले त्वं जगत्पिता। शीतले त्वं जगद्धात्री शीतलायै नमो नमः॥१२॥

रासभो गर्दभश्चैव खरो वैशाखनन्दनः। शीतलावाहनश्चैव दूर्वाकन्दनिकृन्तनः॥१३॥ एतानि खरनामानि शीतलाग्रे तु यः पठेत्। तस्य गेहे शिशूनां च शीतलारुङ् न जायते॥१४॥ शीतलाष्टकमेवेदं न देयं यस्यकस्यचित्। दातव्यं च सदा तस्मै श्रद्धाभक्तियुताय वै॥१५॥॥इति श्री स्कान्दपुराणे श्री शीतलाष्टकं सम्पूर्णम्॥

॥ दुर्गाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्॥

॥ न्यासः॥

अस्य श्रीदुर्गाष्टोत्तरशतनामास्तोत्रमालामन्त्रस्य महाविष्णुमहेश्वराः ऋषयः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीदुर्गापरमेश्वरी देवता। हां बीजम्। हीं शक्तिः। हूं कीलकम्। सर्वाभीष्टिसिद्धर्थे जपहोमार्चने विनियोगः। ॥स्तोत्रम्॥ सत्या साध्या भवप्रीता भवानी भवमोचनी। आर्या दुर्गा जया चऽऽद्या त्रिनेत्रा शूलधारिणी॥१॥ पिनाकधारिणी चित्रा चण्डघण्टा महातपाः। मनो बुद्धिरहङ्कारा चिद्रूपा च चिदाकृतिः॥२॥ अनन्ता भाविनी भव्या ह्यभव्या च सदागतिः। शाम्भवी देवमाता च चिन्ता रत्नप्रिया तथा॥३॥ सर्वविद्या दक्षकन्या दक्षयज्ञविनाशिनी। अपर्णाऽनेकवर्णा च पाटला पाटलावती॥४॥ पट्टाम्बरपरीधाना कलमञ्जीररञ्जिनी। ईशानी च महाराज्ञी ह्यप्रमेयपराक्रमा॥५॥ रुद्राणी कूररूपा च सुन्दरी सुरसुन्दरी। वनदुर्गा च मातङ्गी मतङ्गमुनिकन्यका॥६॥ ब्राह्मी माहेश्वरी चैन्द्री कौमारी वैष्णवी तथा। चामुण्डा चैव वाराही लक्ष्मीश्च पुरुषाकृतिः॥७॥ विमला ज्ञानरूपा च क्रिया नित्या च बुद्धिदा। बहुलप्रेमा महिषासुरमर्दिनी॥८॥ बहुला

मधुकैटभहन्त्री च चण्डमुण्डविनाशिनी। सर्वशास्त्रमयी चैव सर्वदानवघातिनी॥९॥ अनेकरास्त्रहस्ता च सर्वरास्त्रास्त्रधारिणी। भद्रकाली सदाकन्या कैशोरी युवतिर्यतिः॥१०॥ प्रौढाऽप्रौढा वृद्धमाता घोररूपा महोद्री। बलप्रदा घोररूपा महोत्साहा महाबला॥११॥ अग्निज्वाला रौद्रमुखी कालरात्री तपस्विनी। नारायणी महादेवी विष्णुमाया शिवात्मिका॥१२॥ शिवदूती कराली च ह्यनन्ता परमेश्वरी। कात्यायनी महाविद्या महामेधास्वरूपिणी॥१३॥ गौरी सरस्वती चैव सावित्री ब्रह्मवादिनी। सर्वतत्त्वैकनिलया वेदमन्त्रस्वरूपिणी॥१४॥

॥ फलश्रुतिः ॥

इदं स्तोत्रं महादेव्या नाम्नाम् अष्टोत्तरं शतम् । यः पठेत् प्रयतो नित्यं भक्तिभावेन चेतसा॥१५॥

रात्रुभ्यो न भयं तस्य तस्य रात्रुक्षयं भवेत् । सर्वदुःखद्रिदाच सुसुखं मुच्यते ध्रुवम् ॥१६॥ विद्यार्थी लभते विद्यां धनार्थी लभते धनम । कन्यार्थी लभते कन्यां कन्या च लभते वरम् ॥१७॥ ऋणी ऋणाद्विमुच्येत ह्यपुत्रो लभते सुतम् । रोगाद्विमुच्यते रोगी सुखमत्यन्तमश्रुते॥१८॥ भूमिलाभो भवेत् तस्य सर्वत्र विजयी भवेत् । सर्वान् कामानवाप्नोति महादेवीप्रसादतः॥१९॥ कुङ्कमोर्बिल्वपत्रेश्च सुगन्धे रक्तपुष्पकैः। रक्तपत्रैर्विशेषेण पूजयन् भद्रमश्रुते॥२०॥ ॥ इति श्री दुर्गाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ लक्ष्म्यष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्॥ ॥ध्यानम्॥

वन्दे पद्मकरां प्रसन्नवदनां सौभाग्यदां भाग्यदाम् हस्ताभ्यामभयप्रदां मणिगणैर्नानाविधैर्भूषिताम् । भक्ताभीष्टफलप्रदां हरिहरब्रह्मादिभिः सेविताम् पार्श्वे पङ्कजशङ्खपद्मनिधिभिर्युक्तां सदा शक्तिभिः॥

सरसिजनिलये सरोजहस्ते धवलतमांशुकगन्धमाल्यशोभे। भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे त्रिभुवनभूतिकरि प्रसीद मह्यम्॥

॥स्तोत्रम्॥

प्रकृतिं विकृतिं विद्यां सर्वभूतिहतप्रदाम् । श्रद्धां विभूतिं सुरिमं नमामि परमात्मिकाम् ॥१॥ वाचं पद्मालयां पद्मां शुचिं स्वाहां स्वधां सुधाम् । धन्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं नित्यपुष्टां विभावरीम् ॥२॥ अदितिं च दितिं दीप्तां वसुधां वसुधारिणीम् । नमामि कमलां कान्तां कामाक्षीं क्रोधसम्भवाम् ॥३॥

अनुग्रहपदां बुद्धिमनघां हरिवल्लभाम् । अशोकाममृतां दीप्तां लोकशोकविनाशिनीम् ॥४॥ नमामि धर्मनिलयां करुणां लोकमातरम् । पद्मप्रियां पद्महस्तां पद्माक्षीं पद्मसुन्द्रीम् ॥५॥ पद्मोद्भवां पद्ममुखीं पद्मनाभप्रियां रमाम् । पद्ममालाधरां देवीं पद्मिनीं पद्मगन्धिनीम् ॥६॥ पुण्यगन्धां सुप्रसन्नां प्रसादाभिमुखीं प्रभाम् । नमामि चन्द्रवदनां चन्द्रां चन्द्रसहोदरीम् ॥७॥ चतुर्भुजां चन्द्ररूपामिन्दिरामिन्दुशीतलाम् । आह्वादुजननीं पुष्टिं शिवां शिवकरीं सतीम् ॥८॥ विमलां विश्वजननीं तुष्टिं दारिद्यनाशिनीम् । प्रीतिपुष्करिणीं शान्तां शुक्कमाल्याम्बरां श्रियम् ॥९॥ भास्करीं बिल्वनिलयां वरारोहां यशस्विनीम् । वसुन्धरामुदाराङ्गीं हरिणीं हेममालिनीम् ॥१०॥ धनधान्यकरीं सिद्धिं स्त्रैणसौम्यां शुभप्रदाम् । नृपवेश्मगतानन्दां वरलक्ष्मीं वसुप्रदाम् ॥११॥

शुभां हिरण्यप्राकारां समुद्रतनयां जयाम् । नमामि मङ्गलां देवीं विष्णुवक्षःस्थलस्थिताम् ॥१२॥

विष्णुपत्नीं प्रसन्नाक्षीं नारायणसमाश्रिताम् । दारिद्यध्वंसिनीं देवीं सर्वोपद्रवहारिणीम् ॥१३॥

नवदुर्गां महाकालीं ब्रह्मविष्णुशिवात्मिकाम् । त्रिकालज्ञानसम्पन्नां नमामि भुवनेश्वरीम् ॥१४॥

लक्ष्मीं क्षीरसमुद्रराजतनयां श्रीरङ्गधामेश्वरीम् दासीभूतसमस्तदेववनितां लोकैकदीपाङ्कराम् । श्रीमन्मन्दकटाक्षलब्धविभवब्रह्मेन्द्रगङ्गाधराम् त्वां त्रैलोक्यकुटुम्बिनीं सरसिजां वन्दे मुकुन्दप्रियाम् ॥१५॥

> मातर्नमामि कमले कमलायताक्षि श्रीविष्णुहृत्कमलवासिनि विश्वमातः। क्षीरोदजे कमलकोमलगर्भगौरि लक्ष्मि प्रसीद सततं नमतां शरण्ये॥१६॥

> > ॥ फलश्रुतिः ॥

त्रिकालं यो जपेद्विद्वान् षण्मासं विजितेन्द्रियः। दारिद्यध्वंसनं कृत्वा सर्वमाप्नोत्ययत्नतः॥१७॥ देवीनामसहस्रेषु पुण्यमष्टोत्तरं शतम् । येन श्रियमवाप्नोति कोटिजन्मदरिद्रितः॥१८॥ भृगुवारे शतं धीमान् पठेद्वत्सरमात्रकम् । अप्टैश्वर्यमवाप्नोति कुबेर इव भूतले॥१९॥ दारिद्यमोचनं नाम स्तोत्रमम्बापरं शतम् । येन श्रियमवाप्नोति कोटिजन्मद्रितिः॥२०॥ भुक्तवा तु विपुलान् भोगानस्याः सायुज्यमाप्नुयात् । प्रातःकाले पठेन्नित्यं सर्वदुःखोपशान्तये। पठंस्तु चिन्तयेद्देवीं सर्वाभरणभूषिताम् ॥२१॥ ॥ इति श्री लक्ष्म्यष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ सीताष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्॥

॥ध्यानम्॥

वामाङ्गे रघुनायकस्य रुचिरे या संस्थिता शोभना या विप्राधिपयानरम्यनयना या विप्रपालानना। विद्युत्पुञ्जविराजमानवसना भक्तार्तिसङ्खण्डना श्रीमद्राघवपादपद्मयुगलन्यस्तेक्षणा साऽवतु॥

॥स्तोत्रम्॥

श्रीसीता जानकी देवी वैदेही राघवप्रिया। रमाऽविनसुता रामा राक्षसान्तप्रकारिणी॥१॥ रत्नगुप्ता मातुलुङ्गी मैथिली भक्ततोषदा। पद्माक्षजा कञ्जनेत्रा स्मितास्या नूपुरस्वना॥२॥ वैकुण्ठिनलया मा श्रीमृक्तिदा कामपूरणी। नृपात्मजा हेमवर्णा मृदुलाङ्गी सुभाषिणी॥३॥ कुशाम्बिका दिव्यदा च लवमाता मनोहरा। हनुमद्वन्दितपदा मुग्धा केयूरधारिणी॥४॥ अशोकवनमध्यस्था रावणादिकमोहिनी।
विमानसंस्थिता सुभूः सुकेशी रशनान्विता॥५॥
रजोरूपा सत्त्वरूपा तामसी विह्ववासिनी।
हेममृगासक्तिचत्ता वाल्मीक्याश्रमवासिनी॥६॥
पतिव्रता महामाया पीतकौशेयवासिनी।
मृगनेत्रा च बिम्बोष्ठी धनुर्विद्याविशारदा॥७॥
सौम्यरूपा दशरथस्नुषा चामरवीजिता।
सुमेधादुहिता दिव्यरूपा त्रैलोक्यपालिनी॥८॥
अन्नपूर्णा महालक्ष्मीर्धीर्लज्जा च सरस्वती।

अन्नपूणा महालक्ष्माधालज्जा च सरस्वता। शान्तिः पुष्टिः क्षमा गौरी प्रभाऽयोध्यानिवासिनी॥९॥

वसन्तशीतला गौरी स्नानसन्तुष्टमानसा। रमानामभद्रसंस्था हेमकुम्भपयोधरा॥१०॥

सुरार्चिता धृतिः कान्तिः स्मृतिर्मेधा विभावरी। लघूदरा वरारोहा हेमकङ्कणमण्डिता॥११॥

द्विजपल्यर्पितनिजभूषा राघवतोषिणी। श्रीरामसेवानिरता रत्नताटङ्कधारिणी॥१२॥ रामवामाङ्गसंस्था च रामचन्द्रैकरञ्जनी। सरयूजलसङ्कीडाकारिणी राममोहिनी॥१३॥

सुवर्णतुलिता पुण्या पुण्यकीर्तिः कलावती। कलकण्ठा कम्बुकण्ठा रम्भोरुर्गजगामिनी॥१४॥

रामार्पितमना रामवन्दिता रामवछ्नभा। श्रीरामपदिचिह्नाङ्का रामरामेतिभाषिणी॥१५॥ रामपर्यङ्करायना रामाङ्किक्षालिनी वरा। कामधेन्वन्नसन्तुष्टा मातुलुङ्गकरे धृता॥१६॥ दिव्यचन्दनसंस्था श्रीमूलकासुरमर्दिनी। एवमष्टोत्तरशतं सीतानाम्नां सुपुण्यदम् ॥१७॥

॥ फलश्रुतिः ॥

ये पठिन्ति नरा भूम्यां ते धन्याः स्वर्गगामिनः। अष्टोत्तरशतं नाम्नां सीतायाः स्तोत्रमुत्तमम् ॥१८॥ जपनीयं प्रयत्नेन सर्वदा भक्तिपूर्वकम्। सन्ति स्तोत्राण्यनेकानि पुण्यदानि महान्ति च॥१९॥ नानेन सदृशानीह तानि सर्वाणि भूसुर। स्तोत्राणामुत्तमं चेदं भुक्तिमुक्तिप्रदं नृणाम् ॥२०॥

एवं सुतीक्ष्ण ते प्रोक्तमष्टोत्तरशतं शुभम् । सीतानाम्नां पुण्यदं च श्रवणान्मङ्गलप्रदम् ॥२१॥

नरैः प्रातः समुत्थाय पठितव्यं प्रयत्नतः। सीतापूजनकालेऽपि सर्ववाञ्छितदायकम् ॥२२॥

॥ इति श्री आनन्दरामायणे श्रीसीताष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

॥ गोदाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्॥

॥ध्यानम्॥

शतमखमणि नीला चारुकल्हारहस्ता स्तनभरनिमताङ्गी सान्द्रवात्सल्यसिन्धुः। अलकविनिहिताभिः स्रग्भिराकृष्टनाथा विलसतु हृदि गोदा विष्णुचित्तात्मजा नः॥

॥स्तोत्रम्॥

श्रीरङ्गनायकी गोदा विष्णुचित्तात्मजा सती। गोपीवेषधरा देवी भूसुता भोगशालिनी॥१॥

तुलसीकाननोद्भूता श्रीधन्विपुरवासिनी। भट्टनाथप्रियकरी श्रीकृष्णहितभोगिनी॥२॥

आमुक्तमाल्यदा बाला रङ्गनाथप्रिया परा। विश्वम्भरा कलालापा यतिराजसहोदरी॥३॥

कृष्णानुरक्ता सुभगा सुलभश्रीः सलक्षणा। लक्ष्मीप्रियसखी श्यामा दयाश्चितदृगञ्चला॥४॥

फल्गुन्याविर्भवा रम्या धनुर्मासकृतव्रता। चम्पकाशोक-पुन्नाग-मालती-विलसत्-कचा॥५॥

आकारत्रयसम्पन्ना नारायणपदाश्रिता। श्रीमद्दृष्टाक्षरीमन्त्र-राजस्थित-मनोरथा॥६॥ मोक्षप्रदाननिपुणा मनुरत्नाधिदेवता।

ब्रह्मण्या लोकजननी लीलामानुषरूपिणी॥७॥

ब्रह्मज्ञानप्रदा माया सिचदानन्द्विग्रहा। महापतिव्रता विष्णुगुणकीर्तनलोलुपा॥८॥ प्रपन्नार्तिहरा नित्या वेदसौधविहारिणी। श्रीरङ्गनाथमाणिक्यमञ्जरी मञ्जभाषिणी॥९॥ पद्मप्रिया पद्महस्ता वेदान्तद्वयबोधिनी। सुप्रसन्ना भगवती श्रीजनार्द्नदीपिका॥१०॥ सुगन्धवयवा चारुरङ्गमङ्गलदीपिका। ध्वजवज्राङ्करााजाङ्क-मृदुपाद-लताञ्चिता॥११॥ तारकाकारनखरा प्रवालमृदुलाङ्गली। कूर्मोपमेय-पादोर्ध्वभागा शोभनपार्ष्णिका॥१२॥ वेदार्थभावतत्त्वज्ञा लोकाराध्याङ्किपङ्कजा। आनन्दबुद्धदाकार-सुगुल्फा परमाऽणुका॥१३॥ तेजःश्रियोज्ज्वलधृतपादाङ्गुलि-सुभूषिता। मीनकेतन-तूणीर-चारुजङ्घा-विराजिता ॥१४॥ ककुद्वजानुयुग्माढ्या स्वर्णरम्भाभसिक्थका। विशालजघना पीनसुश्रोणी मणिमेखला॥१५॥

आनन्दसागरावर्त-गम्भीराम्भोज-नाभिका। भास्वद्वलित्रिका चारुजगत्पूर्ण-महोद्री॥१६॥ नववह्वीरोमराजी सुधाकुम्भायितस्तनी। कल्पमालानिभभुजा चन्द्रखण्ड-नखाञ्चिता॥१७॥ सुप्रवाशाङ्गुलीन्यस्तमहारलाङ्गुलीयका। नवारुणप्रवालाभ-पाणिदेश-समञ्चिता ॥ १८॥ कम्बुकण्ठी सुचुबुका बिम्बोष्ठी कुन्ददन्तयुक्। कारुण्यरस-निष्यन्द-नेत्रद्वय-सुशोभिता ॥ १९॥ मुक्ताशुचिस्मिता चारुचाम्पेयनिभनासिका। द्र्पणाकार-विपुल-कपोल-द्वितयाञ्चिता ॥२०॥ अनन्तार्क-प्रकाशोद्यन्मणि-ताटङ्क-शोभिता। कोटिसूर्याग्निसङ्काश-नानाभूषण-भूषिता ॥२१॥ सुगन्धवदना सुभ्रू अर्धचन्द्रललाटिका। पूर्णचन्द्रानना नीलकुटिलालकशोभिता॥२२॥ सौन्दर्यसीमा विलसत्-कस्तूरी-तिलकोज्ज्वला। धगद्ध-गायमानोद्यन्मणि-सीमन्त-भूषणा ॥२३॥

जाज्वल्यमाल-सद्रत्न-दिव्यचूडावतंसका । सूर्यार्धचन्द्र-विलसत्-भूषणाञ्चित-वेणिका॥२४॥ अत्यर्कानल-तेजोधिमणि-कञ्चकधारिणी । सद्रलाञ्चितविद्योत-विद्युत्कुञ्जाभ-शाटिका॥२५॥ नानामणिगणाकीर्ण-हेमाङ्गदसुभूषिता कुङ्कमागरु-कस्तूरी-दिव्यचन्दन-चर्चिता॥२६॥ स्वोचितौज्ज्वल्य-विविध-विचित्र-मणि-हारिणी। असङ्ख्येय-सुखस्पर्श-सर्वातिशय-भूषणा ॥२७॥ मिल्लका-पारिजातादि दिव्यपुष्प-स्रगञ्चिता। श्रीरङ्गनिलया पूज्या दिव्यदेशसुशोभिता॥२८॥ ॥ इति श्री गोदाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ महालक्ष्म्यष्टकम् ॥

इन्द्र उवाच नमस्तेऽस्तु महामाये श्रीपीठे सुरपूजिते। शङ्खचकगदाहस्ते महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते॥१॥

नमस्ते गरुडारूढे कोलासुरभयङ्करि। सर्वपापहरे देवि महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते॥२॥ सर्वज्ञे सर्ववरदे सर्वदृष्टभयङ्करि। सर्वदुःखहरे देवि महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते॥३॥ सिद्धिबुद्धिप्रदे देवि भुक्तिमुक्तिप्रदायिनि। मन्त्रमूर्ते सदा देवि महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते॥४॥ आद्यन्तरहिते देवि आद्यशक्तिमहेश्वरि। योगजे योगसम्भूते महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते॥५॥ स्थूलसूक्ष्ममहारौद्रे महाशक्ति महोदरे। महापापहरे देवि महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते॥६॥ पद्मासनस्थिते देवि परब्रह्मस्वरूपिणि। परमेशि जगन्मातर्महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते॥७॥ श्वेताम्बरधरे देवि नानालङ्कारभूषिते। जगत्स्थिते जगन्मातर्महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते॥८॥ महालक्ष्म्यष्टकं स्तोत्रं यः पठेद्भक्तिमान्नरः। सर्वसिद्धिमवाप्नोति राज्यं प्राप्नोति सर्वदा॥

एककाले पठेन्नित्यं महापापविनाशनम् । द्विकालं यः पठेन्नित्यं धनधान्यसमन्वितः॥ त्रिकालं यः पठेन्नित्यं महाशत्रुविनाशनम् । महालक्ष्मीर्भवेन्नित्यं प्रसन्ना वरदा शुभा॥

॥ इति श्रीमद्पद्मपुराणे श्री महालक्ष्म्यष्टकं सम्पूर्णम्॥

॥ सरस्वत्यष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्॥

॥ध्यानम्॥

या कुन्देन्दुतुषारहारधवला या शुभ्रवस्त्रावृता या वीणावरदण्डमण्डितकरा या श्वेतपद्मासना। या ब्रह्माच्युतशङ्करप्रभृतिभिदेवैः सदा पूजिता सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेषजाड्यापहा॥

॥स्तोत्रम्॥

सरस्वती महाभद्रा महामाया वरप्रदा। श्रीप्रदा पद्मितलया पद्माक्षी पद्मवऋका॥१॥ शिवानुजा पुस्तकभृत् ज्ञानमुद्रा रमा परा। कामरूपा महाविद्या महापातकनाशिनी॥२॥ महाश्रया मालिनी च महाभोगा महाभुजा। महाभागा महोत्साहा दिव्याङ्गा सुरवन्दिता॥३॥ महाकाली महापाशा महाकारा महाङ्कशा। पीता च विमला विश्वा विद्युन्माला च वैष्णवी॥४॥

चिन्द्रका चन्द्रवद्ना चन्द्रलेखविभूषिता। सावित्री सुरसा देवी दिव्यालङ्कारभूषिता॥५॥ वाग्देवी वसुदा तीव्रा महाभद्रा महाबला। भोगदा भारती भामा गोविन्दा गोमती शिवा॥६॥ जटिला विन्ध्यवासा च विन्ध्याचलविराजिता। चिण्डका वैष्णवी ब्राह्मी ब्रह्मज्ञानैकसाधना॥७॥ सौदामिनी सुधामूर्तिः सुभद्रा सुरपूजिता। सुवासिनी सुनासा च विनिद्रा पद्मलोचना॥८॥ विद्यारूपा विशालाक्षी ब्रह्मजाया महाफला। त्रयीमूर्ती त्रिकालज्ञा त्रिगुणा शास्त्ररूपिणी॥९॥ शुम्भासुरप्रमथिनी शुभदा च स्वरात्मिका। रक्तबीजनिहन्त्री च चामुण्डा चाम्बिका तथा॥१०॥ मुण्डकायप्रहरणा धूम्रलोचनमर्दना। सर्वदेवस्तुता सौम्या सुरासुरनमस्कृता॥११॥ कालरात्रिः कलाधारा रूपसौभाग्यदायिनी। वाग्देवी च वरारोहा वाराही वारिजासना॥१२॥

चित्राम्बरा चित्रगन्धा चित्रमाल्यविभूषिता। कान्ता कामप्रदा वन्द्या विद्याधरसुपूजिता॥१३॥ श्वेतानना नीलभुजा चतुर्वर्गफलप्रदा। चतुराननसाम्राज्या रक्तमध्या निरञ्जना॥१४॥ हंसासना नीलजङ्घा ब्रह्मविष्णुशिवात्मिका। एवं सरस्वतीदेव्या नाम्नामष्टोत्तरं शतम्॥१५॥ ॥इति श्री सरस्वत्यष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ वेङ्कटेश सुप्रभातम्॥

कौसल्या सुप्रजा राम पूर्वा सन्ध्या प्रवर्तते। उत्तिष्ठ नरशार्दूल कर्तव्यं दैवमाह्निकम् ॥१॥

उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविन्द उत्तिष्ठ गरुडध्वज। उत्तिष्ठ कमलाकान्त त्रैलोक्यं मङ्गलं कुरु॥२॥

मातः समस्तजगतां मधुकैटभारेः वक्षोविहारिणि मनोहरदिव्यमूर्ते। श्रीस्वामिनि श्रितजनप्रियदानशीले श्रीवेङ्कटेशद्यिते तव सुप्रभातम् ॥३॥

तव सुप्रभातमरविन्दलोचने भवतु प्रसन्नमुखचन्द्रमण्डले। विधिशङ्करेन्द्रवनिताभिरर्चिते वृषशैलनाथद्यिते द्यानिधे॥४॥ अत्र्यादिसप्तऋषयः समुपास्य सन्ध्याम् आकाशसिन्धुकमलानि मनोहराणि। आदाय पादयुगमर्चियतुं प्रपन्नाः शेषाद्रिशेखरविभो तव सुप्रभातम् ॥५॥

पञ्चाननाज्जभवषण्मुखवासवाद्याः त्रैविक्रमादिचरितं विबुधाः स्तुवन्ति। भाषापितः पठित वासरशुद्धिमारात् शेषाद्रिशेखरिवभो तव सुप्रभातम् ॥६॥

ईषत्प्रफुल्ल-सरसीरुह-नारिकेल-पूगद्धमादि-सुमनोहरपालिकानाम् । आवाति मन्दमनिलः सह दिव्यगन्धेः शेषाद्रिशेखरविभो तव सुप्रभातम् ॥७॥

उन्मील्य नेत्रयुगमुत्तमपञ्जरस्थाः पात्राविशष्टकदलीफलपायसानि । भुक्तवा सलीलमथ केलिशुकाः पठन्ति शेषाद्रिशेखरविभो तव सुप्रभातम् ॥८॥ तन्त्रीप्रकर्षमधुरस्वनया विपञ्च्या गायत्यनन्तचरितं तव नारदोऽपि। भाषासमग्रमसकृत्करचाररम्यम् शेषाद्रिशेखरविभो तव सुप्रभातम् ॥९॥

भृङ्गावली च मकरन्दरसानुविद्ध-झङ्कारगीत निनदैः सह सेवनाय। निर्यात्युपान्तसरसीकमलोदरेभ्यः शेषाद्रिशेखरविभो तव सुप्रभातम् ॥१०॥

योषागणेन वरद्धिविमथ्यमाने घोषालयेषु द्धिमन्थनतीव्रघोषाः। रोषात्कलिं विद्धते ककुमश्च कुम्भाः शेषाद्रिशेखरविभो तव सुप्रभातम् ॥११॥

पद्मेशिमत्रशतपत्रगतालिवर्गाः हर्तुं श्रियं कुवलयस्य निजाङ्गलक्ष्म्या। भेरीनिनादिमव बिभ्रति तीव्रनादम् शेषाद्रिशेखरिवभो तव सुप्रभातम् ॥१२॥ श्रीमन्नभीष्टवरदाखिललोकबन्धो श्रीश्रीनिवास जगदेकदयैकसिन्धो। श्रीदेवतागृहभुजान्तरदिव्यमूर्ते श्रीवेङ्कटाचलपते तव सुप्रभातम् ॥१३॥

श्रीस्वामिपुष्करिणिकाऽऽप्लवनिर्मलाङ्गाः श्रेयोऽर्थिनो हरविरिञ्चसनन्दनाद्याः। द्वारे वसन्ति वरवेत्रहतोत्तमाङ्गाः श्रीवेङ्कटाचलपते तव सुप्रभातम्॥१४॥

श्रीशेषशैल-गरुडाचल-वेङ्कटाद्रि-नारायणाद्रि-वृषभाद्रि-वृषाद्रि-मुख्याम् । आख्यां त्वदीय वसतेरिनशं वदन्ति श्रीवेङ्कटाचलपते तव सुप्रभातम् ॥१५॥

सेवापराः शिव-सुरेश-कृशानु-धर्म-रक्षोऽम्बुनाथ-पवमान-धनाधिनाथाः। बद्धाञ्जलि-प्रविलसन्निजशीर्ष-देशाः श्रीवेङ्कटाचलपते तव सुप्रभातम्॥१६॥ धाटीषु ते विहगराज-मृगाधिराज-नागाधिराज-गजराज-हयाधिराजाः। स्वस्वाधिकार-महिमाऽधिकमर्थयन्ते श्रीवेङ्कटाचलपते तव सुप्रभातम्॥१७॥

सूर्येन्दु-भौम-बुध-वाक्पित-काव्य-सौरि-स्वर्भानु-केतु-दिविषत्परिषत्प्रधानाः। त्वद्दास-दास-चरमाविध-दासदासाः श्रीवेङ्कटाचलपते तव सुप्रभातम्॥१८॥

त्वत् पाद्धूिलभिरतस्मुरितोत्तमाङ्गाः स्वर्गापवर्गनिरपेक्ष-निजान्तरङ्गाः। कल्पागमाऽऽकलनयाऽऽकुलतां लभन्ते श्रीवेङ्कटाचलपते तव सुप्रभातम् ॥१९॥

त्वद्गोपुराग्रशिखराणि निरीक्षमाणाः स्वर्गापवर्गपदवीं परमां श्रयन्तः। मर्त्या मनुष्यभुवने मतिमाश्रयन्ते श्रीवेङ्कटाचलपते तव सुप्रभातम् ॥२०॥ श्रीभूमिनायक दयादिगुणामृताब्धे देवाधिदेव जगदेकशरण्यमूर्ते। श्रीमन्ननन्त गरुडादिभिरचिताङ्गे श्रीवेङ्कटाचलपते तव सुप्रभातम् ॥२१॥

श्रीपद्मनाभ पुरुषोत्तम वासुदेव वैकुण्ठ माधव जनार्दन चक्रपाणे। श्रीवत्सचिह्न शरणागत-पारिजात श्रीवेङ्कटाचलपते तव सुप्रभातम् ॥ २२॥

कन्दर्पदर्पहरसुन्दरिव्यमूर्ते कान्ताकुचाम्बुरुह-कुङ्मल-लोलदृष्टे। कल्याणनिर्मलगुणाकर दिव्यकीर्ते श्रीवेङ्कटाचलपते तव सुप्रभातम्॥२३॥

मीनाकृते कमठ कोल नृसिंह वर्णिन् स्वामिन् परश्वथ तपोधन रामचन्द्र। शेषांशराम यदुनन्दन कल्किरूप श्रीवेङ्कटाचलपते तव सुप्रभातम्॥२४॥ एला-लवङ्ग-घनसार-सुगन्धि-तीर्थम् दिव्यं वियत्सरिति हेमघटेषु पूर्णम् । धृत्वाऽद्य वैदिकशिखामणयः प्रहृष्टाः तिष्ठन्ति वेङ्कटपते तव सुप्रभातम् ॥२५॥

भास्वानुदेति विकचानि सरोरुहाणि सम्पूरयन्ति निनदैः ककुभो विहङ्गाः। श्रीवैष्णवाः सततमर्थित-मङ्गलास्ते धामाऽऽश्रयन्ति तव वेङ्कट सुप्रभातम् ॥२६॥

ब्रह्मादयः सुरवराः समहर्षयस्ते सन्तः सनन्दन मुखास्तव योगिवर्याः। धामान्तिके तव हि मङ्गलवस्तुहस्ताः श्रीवेङ्कटाचलपते तव सुप्रभातम्॥२७॥

लक्ष्मीनिवास निरवद्यगुणैकसिन्धो संसार-सागर-समुत्तरणैकसेतो । वेदान्तवेद्य निजवैभव भक्तभोग्य श्रीवेङ्कटाचलपते तव सुप्रभातम् ॥२८॥ इत्थं वृषाचलपतेरिह सुप्रभातम् ये मानवाः प्रतिदिनं पठितुं प्रवृत्ताः। तेषां प्रभातसमये स्मृतिरङ्गभाजाम् प्रज्ञां परार्थसुलभां परमां प्रसूते॥२९॥ ॥इति श्री वेङ्कटेश सुप्रभातम् सम्पूर्णम्॥

॥ वेङ्कटेश स्तोत्रम्॥

कमलाकुच-चूचुक-कुङ्कुमतो नियतारुणितातुल-नीलतनो। कमलायतलोचन लोकपते विजयी भव वेङ्कटशैलपते॥१॥ सचतुर्मुख-षण्मुख-पञ्चमुख-प्रमुखाखिलदैवतमौलिमणे। शरणागतवत्सल सारिनधे परिपालय मां वृषशैलपते॥२॥ अतिवेलतया तव दुर्विषहैरनुवेलकृतैरपराधशतैः। भरितं त्वरितं वृषशैलपते परया कृपया परिपाहि हरे॥३॥ अधिवेङ्कटशैलमुदारमते जनताभिमताधिकदानरतात्। परदेवतया गदितान्निगमैः कमलादियतान्न परं कलये॥४॥ कलवेणुरवावशगोपवधू शतकोटिवृतात्स्मरकोटिसमात्। प्रतिवल्लविकाभिमतात्सुखदात् वसुदेवसुतान्न परं कलये॥४॥

अभिरामगुणाकर दाशरथे जगदेकधनुर्धर धीरमते। रघुनायक राम रमेश विभो वरदो भव देव दयाजलघे॥६॥ अवनीतनया-कमनीयकरं रजनीकरचारुमुखाम्बुरुहम् । रजनीचरराजतमोमिहिरं महनीयमहं रघुराम मये॥७॥ सुमुखं सुहृदं सुलभं सुखदं स्वनुजं च सुखायममोघशरम् । अपहाय रघूद्वहमन्यमहं न कथञ्चन कञ्चन जातु भजे॥८॥ विना वेङ्कटेशं न नाथो न नाथः सदा वेङ्कटेशं स्मरामि स्मरामि। हरे वेङ्कटेश प्रसीद प्रसीद प्रियं वेङ्कटेश प्रयच्छ प्रयच्छ॥९॥ अहं दूरतस्ते पदाम्भोजयुग्म प्रणामेच्छयाऽऽगत्य सेवां करोमि। सकृत्सेवया नित्यसेवाफलं त्वम् प्रयच्छ प्रयच्छ प्रभो वेङ्कटेश॥१०॥ अज्ञानिना मया दोषानशेषान् विहितान् हरे। क्षमस्व त्वं क्षमस्व त्वं शेषशैल-शिखामणे॥११॥ ॥इति श्री वेङ्कटेश स्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ वेङ्कटेश प्रपत्तिः॥

ईशानां जगतोऽस्य वेङ्कटपतेर्विष्णोः परां प्रेयसीम् तद्वक्षःस्थल-नित्य-वासरिसकां तत्क्षान्ति संवर्धिनीम् । पद्मालङ्कृतपाणिपल्लवयुगां पद्मासनस्थां श्रियम् वात्सल्यादिगुणोज्ज्वलां भगवतीं वन्दे जगन्मातरम् ॥१॥

> श्रीमन् कृपाजलिनधे कृतसर्वलोक सर्वज्ञ शक्त नतवत्सल सर्वशेषिन् । स्वामिन् सुशील सुलभाश्रितपारिजात श्रीवेङ्कटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये॥२॥

आनूपुरार्पितसुजातसुगन्धिपुष्प-सौरभ्यसौरभकरौ समसन्निवेशौ। सौम्यौ सदाऽनुभवनेऽपि नवानुभाव्यौ श्रीवेङ्कटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये॥३॥ सद्योविकासिसमुदित्वरसान्द्रराग-सौरभ्यनिर्भरसरोरुहसाम्यवार्ताम् । सम्यक्षु साहसपदेषु विलेखयन्तौ श्रीवेङ्कटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये॥४॥

रेखामयध्वजसुधाकलशातपत्र-वज्राङ्कशाम्बुरुहकल्पकशङ्खचकैः। भव्येरलङ्कृततलौ परतत्त्वचिह्नैः श्रीवेङ्कटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये॥५॥

ताम्रोद्रद्युतिपराजितपद्मरागौ बाह्यैर्महोभिरभिभूतमहेन्द्रनीलौ। उद्यन्नखांशुभिरुद्स्तशशाङ्कभासौ श्रीवेङ्कटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये॥६॥

सप्रेमभीति कमलाकरपल्लवाभ्याम् संवाहनेऽपि सपदि क्लममाद्धानौ। कान्ताववाङ्मन-सगोचर-सौकुमार्यौ श्रीवेङ्कटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये॥७॥ लक्ष्मीमहीतदनुरूपनिजानुभाव-नीलादिदिव्यमहिषीकरपल्लवानाम् । आरुण्यसङ्क्रमणतः किल सान्द्ररागौ श्रीवेङ्कटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये॥८॥

नित्यानमद्विधिशिवादिकिरीटकोटि-प्रत्युप्त-दीप्त-नवरत्न-महःप्ररोहैः। नीराजनाविधिमुदारमुपाददानौ श्रीवेङ्कटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये॥९॥

विष्णोः पदे परम इत्युतिदप्रशंसौ यौ मध्व उत्स इति भोग्यतयाऽप्युपात्तौ। भूयस्तथेति तव पाणितलप्रदिष्टौ श्रीवेङ्कटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये॥१०॥

पार्थाय तत्सदृश-सारिथना त्वयैव यौ दर्शितौ स्वचरणौ शरणं व्रजेति। भूयोऽपि मह्यमिह तौ करदर्शितौ ते श्रीवेङ्कटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये॥११॥ मन्मूर्भि कालियफणे विकटाटवीषु श्रीवेङ्कटाद्रिशिखरे शिरिस श्रुतीनाम् । चित्तेऽप्यनन्यमनसां सममाहितौ ते श्रीवेङ्कटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये॥१२॥

अस्रानहष्यद्वनीतलकीर्णपुष्पौ श्रीवेङ्कटाद्रि-शिखराभरणायमानौ। आनन्दिताखिल-मनो-नयनौ तवैतौ श्रीवेङ्कटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये॥१३॥

प्रायः प्रपन्न-जनता-प्रथमावगाह्यौ मातुः स्तनाविव शिशोरमृतायमानौ। प्राप्तौ परस्परतुलामतुलान्तरौ ते श्रीवेङ्कटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये॥१४॥

सत्वोत्तरैः सतत-सेव्यपदाम्बुजेन संसार-तारक-द्यार्द्र-दृगञ्चलेन। सौम्यौ पयन्तृमुनिना मम दर्शितौ ते श्रीवेङ्कटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये॥१५॥ श्रीश श्रिया घटिकया त्वदुपायभावे प्राप्ये त्विय स्वयमुपेयतया स्फुरन्त्या। नित्याश्रिताय निरवद्यगुणाय तुभ्यम् स्यां किङ्करो वृषगिरीश न जातु मह्मम् ॥१६॥ ॥इति श्रीवेङ्कटेश प्रपत्तिः सम्पूर्णः॥

॥ वेङ्कटेश मङ्गलाशासनम्॥

श्रियः कान्ताय कल्याणिनधये निधयेऽर्थिनाम् । श्रीवेङ्कटिनवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलम् ॥१॥ लक्ष्मी-सिविभ्रमालोक-सुभ्रू-विभ्रमचक्षुषे । चक्षुषे सर्वलोकानां वेङ्कटेशाय मङ्गलम् ॥२॥ श्रीवेङ्कटाद्रि-श्रङ्गाग्र-मङ्गलाभरणाङ्मये । मङ्गलानां निवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलम् ॥३॥ सर्वावयवसौन्दर्य-सम्पदा सर्वचेतसाम् । सदा सम्मोहनायास्तु वेङ्कटेशाय मङ्गलम् ॥४॥ नित्याय निरवद्याय सत्यानन्दिचदात्मने। सर्वान्तरात्मने श्रीमदु-वेङ्कटेशाय मङ्गलम् ॥५॥

स्वतस्सर्वविदे सर्वशक्तये सर्वशेषिणे। सुलभाय सुशीलाय वेङ्कटेशाय मङ्गलम् ॥६॥ परस्मै ब्रह्मणे पूर्णकामाय परमात्मने। प्रयुञ्जे परतत्त्वाय वेङ्कटेशाय मङ्गलम् ॥७॥ आकालतत्त्वमश्रान्तमात्मनामनुपश्यताम् । अतृह्यमृतरूपाय वेङ्कटेशाय मङ्गलम् ॥८॥ प्रायः स्वचरणौ पुंसां शरण्यत्वेन पाणिना। कृपयाऽऽदिशते श्रीमदु-वेङ्कटेशाय मङ्गलम् ॥९॥ दयामत-तरिक्षण्यास्तरक्षेरिव शीतलैः। अपाङ्गैः सिञ्चते विश्वं वेङ्कटेशाय मङ्गलम् ॥१०॥ स्रम्भूषाम्बरहेतीनां सुषमावहमूर्तये। सर्वार्तिशमनायास्तु वेङ्कटेशाय मङ्गलम् ॥११॥ श्रीवैकुण्ठविरक्ताय स्वामिपुष्करिणीतटे। रमया रममाणाय वेङ्कटेशाय मङ्गलम् ॥१२॥ श्रीमत् सुन्दरजामातृमुनिमानसवासिने। सर्वलोकनिवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलम् ॥१३॥

मङ्गलाशासनपरैर्मदाचार्य-पुरोगमैः । सर्वैश्च पूर्वेराचार्यैः सत्कृतायास्तु मङ्गलम् ॥१४॥ ॥इति श्री वेङ्कटेश मङ्गलाशासनं सम्पूर्णम्॥

॥ वेङ्कटेश करावलम्बस्तोत्रम्॥

श्रीशेषशैल सुनिकेतन दिव्यमूर्ते नारायणाच्यत हरे निलनायताक्ष। लीलाकटाक्ष-परिरक्षित-सर्वलोक श्रीवेङ्कटेश मम देहि करावलम्बम् ॥१॥ ब्रह्मादिवन्दितपदाम्बुज शङ्खपाणे श्रीमत्सुदर्शन-सुशोभित-दिव्यहस्त। कारुण्यसागर शरण्य सुपुण्यमूर्ते श्रीवेङ्कटेश मम देहि करावलम्बम् ॥२॥ वेदान्त-वेद्य भवसागर-कर्णधार श्रीपद्मनाभ कमलार्चितपादपद्म। लोकैक-पावन परात्पर पापहारिन् श्रीवेङ्कटेश मम देहि करावलम्बम् ॥३॥

लक्ष्मीपते निगमलक्ष्य निजस्वरूप कामादिदोष-परिहारक बोधदायिन् । दैत्यादिमर्दन जनार्दन वासुदेव श्रीवेङ्कटेश मम देहि करावलम्बम् ॥४॥

तापत्रयं हर विभो रभसा मुरारे संरक्ष मां करुणया सरसीरुहाक्ष। मच्छिष्य इत्यनुदिनं परिरक्ष विष्णो श्रीवेङ्कटेश मम देहि करावलम्बम् ॥५॥

श्री जातरूपनवरत्न-लसिक्तरीट कस्तूरिकातिलकशोभिललाटदेश । राकेन्दुबिम्ब-वदनाम्बुज वारिजाक्ष श्रीवेङ्कटेश मम देहि करावलम्बम् ॥६॥

वन्दारुलोक-वरदान-वचोविलास रलाढ्यहार-परिशोभित-कम्बुकण्ठ। केयूररल-सुविभासि-दिगन्तराल श्रीवेङ्कटेश मम देहि करावलम्बम् ॥७॥ दिव्याङ्गदाश्चित-भुजद्वय मङ्गलात्मन् केयूरभूषण-सुशोभित-दीर्घबाहो । नागेन्द्र-कङ्कण-करद्वय कामदायिन् श्रीवेङ्कटेश मम देहि करावलम्बम् ॥८॥

स्वामिन् जगद्धरणवारिधिमध्यमग्नम् मामुद्धराद्य कृपया करुणापयोधे। लक्ष्मीं च देहि मम धर्म-समृद्धिहेतुम् श्रीवेङ्कटेश मम देहि करावलम्बम् ॥९॥

दिव्याङ्गरागपरिचर्चित-कोमलाङ्ग पीताम्बरावृततनो तरुणार्क-दीप्ते। सत्काञ्चनाभ-परिधान-सुपट्टबन्ध श्रीवेङ्कटेश मम देहि करावलम्बम् ॥१०॥

रत्नाट्यदाम-सुनिबद्ध-किट-प्रदेश माणिक्यदर्पण-सुसन्निभ-जानुदेश । जङ्घाद्वयेन परिमोहित सर्वलोक श्रीवेङ्कटेश मम देहि करावलम्बम् ॥११॥ लोकैकपावन-सिर्त्पिरशोभिताङ्के त्वत्पाददर्शन दिने च ममाघमीश। हार्दं तमश्च सकलं लयमाप भूमन् श्रीवेङ्कटेश मम देहि करावलम्बम् ॥१२॥

कामादि-वैरि-निवहोऽच्युत मे प्रयातः दारिद्यमप्यपगतं सकलं दयालो। दीनं च मां समवलोक्य दयाई-दृष्ट्या श्रीवेङ्कटेश मम देहि करावलम्बम् ॥१३॥

श्रीवेङ्कटेश-पदपङ्कज-षद्वदेन श्रीमन्नृसिंहयतिना रचितं जगत्याम् । ये तत्पठन्ति मनुजाः पुरुषोत्तमस्य ते प्राप्नुवन्ति परमां पदवीं मुरारेः॥१४॥

॥ इति श्री श्रङ्गेरि-जगद्गुरुणा श्री नृसिंहभारती-स्वामिना रचितं श्री वेङ्कटेश करावलम्बस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥श्रीनिवास गद्यम्॥

श्रीमद्खिल-महीमण्डल-मण्डन-धरणिधर-मण्डलाखण्डलस्य' निखिल-सुरासुर-वन्दित-वराहक्षेत्र-विभूषणस्य' शेषाचल-गरुडाचल-वृषभाचल-नारायणाचलाञ्जनाचलादि शिखरिमालाकुलस्य' नादमुख-बोधनिधि-वीधिगुण-साभरण-सत्त्वनिधि-तत्त्वनिधि-भक्तिगुणपूर्ण-श्रीशैलपूर्ण-गुणवशंवद-परमपुरुष-कृपापूर-विभ्रमदतुङ्गश्रङ्ग-गलद्गगनगङ्गासमालिङ्गितस्य' सीमातिग गुण रामानुजमुनि नामाङ्कित बहु भूमाश्रय सुरधामालय वनरामायत वनसीमापरिवृत विशङ्कटतट निरन्तर विज्ञिम्भित भक्तिरस निर्झरानन्तार्याहार्य प्रस्रवणधारापूर विभ्रमद-सलिलभरभरित महातटाक मण्डितस्य' कलिकर्दम मलमर्दन कलितोद्यम विलसद्यम नियमादिम मुनिगणनिषेव्यमाण प्रत्यक्षीभवन्निजसिलल मज्जन नमज्जन निखिलपापनाशन पापनाशन तीर्थाध्यासितस्य' मुरारिसेवक जरादिपीडित निरार्तिजीवन निराश भूसुर वरातिसुन्दर सुराङ्गनारति कराङ्गसौष्ठव कुमारताकृति कुमारतारक समापनोदय तनूनपातक महापदामय विहापनोदित सकलभुवन विदित

कुमारधाराभिधान-तीर्थाधिष्ठितस्य' धरणितल गत सकल हतकलिल शुभसलिल गतबहुळ विविधमल हति चतुर रुचिरतर विलोकनमात्र विद्ळित विविधमहापातक स्वामिपुष्करिणी समेतस्य' बहुसङ्कट नरकावट पतदत्कट कलिकङ्कट कलुषोद्भट जनपातक विनिपातक रुचिनाटक करहाटक कलशाहृत कमलारत शुभमज्जन जल सज्जन भरित निजदुरित हतिनिरत जनसतत निरर्गळपेपीयमान सलिल सम्भृत विशङ्कट कटाहतीर्थ विभूषितस्य' एवमादिम भूरिमञ्जिम सर्वपातक गर्वहातक सिन्धुडम्बर हारिशम्बर विविधविपुल पुण्यतीर्थनिवहनिवासस्य श्रीमतो वेङ्कटाचलस्य शिखरशेखर-महाकल्पशाखी' खर्वीभवदति गर्वीकृत गुरुमेवींशगिरि मुखोर्वीधर कुलद्वींकर द्यितोर्वीधर शिखरोवीं' सतत सदूवींकृति चरणघन गर्वचर्वण निपुण तनुकिरणमसृणित गिरिशिखरशेखरतरुनिकर तिमिरः' वाणीपतिश्चर्वाणी द्यितेन्द्राणीश्वर मुख नाणीयोरसवेणी निभशुभवाणी नुतमहिमाणी' यस्तर कोणी भवदिखलभुवनभवनोदरः' वैमानिकगुरु भूमाधिक गुण रामानुज कृतधामाकर करधामारि दरललामाच्छकनक दामायित

निजरामालय' नवकिसलयमय तोरणमालायित वनमालाधरः' कालाम्बुद् मालानिभ नीलालक जालावृत बालाज सलीलामल फालाङ्गसमूलामृत धाराद्वयावधीरण' धीरललिततर विशदतर घन घनसारमयोर्ध्वपुण्ड्रेखाद्वयरुचिरः' सुविकस्वर दळभास्वर कमलोद्र गतमेदुर नवकेसर तितभासुर परिपिञ्जर कनकाम्बर कलिताद्र लिलतोद्र तदालम्ब जम्भरिपु मणिस्तम्भ गम्भीरिमदम्भस्तम्भ समुज्जृम्भमान पीवरोरुयुगळ तदालम्ब पृथुल कदळी मुकुल मदहरणजङ्घाल जङ्घायुगळः' नव्यदळ भव्यगल पीतमल शोणिमल सन्मृदुल सिक्सिलयाश्रुजल-कारि बल शोणतल पदकमल निजाश्रय बलबन्दीकृत शरदिन्दुमण्डली विभ्रमदादभ्र शुभ्र पुनर्भवाधिष्ठिताङ्गळीगाढ निपीडित पद्मापनः जानुतलावधि लम्बि विडम्बित वार्ण शुण्डादण्ड विज्ञिम्भित नीलमणिमय कल्पकशाखा विभ्रमदायि मृणाळलतायत समुज्ज्वलतर कनकवलय वेल्लितैकतर बाहुदण्डयुगळः' युगपदुदित कोटि खरकर हिमकर मण्डल जाज्वल्यमान सुदर्शन पाञ्चजन्य समुत्तुङ्गित शृङ्गापर बाहु युगळः' अभिनवशाण समुत्तेजित महामहा नीलखण्ड मतखण्डन निपुण नवीन परितप्त कार्तस्वर

कविचत महनीय पृथुल सालग्राम परम्परा गुम्भित नाभिमण्डल पर्यन्त लम्बमान प्रालम्बदीप्ति समालम्बित विशाल वक्षःस्थलः गङ्गाझर तुङ्गाकृति भङ्गावळि भङ्गावह सौधावळि बाधावह धारानिभ हारावळि दूराहत गेहान्तर मोहावह महिम मसृणित महातिमिरः पिङ्गाकृति भृङ्गारु निभाङ्गार दळाङ्गामल नीष्कासित दुष्कार्यघ निष्कावळि दीपप्रभ नीपच्छवि तापप्रद कनकमालिका पिशङ्गित सर्वाङ्गः' नवद्ळित दळविलत मृदुलिलत कमलतित मद्विहित चतुरतर पृथुलतर सरसतर कनकसरमय रुचिकण्ठिका कमनीयकण्ठः' वाताश्चनाधिपति शयन कमन परिचरण रतिसमेताखिल फणधरतित मतिकरकनकमय नागाभरण परिवीताखिलाङ्गावगमित शयन भूताहिराज जातातिशयः' रविकोटी परिपाटी धरकोटी रपताटी कितवाटी रसधाटी धर मणिगणकिरण विसरण सततविधृत तिमिरमोह गर्भगेहः अपरिमित विविधभुवन भरिताखण्ड ब्रह्माण्डमण्डल पिचण्डिलः' आर्यधुर्यानन्तार्य पवित्र खनित्रपात पात्रीकृत निजचुबुक गतव्रणिकण विभूषणवहनसूचित श्रितजनवत्सलतातिशयः मङ्कुडिण्डिम ढमरु जर्झर काहळी पटहावळी मृदुमईलाशि मृदुङ्ग

दुन्दुभि ढिक्किकामुक हृद्य वाद्यक मधुरमङ्गळ नादमेदुर विसृमर सरस गानरस रुचिर सन्तत सन्तन्यमान नित्योत्सव पक्षोत्सव मासोत्सव संवत्सरोत्सवादि विविधोत्सव कृतानन्दः' श्रीमदानन्दिनलय विमानवासः' सतत पद्मालया पदपद्मरेणु सञ्चितवक्षःस्थल पटवासः' श्रीश्रीनिवासः' सुप्रसन्नो विजयताम्॥१॥

नाटारिभ भूपाळ बिलहरि मायामाळव गौळा असावेरी' सावेरी शुद्धसावेरी देवगान्धारी' धन्यासी बेगड हिन्दुस्थानी कापी तोडी नाटकुरञ्जी' श्रीराग सहन अठाण सारङ्गी दर्बारु पन्तुवराळी वराळी' कल्याणी पूर्वीकल्याणी यमुनाकल्याणी हुसेनी जञ्झोटी कौमारी' कन्नड खरहरप्रिया कलहंस नादनामिकया मुखारी' तोडी पुन्नागवराळी काम्भोजी भैरवी' यदुकुलकाम्भोजी आनन्द्भैरवी शङ्कराभरण मोहन रेगुप्ती सौराष्ट्री' नीलाम्बरी गुणिकया मेघगर्जनी' हंसध्विन शोकवराळी मध्यमावती जेञ्जरुटी सुरटी' द्विजावन्ती मलयाम्बरी कापि परशुधनासरी देशिकतोडी' आहिरी वसन्तगौळी सन्तु केदारगौळा कनकाङ्गी रलाङ्गी गानमूर्तिं वनस्पति वाचस्पति दानवती मानरूपी सेनापति' हनुमत्तोडी धेनुका नाटकप्रिया कोकिलप्रिया रूपवती गायकप्रिया' वकुळाभरण चक्रवाक सूर्यकान्त हाटकाम्बरी झङ्कारध्विन' नटभैरवी गीर्वाणी हरिकाम्भोजी धीरशङ्कराभरण नागानिन्दिनी यागिप्रया' विसृमर सरस गानरसेत्यादि सन्तत सन्तन्यमान नित्योत्सव पक्षोत्सव मासोत्सव संवत्सरोत्सवादि विविधोत्सव कृतानन्दः' श्रीमदानन्दिनलयवासः' सतत पद्मालया पदपद्मरेणु सिच्चतवक्षःस्थल पटवासः' श्रीश्रीनिवासः' सुप्रसन्नो विजयताम्॥२॥

श्री अलर्मेल्मङ्गासमेत श्रीश्रीनिवास स्वामी' सुप्रीतः सुप्रसन्नो वरदो भूत्वा' पनस पाटली पालाश बिल्व पुन्नाग चूत कदळी चन्दन चम्पक मञ्जळ मन्दार हिन्तुळादि तिलक मातुलुङ्ग नारिकेळ कौञ्चाशोक माधूकामलक हिन्दुक नागकेतक पूर्णकुन्द पूर्ण गन्ध रस कन्द वन वञ्जळ खर्जूर साल कोविदार हिन्ताल पनस विकट वैकसवरुण तरुधमरण विचुळङ्काश्वत्थ यक्ष वसुध वर्माध मन्त्रिणी' तिन्त्रिणी बोध न्यग्रोध घटपटल जम्बूमतल्ली वसति वासती जीवनी पोषणी प्रमुख निखिल सन्दोह तमाल माला महित विराजमान चषक मयूर हंस भारद्वाज कोकिल चक्रवाक कपोत गरुड नारायण नानाविध पक्षिजाति समूह ब्रह्म-क्षत्रिय-वैश्य-शुद्ध-नानाजात्युद्भव

देवता निर्माण' माणिक्य-वज्र-वैडूर्य-गोमेधिक-पुष्यराग-पद्मरागेन्द्र प्रवाळमौक्तिक-स्फटिक-हेम-रत्नखचित धगद्धजायमान रथगज तुरग पदाति सेवा समूह' भेरी-मद्दळ-मुरवक-झ्लुरी-शङ्ख-काहळ नृत्यगीत-ताळवाद्य-कुम्भवाद्य-पञ्चमुखवाद्य अहमीमार्गन्नटीवाद्य किटिकुन्तलवाद्य सुरटीचौण्डोवाद्य तिमिलकविताळवाद्य तकराग्रवाद्य घण्टाताडन ब्रह्मताळ समताळ कोट्टरीताळ ढकरीताळ ऎकाळ' धारावाद्य पटह कांस्यवाद्य भरतनाट्यालङ्कार किन्नर किम्पुरुष रुद्रवीणा मुखवीणा वायुवीणा' तुम्बुरुवीणा गान्धर्ववीणा नारदवीणा' स्वरमण्डल रावणहस्तवीणास्तकियालङ्कियालङ्कतानेक-विधवाद्य वापीकूपतटाकादि गङ्गा यमुना रेवा वरुणा शोणनदी शोभनदी' सुवर्णमुखी वेगवती वेत्रवती क्षीरनदी बाहुनदी गरुडनदी कावेरी ताम्रपर्णी प्रमुखा महापुण्यनद्यः' सजलतीर्थैः सहोभयकूलङ्गत सदाप्रवाह ऋग्यजुःसामाथर्वण वेदशास्त्रेतिहासपुराण-सकलविद्याघोष भानुकोटिप्रकाश चन्द्रकोटिसमान नित्यकल्याण परम्परोत्तरोत्तराभिवृद्धिर्भूयादिति' भवन्तो महान्तोऽनुगृह्णन्तु। ब्रह्मण्यो राजा धार्मिकोऽस्तु। देशोऽयं

निरुपद्रवोऽस्तु। सर्वे साधुजनाः सुखिनो विलसन्तु। समस्तसन्मङ्गळानि सन्तु। उत्तरोत्तराभिवृद्धिरस्तु। सकलकल्याणसमृद्धिरस्तु॥३॥ ॥हरिः ॐ॥ ॥इति श्री श्रीशैलरङ्गाचार्यविरचितं श्री श्रीनिवासगद्यं सम्पूर्णम्॥

॥ नवग्रहस्तोत्रम्॥

जपाकुसुमसङ्काशं काश्यपेयं महद्युतिम् । तमोऽरि सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम् ॥१॥ दिधशङ्खतुषाराभं क्षीरोदार्णवसम्भवम् । नमामि शिशनं सोमं शम्भोर्मुकुटभूषणम् ॥२॥ धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्कान्तिसमप्रभम् । कुमारं शक्तिहस्तं च मङ्गलं प्रणमाम्यहम् ॥३॥ प्रियङ्गुकलिकाश्यामं रूपेणाप्रतिमं बुधम् । सौम्यं सौम्यगुणोपेतं तं बुधं प्रणमाम्यहम् ॥४॥

देवानां च ऋषीणां च गुरुं काञ्चनसन्निभम् । बुद्धिभूतं त्रिलोकेशं तं नमामि बृहस्पतिम् ॥५॥ हिमकुन्दमृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम् । सर्वशास्त्रप्रवक्तारं भार्गवं प्रणमाम्यहम् ॥६॥ नीलाञ्जनसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम्। छायामार्तण्डसम्भूतं तं नमामि शनैश्चरम् ॥७॥ अर्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्दनम् । सिंहिकागर्भसम्भूतं तं राहुं प्रणमाम्यहम् ॥८॥ पलाशपुष्पसङ्काशं तारकाग्रहमस्तकम् । रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं तं केतुं प्रणमाम्यहम् ॥९॥ इति व्यासमुखोद्गीतं यः पठेत् सुसमाहितः। दिवा वा यदि वा रात्रौ विघ्नशान्तिर्भविष्यति॥१०॥ नरनारीनृपाणां च भवेदुःस्वप्ननाशनम् । ऐश्वर्यमतुलं तेषामारोग्यं पुष्टिवर्धनम् ॥११॥ ग्रहनक्षत्रजाः पीडास्तस्कराग्निसमुद्भवाः। ताः सर्वाः प्रशमं यान्ति व्यासो ब्रूते न संशयः॥१२॥

॥ इति श्रीव्यासविरचितं नवग्रहस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

॥ नवग्रहपीडाहरस्तोत्रम्॥

ग्रहाणामादिरादित्यो लोकरक्षणकारकः। विषमस्थानसम्भूतां पीडां हरतु मे रविः॥१॥

रोहिणीशः सुधामूर्तिः सुधागात्रः सुधाशनः। विषमस्थानसम्भूतां पीडां हरतु मे विधुः॥२॥

भूमिपुत्रो महातेजा जगतां भयकृत् सदा। वृष्टिकृद्वृष्टिहर्ता च पीडां हरतु मे कुजः॥३॥

उत्पातरूपो जगतां चन्द्रपुत्रो महाद्युतिः। सूर्यप्रियकरो विद्वान् पीडां हरतु मे बुधः॥४॥

देवमन्त्री विशालाक्षः सदा लोकहिते रतः। अनेकशिष्यसम्पूर्णः पीडां हरतु मे गुरुः॥५॥

दैत्यमन्त्री गुरुस्तेषां प्राणदश्च महामतिः। प्रभुस्ताराग्रहाणां च पीडां हरतु मे भृगुः॥६॥ सूर्यपुत्रो दीर्घदेहो विशालाक्षः शिवप्रियः। मन्दचारः प्रसन्नात्मा पीडां हरतु मे शनिः॥७॥

महाशिरा महावक्रो दीर्घद्ंष्ट्रो महाबलः। अतनुश्चोर्ध्वकेशश्च पीडां हरतु मे शिखी॥८॥

अनेकरूपवर्णेश्च शतशोऽथ सहस्रशः। उत्पातरूपो जगतां पीडां हरतु मे तमः॥९॥

॥ इति ब्रह्माण्डपुराणोक्तं नवग्रहपीडाहरस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥



आरोग्यं प्रददातु नो दिनकरश्चन्द्रो यशो निर्मलम् भूतिं भूमिसुतः सुधांशुतनयः प्रज्ञां गुरुगौरवम् । काव्यः कोमलवाग्विलासमतुलं मन्दो मुदं सर्वदा राहुर्बाहुबलं विरोधशमनं केतुः कुलस्योन्नतिम् ॥



॥ दशरथकृत शनैश्चराष्टकम्॥

अस्य श्रीशनैश्चरस्तोत्रमन्त्रस्य दशरथ ऋषिः। शनैश्चरो देवता। त्रिष्टुप् छन्दः। शनैश्चरप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः। दशरथ उवाच

कोणोन्तको रौद्र यमोऽथ बभ्नुः कृष्णः शनिः पिङ्गलमन्दसौरिः। नित्यं स्मृतो यो हरते च पीडां तस्मै नमः श्रीरविनन्दनाय॥१॥ सुरासुराः किम्पुरुषोरगेन्द्रा गन्धर्वविद्याधरपन्नगाश्च। पीड्यन्ति सर्वे विषमस्थितेन तस्मै नमः श्रीरविनन्दनाय॥२॥ नरा नरेन्द्राः पशवो मृगेन्द्रो वन्याश्च ये कीटपतङ्गभृङ्गाः। पीड्यन्ति सर्वे विषमस्थितेन तस्मै नमः श्रीरविनन्दनाय ॥३॥ देशाश्च दुर्गाणि वनानि यत्र सेनानिषेशाः पुरपत्तनानि। पीड्यन्ति सर्वे विषमस्थितेन तस्मै नमः श्रीरविनन्दनाय ॥४॥ तिलैर्यवैर्माषगुडान्नदानैलेहिन नीलाम्बरदानतो वा। प्रीणाति मन्त्रेर्निजवासरे च तस्मै नमः श्रीरविनन्दनाय ॥५॥ प्रयागकूले यमुनातटे च सरस्वतीपुण्यजले गुहायाम् । यो योगिनां ध्यानगतोऽपि सूक्ष्मस्तस्मै नमः श्रीरविनन्दनाय॥६॥

अन्यप्रदेशात्स्वगृहं प्रविष्टस्तदीयवारे स नरः सुखी स्यात् । गृहाद्गतो यो न पुनः प्रयाति तस्मै नमः श्रीरविनन्दनाय॥७॥ स्रष्टा स्वयम्भूर्भुवनत्रयस्य त्राता हरीशो हरते पिनाकी। एकस्त्रिधा ऋग्यजुस्साममूर्तिस्तस्मै नमः श्रीरविनन्दनाय॥८॥ शन्यष्टकं यः प्रयतः प्रभाते नित्यं सुपुत्रैः पशुबान्धवैश्व। पठेत्तु सौख्यं भुवि भोगयुक्तः प्राप्नोति निर्वाणपदं तदन्ते ॥९॥ कोणस्थः पिङ्गलो बभ्रुः कृष्णो रौद्रोऽन्तको यमः। सौरिः शनैश्वरो मन्दः पिप्पलादेन संस्तुतः॥१०॥ एतानि दशनामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत् । शनैश्चरकृता पीडा न कदाचिद्भविष्यति॥११॥ ॥ इति श्री द्रारथकृतं श्री शनैश्वराष्ट्रकं सम्पूर्णम्॥

॥ विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम्॥

शुक्काम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम् । प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविद्योपशान्तये॥१॥ यस्य द्विरदवक्राद्याः पारिषद्याः परः शतम् । विघ्नं निघ्नन्ति सततं विष्वक्सेनं तमाश्रये॥२॥ नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् । देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत् ॥३॥ व्यासं वसिष्ठनप्तारं शक्तेः पौत्रमकल्मषम् । पराशरात्मजं वन्दे शुकतातं तपोनिधिम् ॥४॥ व्यासाय विष्णुरूपाय व्यासरूपाय विष्णवे। नमो वै ब्रह्मनिधये वासिष्ठाय नमो नमः॥५॥ अविकाराय शुद्धाय नित्याय परमात्मने। सदैकरूपरूपाय विष्णवे सर्वजिष्णवे॥६॥ यस्य स्मरणमात्रेण जन्मसंसारबन्धनात् । विमुच्यते नमस्तरमै विष्णवे प्रभविष्णवे॥७॥ 🕉 नमो विष्णवे प्रभविष्णवे

श्री वैशम्पायन उवाच

श्रुत्वा धर्मानशेषेण पावनानि च सर्वशः। युधिष्ठिरः शान्तनवं पुनरेवाभ्यभाषत॥८॥

श्री युधिष्ठिर उवाच

किमेकं दैवतं लोके किं वाऽप्येकं परायणम् । स्तुवन्तः कं कमर्चन्तः प्राप्नुयुर्मानवाः शुभम् ॥९॥

को धर्मः सर्वधर्माणां भवतः परमो मतः। किं जपन् मुच्यते जन्तुर्जन्मसंसारबन्धनात् ॥१०॥

श्री भीष्म उवाच

जगत्प्रभुं देवदेवमनन्तं पुरुषोत्तमम् । स्तुवन् नामसहस्रेण पुरुषः सततोत्थितः॥११॥

तमेव चार्चयन्नित्यं भक्त्या पुरुषमव्ययम् । ध्यायन् स्तुवन् नमस्यंश्च यजमानस्तमेव च॥१२॥

अनादिनिधनं विष्णुं सर्वलोकमहेश्वरम् । लोकाध्यक्षं स्तुवन्नित्यं सर्वदुःखातिगो भवेत् ॥१३॥

ब्रह्मण्यं सर्वधर्मज्ञं लोकानां कीर्तिवर्धनम् । लोकनाथं महद्भृतं सर्वभूतभवोद्भवम् ॥१४॥ एष में सर्वधर्माणां धर्मीऽधिकतमो मतः। यद्भक्त्या पुण्डरीकाक्षं स्तवैरर्चेन्नरः सदा॥१५॥ परमं यो महत्तेजः परमं यो महत्तपः। परमं यो महद्भक्ष परमं यः परायणम् ॥१६॥ पवित्राणां पवित्रं यो मङ्गलानां च मङ्गलम् । दैवतं दैवतानां च भूतानां योऽव्ययः पिता॥१७॥ यतः सर्वाणि भूतानि भवन्त्यादियुगागमे। यस्मिश्च प्रलयं यान्ति पुनरेव युगक्षये॥१८॥ तस्य लोकप्रधानस्य जगन्नाथस्य भूपते। विष्णोर्नामसहस्रं मे शृणु पापभयापहम् ॥१९॥ यानि नामानि गौणानि विख्यातानि महात्मनः। ऋषिभिः परिगीतानि तानि वक्ष्यामि भूतये॥२०॥ ऋषिनाम्नां सहस्रस्य वेदव्यासो महामुनिः। छन्दोऽनुष्ट्रप् तथा देवो भगवान् देवकीसुतः॥२१॥

अमृतांशूद्भवो बीजं शक्तिर्देवकिनन्दनः। त्रिसामा हृद्यं तस्य शान्त्यर्थे विनियुज्यते॥२२॥

विष्णुं जिष्णुं महाविष्णुं प्रभविष्णुं महेश्वरम् । अनेकरूपदैत्यान्तं नमामि पुरुषोत्तमं॥२३॥

॥ पूर्वन्यासः ॥

अस्य श्रीविष्णोर्दिव्यसहस्रनामस्तोत्रमहामन्त्रस्य। श्री वेदव्यासो भगवान् ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीमहाविष्णुः परमात्मा श्रीमन्नारायणो देवता। अमृतांश्क्रद्वो भानुरिति बीजम्। देवकीनन्दनः स्रष्टेति शक्तिः। उद्भवः क्षोभणो देव इति परमो मन्त्रः। शङ्खभृन्नन्दकी चक्रीति कीलकम्। शार्ङ्गधन्वा गदाधर इत्यस्त्रम्। रथाङ्गपाणिरक्षोभ्य इति नेत्रम्। त्रिसामा सामगः सामेति कवचम्। आनन्दं परब्रह्मोति योनिः। ऋतुः सुदर्शनः काल इति दिग्बन्धः।

श्रीविश्वरूप इति ध्यानम्। श्रीमहाविष्णुप्रीत्यर्थे सहस्रनामजपे विनियोगः॥ ॥ध्यानम्॥

क्षीरोदन्वत्प्रदेशे शुचिमणिविलसत्सैकतेमौक्तिकानाम् मालाक्कृप्तासनस्थः स्फटिकमणिनिभैमौक्तिकैर्मण्डिताङ्गः। शुभ्रैरभ्रैरदभ्रैरुपरिविरचितेर्मुक्तपीयूषवर्षैः

आनन्दी नः पुनीयादरिनिलनगदाशङ्खपाणिर्मुकुन्दः॥१॥

भूः पादौ यस्य नाभिर्वियदसुरिनलश्चन्द्रसूर्यौ च नेत्रे कर्णावाशाः शिरो द्यौर्मुखमिप दहनो यस्य वास्तेयमिब्धः। अन्तःस्थं यस्य विश्वं सुरनरखगगोभोगिगन्धर्वदैत्यैः चित्रं रंरम्यते तं त्रिभुवनवपुषं विष्णुमीशं नमामि॥२॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

> शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशम् विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम् । लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिहृद्ध्यानगम्यम् वन्दे विष्णुं भवभयहृरं सर्वलोकैकनाथम् ॥३॥

मेघश्यामं पीतकौशेयवासम् श्रीवत्साङ्कं कौस्तुभोद्भासिताङ्गम् । पुण्योपेतं पुण्डरीकायताक्षम् विष्णुं वन्दे सर्वलोकैकनाथम् ॥४॥

नमः समस्तभूतानामादिभूताय भूभृते। अनेकरूपरूपाय विष्णवे प्रभविष्णवे॥५॥

सद्यञ्चकं सिकरीटकुण्डलम् सपीतवस्त्रं सरसीरुहेक्षणम् । सहारवक्षःस्थलक्षोभिकौस्तुभम् नमामि विष्णुं शिरसा चतुर्भुजम् ॥६॥

छायायां पारिजातस्य हेमसिंहासनोपरि आसीनमम्बुद्रयाममायताक्षमलङ्कृतम् । चन्द्राननं चतुर्बाहुं श्रीवत्साङ्कितवक्षसम् रुक्मिणीसत्यभामाभ्यां सहितं कृष्णमाश्रये॥७॥

> ॥**हरिः ॐ॥** ॥विश्वस्मै नमः॥

विश्वं विष्णुर्वषद्भारो भूतभव्यभवत्प्रभुः। भूतकृद्भूतभृद्भावो भूतात्मा भूतभावनः॥१॥ पूतात्मा परमात्मा च मुक्तानां परमा गतिः। अव्ययः पुरुषः साक्षी क्षेत्रज्ञोऽक्षर एव च॥२॥ योगो योगविदां नेता प्रधानपुरुषेश्वरः। नारसिंहवपुः श्रीमान् केशवः पुरुषोत्तमः॥३॥ सर्वः शर्वः शिवः स्थाणुर्भूतादिनिधिरव्ययः। सम्भवो भावनो भर्ता प्रभवः प्रभुरीश्वरः॥४॥ स्वयम्भूः शम्भुरादित्यः पुष्कराक्षो महास्वनः। अनादिनिधनो धाता विधाता धातुरुत्तमः॥५॥ अप्रमेयो हृषीकेशः पद्मनाभोऽमरप्रभुः। विश्वकर्मा मनुस्त्वष्टा स्थविष्ठः स्थविरो ध्रुवः॥६॥ अग्राद्यः शाश्वतः कृष्णो लोहिताक्षः प्रतर्दनः। प्रभूतस्त्रिककुब्धाम पवित्रं मङ्गलं परम्॥७॥ ईशानः प्राणदः प्राणो ज्येष्ठः श्रेष्ठः प्रजापतिः। हिरण्यगर्भो भूगर्भो माधवो मधुसूद्नः॥८॥

ईश्वरो विक्रमी धन्वी मेधावी विक्रमः क्रमः। अनुत्तमो दुराधर्षः कृतज्ञः कृतिरात्मवान् ॥९॥ सुरेशः शरणं शर्म विश्वरेता प्रजाभवः। अहः संवत्सरो व्यालः प्रत्ययः सर्वदर्शनः॥१०॥ अजः सर्वेश्वरः सिद्धः सिद्धिः सर्वोदिरच्युतः। वृषाकिपरमेयात्मा सर्वयोगविनिःसृतः॥११॥ वसूर्वसुमनाः सत्यः समात्माऽसम्मितः समः। अमोघः पुण्डरीकाक्षो वृषकर्मा वृषाकृतिः॥१२॥ रुद्रो बहुशिरा बभुर्विश्वयोनिः शुचिश्रवाः। अमृतः शाश्वतः स्थाणुर्वरारोहो महातपाः॥१३॥ सर्वगः सर्वविद्धानुर्विष्वक्सेनो जनार्दनः। वेदो वेदविदव्यङ्गो वेदाङ्गो वेदवित् कविः॥१४॥ लोकाध्यक्षः सुराध्यक्षो धर्माध्यक्षः कृताकृतः। चतुर्व्यूहश्चतुर्दृष्टश्चतुर्भुजः॥१५॥ चतुरात्मा भ्राजिष्णुर्भोजनं भोक्ता सहिष्णुर्जगदादिजः। अनघो विजयो जेता विश्वयोनिः पुनर्वसुः॥१६॥

उपेन्द्रो वामनः प्रांशुरमोघः शुचिरूर्जितः। अतीन्द्रः सङ्ग्रहः सर्गो धृतात्मा नियमो यमः॥१७॥ वेद्यो वेद्यः सदायोगी वीरहा माधवो मधुः। अतीन्द्रियो महामायो महोत्साहो महाबलः॥१८॥ महाबुद्धिर्महावीर्यो महाशक्तिर्महाद्युतिः। अनिर्देश्यवपुः श्रीमानमेयात्मा महाद्रिधृक्॥१९॥ महेष्वासो महीभर्ता श्रीनिवासः सतां गतिः। अनिरुद्धः सुरानन्दो गोविन्दो गोविदां पतिः॥२०॥ मरीचिर्दमनो हंसः सुपर्णो भुजगोत्तमः। हिरण्यनाभः सुतपा पद्मनाभः प्रजापतिः॥२१॥

अमृत्युः सर्वदृक् सिंहः सन्धाता सन्धिमान् स्थिरः। अजो दुर्मर्षणः शास्ता विश्रुतात्मा सुरारिहा॥२२॥

गुरुर्गुरुतमो धाम सत्यः सत्यपराक्रमः। निमिषोऽनिमिषः स्रग्वी वाचस्पतिरुदारधीः॥२३॥ अग्रणीर्ग्रामणीः श्रीमान् न्यायो नेता समीरणः। सहस्रमूर्घा विश्वात्मा सहस्राक्षः सहस्रपात्॥२४॥ आवर्तनो निवृत्तात्मा संवृतः सम्प्रमर्दनः। अहः संवर्तको विह्नरिनेलो धरणीधरः॥२५॥ सुप्रसादः प्रसन्नात्मा विश्वधृग्विश्वभुग्विभुः। सत्कर्ता सत्कृतः साधुर्जहुर्नारायणो नरः॥२६॥

असङ्ख्येयोऽप्रमेयात्मा विशिष्टः शिष्टकृच्छुचिः। सिद्धार्थः सिद्धसङ्कल्पः सिद्धिदः सिद्धिसाधनः॥२७॥

वृषाही वृषभो विष्णुर्वृषपर्वा वृषोद्रः। वर्धनो वर्धमानश्च विविक्तः श्रुतिसागरः॥२८॥

सुभुजो दुर्घरो वाग्मी महेन्द्रो वसुदो वसुः। नैकरूपो बृहद्रूपः शिपिविष्टः प्रकाशनः॥२९॥

ओजस्तेजोद्युतिधरः प्रकाशात्मा प्रतापनः। ऋद्धः स्पष्टाक्षरो मन्त्रश्चन्द्रांशुर्भास्करद्युतिः॥३०॥

अमृतांशूद्भवो भानुः शशबिन्दुः सुरेश्वरः।

औषधं जगतः सेतुः सत्यधर्मपराक्रमः॥३१॥

भूतभव्यभवन्नाथः पवनः पावनोऽनलः। कामहा कामकृत्कान्तः कामः कामप्रदः प्रभुः॥३२॥ युगादिकृद्युगावर्तौ नैकमायो महारानः। अदृश्यो व्यक्तरूपश्च सहस्रजिदनन्तजित्॥३३॥

इप्टोऽविशिष्टः शिष्टेष्टः शिखण्डी नहुषो वृषः। कोधहा कोधकृत्कर्ता विश्वबाहुर्महीधरः॥३४॥

अच्युतः प्रथितः प्राणः प्राणदो वासवानुजः।

अपान्निधिरधिष्ठानमप्रमत्तः प्रतिष्ठितः॥३५॥

स्कन्दः स्कन्दधरो धुर्यो वरदो वायुवाहनः।

वासुदेवो बृहद्भानुरादिदेवः पुरन्दरः॥३६॥

अशोकस्तारणस्तारः शूरः शौरिर्जनेश्वरः।

अनुकूलः शतावर्तः पद्मी पद्मनिभेक्षणः॥३७॥

पद्मनाभोऽरविन्दाक्षः पद्मगर्भः शरीरभृत् ।

महर्द्धिर्ऋद्धो वृद्धात्मा महाक्षो गरुडध्वजः॥३८॥

अतुलः शरभो भीमः समयज्ञो हविर्हरिः।

सर्वलक्षणलक्षण्यो लक्ष्मीवान् समितिञ्जयः॥३९॥

विक्षरो रोहितो मार्गो हेतुर्दामोदरः सहः।

महीधरो महाभागो वेगवानमितारानः॥४०॥

उद्भवः क्षोभणो देवः श्रीगर्भः परमेश्वरः। करणं कारणं कर्ता विकर्ता गहनो गुहः॥४१॥

व्यवसायो व्यवस्थानः संस्थानः स्थानद्रो ध्रुवः।

परर्द्धिः परमस्पष्टस्तुष्टः पुष्टः शुभेक्षणः॥४२॥

रामो विरामो विरतो मार्गो नेयो नयोऽनयः। वीरः शक्तिमतां श्रेष्ठो धर्मो धर्मविद्वत्तमः॥४३॥

वैकुण्ठः पुरुषः प्राणः प्राणदः प्रणवः पृथुः। हिरण्यगर्भः शत्रुघ्नो व्याप्तो वायुरधोक्षजः॥४४॥

ऋतुः सुदर्शनः कालः परमेष्ठी परिग्रहः। उग्रः संवत्सरो दक्षो विश्रामो विश्वदक्षिणः॥४५॥

विस्तारः स्थावरः स्थाणुः प्रमाणं बीजमव्ययम् । अर्थोऽनर्थो महाकोशो महाभोगो महाधनः॥४६॥

अनिर्विण्णः स्थिविष्ठोऽभूर्धर्मयूपो महामखः। नक्षत्रनेमिर्नक्षत्री क्षमः क्षामः समीहनः॥४७॥ यज्ञ इज्यो महेज्यश्च कतुः सत्रं सतां गितः। सर्वदृशीं विमुक्तात्मा सर्वज्ञो ज्ञानमुक्तमम् ॥४८॥ सुव्रतः सुमुखः सूक्ष्मः सुघोषः सुखदः सुहृत् ।

मनोहरो जितकोधो वीरबाहुर्विदारणः ॥४९॥

स्वापनः स्ववशो व्यापी नैकात्मा नैककर्मकृत् ।

वत्सरो वत्सलो वत्सी रत्नगर्भो धनेश्वरः॥५०॥

धर्मगुब्धर्मकृद्धर्मी सदसत्क्षरमक्षरम् ।

अविज्ञाता सहस्रांशुर्विधाता कृतलक्षणः॥५१॥

गमस्तिनेमिः सत्त्वस्थः सिंहो भूतमहेश्वरः।

आदिदेवो महादेवो देवेशो देवभृद्गुरुः॥५२॥

उत्तरो गोपतिगींशा ज्ञानगम्यः पुरातनः।

शरीरभूतभृद्धोक्ता कपीन्द्रो भूरिदक्षिणः॥५३॥

सोमपोऽमृतपः सोमः पुरुजित् पुरुसत्तमः। विनयो जयः सत्यसन्धो दाश्चार्हः सात्त्वतां पितः॥५४॥ जीवो विनयितासाक्षी मुकुन्दोऽमितविक्रमः। अम्भोनिधिरनन्तात्मा महोद्धिशयोऽन्तकः॥५५॥ अजो महार्हः स्वाभाव्यो जितामित्रः प्रमोद्नः। आनन्दो नन्दनो नन्दः सत्यधर्मा त्रिविक्रमः॥५६॥ महर्षिः कपिलाचार्यः कृतज्ञो मेदिनीपितः। त्रिपदस्त्रिदशाध्यक्षो महाश्वज्ञः कृतान्तकृत् ॥५७॥ महावराहो गोविन्दः सुषेणः कनकाङ्गदी। गुह्यो गभीरो गहनो गुप्तश्चकगदाधरः॥५८॥

वेधाः स्वाङ्गोऽजितः कृष्णो दृढः सङ्कर्षणोऽच्युतः। वरुणो वारुणो वृक्षः पुष्कराक्षो महामनाः॥५९॥

भगवान् भगहाऽऽनन्दी वनमाली हलायुधः। आदित्यो ज्योतिरादित्यः सहिष्णुर्गतिसत्तमः॥६०॥

सुधन्वा खण्डपरशुर्दारुणो द्रविणप्रदः। दिवःस्पृक् सर्वदृग्व्यासो वाचस्पतिरयोनिजः॥६१॥

त्रिसामा सामगः साम निर्वाणं भेषजं भिषक्। सन्न्यासकृच्छमः शान्तो निष्ठा शान्तिः परायणम् ॥६२॥

शुभाङ्गः शान्तिदः स्रष्टा कुमुदः कुवलेशयः। गोहितो गोपतिर्गोप्ता वृषभाक्षो वृषप्रियः॥६३॥ अनिवर्ती निवृत्तात्मा सङ्क्षेप्ता क्षेमकृच्छिवः। श्रीवत्सवक्षाः श्रीवासः श्रीपतिः श्रीमतां वरः॥६४॥ श्रीदः श्रीशः श्रीनिवासः श्रीनिधिः श्रीविभावनः।

श्रीधरः श्रीकरः श्रेयः श्रीमाँह्योकत्रयाश्रयः॥६५॥

स्वक्षः स्वङ्गः शतानन्दो नन्दिज्यौतिर्गणेश्वरः।

विजितात्माऽविधेयात्मा सत्कीर्तिरिछन्नसंशयः॥६६॥

उदीर्णः सर्वतश्रक्षरनीशः शाश्वतः स्थिरः।

भूशयो भूषणो भूतिर्विशोकः शोकनाशनः॥६७॥

अर्चिष्मानर्चितः कुम्भो विशुद्धात्मा विशोधनः।

अनिरुद्धोऽप्रतिरथः प्रद्युम्नोऽमितविक्रमः॥६८॥

कालनेमिनिहा वीरः शौरिः शूरजनेश्वरः।

त्रिलोकात्मा त्रिलोकेशः केशवः केशिहा हरिः॥६९॥

कामदेवः कामपालः कामी कान्तः कृतागमः।

अनिर्देश्यवपुर्विष्णुर्वीरोऽनन्तो धनञ्जयः॥७०॥

ब्रह्मण्यो ब्रह्मकृद्-ब्रह्मा ब्रह्म ब्रह्मविवर्धनः।

ब्रह्मविद्-ब्राह्मणो ब्रह्मी ब्रह्मज्ञो ब्राह्मणप्रियः॥७१॥

महाक्रमो महाकर्मा महातेजा महोरगः। महाक्रतुर्महायज्वा महायज्ञो महाहविः॥७२॥ स्तव्यः स्तवप्रियः स्तोत्रं स्तुतिः स्तोता रणप्रियः।

पूर्णः पूरियता पुण्यः पुण्यकीर्तिरनामयः॥७३॥

मनोजवस्तीर्थकरो वसुरेता वसुप्रदः। वसुप्रदो वासुदेवो वसुर्वसुमना हविः॥७४॥

सद्गतिः सत्कृतिः सत्ता सद्भृतिः सत्परायणः।

शूरसेनो यदुश्रेष्ठः सन्निवासः सुयामुनः॥७५॥

भूतावासो वासुदेवः सर्वासुनिलयोऽनलः।

द्र्पहा द्र्पदो द्वा दुर्घरोऽथापराजितः॥७६॥

विश्वमूर्तिर्महामूर्तिर्दीप्तमूर्तिरमूर्तिमान् ।

अनेकमूर्तिरव्यक्तः शतमूर्तिः शताननः॥७७॥

एको नैकः सवः कः किं यत् तत्पदमनुत्तमम् । लोकबन्धुर्लोकनाथो माधवो भक्तवत्सलः॥७८॥

सुवर्णवर्णो हेमाङ्गो वराङ्गश्चन्दनाङ्गदी। वीरहा विषमः शून्यो घृताशीरचलश्चलः॥७९॥

अमानी मानदो मान्यो लोकस्वामी त्रिलोकधृक् । सुमेधा मेधजो धन्यः सत्यमेधा धराधरः॥८०॥ तेजोवृषो द्युतिधरः सर्वशस्त्रभृतां वरः।
प्रग्रहो निग्रहो व्यग्नो नैकश्वः गदाग्रजः॥८१॥
चतुर्मूर्तिश्चतुर्बाहुश्चतुर्व्यूहश्चतुर्गतिः ।
चतुरात्मा चतुर्भावश्चतुर्वेद्विदेकपात् ॥८२॥
समावर्तोऽनिवृत्तात्मा दुर्जयो दुरितकमः।
दुर्लभो दुर्गमो दुर्गो दुरावासो दुर्रारिहा॥८३॥
शुभाङ्गो लोकसारङ्गः सुतन्तुस्तन्तुवर्धनः।
इन्द्रकर्मा महाकर्मा कृतकर्मा कृतागमः॥८४॥
उद्भवः सुन्दरः सुन्दो रत्ननाभः सुलोचनः।
अर्को वाजसनः शृङ्गी जयन्तः सर्वविज्ञयी॥८५॥

सुवर्णबिन्दुरक्षोभ्यः सर्ववागीश्वरेश्वरः। महाह्रदो महागर्तो महाभूतो महानिधिः॥८६॥

कुमुदः कुन्दरः कुन्दः पर्जन्यः पावनोऽनिलः। अमृताशोऽमृतवपुः सर्वज्ञः सर्वतोमुखः॥८७॥ सुलभः सुव्रतः सिद्धः शत्रुजिच्छत्रुतापनः। न्यग्रोधोऽदुम्बरोऽश्वत्थश्चाणूरान्ध्रनिषूदनः॥८८॥ सहस्रार्चिः सप्तजिह्नः सप्तैधाः सप्तवाहनः। अमृर्तिरनघोऽचिन्त्यो भयकृद्भयनाशनः॥८९॥

अणुर्बृहत् कृशः स्थूलो गुणभृन्निर्गुणो महान् ।

अधृतः स्वधृतः स्वास्यः प्राग्वंशो वंशवर्धनः॥९०॥

भारभृत् कथितो योगी योगीदाः सर्वकामदः।

आश्रमः श्रमणः क्षामः सुपर्णो वायुवाहनः॥९१॥

धनुर्धरो धनुर्वेदो दण्डो दमयिता दमः।

अपराजितः सर्वसहो नियन्ताऽनियमोऽयमः॥९२॥

सत्त्ववान् सात्त्विकः सत्यः सत्यधर्मपरायणः।

अभिप्रायः प्रियार्होऽर्हः प्रियकृत् प्रीतिवर्धनः॥९३॥

विहायसगतिज्यौतिः सुरुचिर्हृतभुग्विभुः।

रविर्विरोचनः सूर्यः सविता रविलोचनः॥९४॥

अनन्तो हुतभुग्भोक्ता सुखदो नैकजोऽग्रजः।

अनिर्विण्णः सदामर्षी लोकाधिष्ठानमद्भुतः॥९५॥

सनात् सनातनतमः कपिलः कपिरव्ययः। स्वस्तिदः स्वस्तिकृत् स्वस्ति स्वस्तिभुक् स्वस्तिदक्षिणः॥९६॥

अरौद्रः कुण्डली चक्री विकम्यूर्जितशासनः। शब्दातिगः शब्दसहः शिशिरः शर्वरीकरः॥९७॥ अक्रूरः पेशलो दक्षो दक्षिणः क्षमिणां वरः। विद्वत्तमो वीतभयः पुण्यश्रवणकीर्तनः॥९८॥ उत्तारणो दुष्कृतिहा पुण्यो दुःस्वप्ननाशनः। वीरहा रक्षणः सन्तो जीवनः पर्यवस्थितः॥९९॥ अनन्तरूपोऽनन्तश्रीर्जितमन्युर्भयापहः चतुरश्रो गभीरात्मा विदिशो व्यादिशो दिशः॥ १००॥ अनादिर्भूभुवो लक्ष्मीः सुवीरो रुचिराङ्गदः। जननो जनजन्मादिर्भीमो भीमपराक्रमः॥१०१॥ आधारनिलयोऽधाता पुष्पहासः प्रजागरः। ऊर्ध्वगः सत्पथाचारः प्राणदः प्रणवः पणः॥१०२॥ प्रमाणं प्राणनिलयः प्राणभृत् प्राणजीवनः। तत्त्वं तत्त्वविदेकात्मा जन्ममृत्युजरातिगः॥१०३॥ भूर्भुवःस्वस्तरुस्तारः सविता प्रपितामहः। यज्ञो यज्ञपतिर्यज्वा यज्ञाङ्गो यज्ञवाहनः॥१०४॥

यज्ञभृद्-यज्ञकृद्-यज्ञी यज्ञभुग्-यज्ञसाधनः। यज्ञान्तकृद्-यज्ञगुह्यमन्नमन्नाद एव च॥१०५॥

आत्मयोनिः स्वयञ्जातो वैखानः सामगायनः।

देवकीनन्दनः स्रष्टा क्षितीशः पापनाशनः॥१०६॥

राङ्गभृत्रन्दकी चक्री शार्क्गधन्वा गदाधरः। रथाङ्गपाणिरक्षोभ्यः सर्वप्रहरणायुधः॥१०७॥

सर्वप्रहरणायुध ॐ नम इति।

वनमाली गदी शार्झी शक्की च नन्दकी। श्रीमान् नारायणो विष्णुर्वासुदेवोऽभिरक्षतु॥१०८॥ श्री वासुदेवोऽभिरक्षतु ॐ नम इति।

॥फलश्रुति श्लोकाः॥

इतीदं कीर्तनीयस्य केशवस्य महात्मनः। नाम्नां सहस्रं दिव्यानामशेषेण प्रकीर्तितम् ॥१॥ य इदं शृणुयान्नित्यं यश्चापि परिकीर्तयेत्। नाशुभं प्राप्नुयात् किश्चित् सोऽमुत्रेह च मानवः॥२॥

वेदान्तगो ब्राह्मणः स्यात् क्षत्रियो विजयी भवेत् । वैश्यो धनसमृद्धः स्याच्छूदः सुखमवाप्नुयात् ॥३॥ प्राप्नुयाद्धर्ममर्थार्थी चार्थमाप्नुयात् । कामानवाप्नुयात् कामी प्रजार्थी चऽऽप्नुयात्प्रजाम् ॥४॥ भक्तिमान् यः सदोत्थाय शुचिस्तद्गतमानसः। सहस्रं वासुदेवस्य नाम्नामेतत् प्रकीर्तयेत् ॥५॥ यशः प्राप्नोति विपुलं याति प्राधान्यमेव च। अचलां श्रियमाप्नोति श्रेयः प्राप्नोत्यनुत्तमम् ॥६॥ न भयं कचिदाप्नोति वीर्यं तेजश्च विन्दति। भवत्यरोगो द्युतिमान् बलरूपगुणान्वितः॥७॥ रोगार्तो मुच्यते रोगाद्वद्वो मुच्येत बन्धनात् । भयान्मुच्येत भीतस्तु मुच्येतऽऽपन्न आपदः॥८॥ दुर्गाण्यतितरत्याशु पुरुषः पुरुषोत्तमम् । स्तुवन्नामसहस्रेण नित्यं भक्तिसमन्वितः॥९॥ वासुदेवाश्रयो मर्त्यो वासुदेवपरायणः। सर्वपापविशुद्धात्मा याति ब्रह्म सनातनम् ॥१०॥

न वासुदेवभक्तानामशुभं विद्यते कचित्। जन्ममृत्युजराव्याधिभयं नैवोपजायते॥११॥ इमं स्तवमधीयानः श्रद्धाभक्तिसमन्वितः। युज्येतऽऽत्मसुखक्षान्तिश्रीधृतिस्मृतिकीर्तिभिः॥१२॥ न क्रोधो न च मात्सर्यं न लोभो नाशुभा मतिः। भवन्ति कृतपुण्यानां भक्तानां पुरुषोत्तमे॥१३॥ द्यौः सचन्द्रार्कनक्षत्रा खं दिशो भूमेहोद्धिः। वासुदेवस्य वीर्येण विधृतानि महात्मनः॥१४॥ सस्रास्रगन्धर्वं सयक्षोरगराक्षसम्। जगद्वशे वर्ततेदं कृष्णस्य सचराचरम् ॥१५॥ इन्द्रियाणि मनो बुद्धिः सत्त्वं तेजो बलं धृतिः। वासुदेवात्मकान्याहुः क्षेत्रं क्षेत्रज्ञ एव च॥१६॥ सर्वागमानामाचारः प्रथमं परिकल्पते। आचारप्रभवो धर्मो धर्मस्य प्रभुरच्युतः॥१७॥ ऋषयः पितरो देवा महाभूतानि धातवः। जङ्गमाजङ्गमं चेदं जगन्नारायणोद्भवम् ॥१८॥

योगो ज्ञानं तथा साह्यं विद्याः शिल्पादि कर्म च। वेदाः शास्त्राणि विज्ञानमेतत्सर्वं जनार्दनात् ॥१९॥ एको विष्णुर्महद्भूतं पृथग्भूतान्यनेकशः। त्रीँह्योकान् व्याप्य भूतात्मा भुक्के विश्वभुगव्ययः॥२०॥ इमं स्तवं भगवतो विष्णोर्व्यासेन कीर्तितम् । पठेद्य इच्छेत् पुरुषः श्रेयः प्राप्तुं सुखानि च॥२१॥ विश्वेश्वरमजं देवं जगतः प्रभुमव्ययम् । भजन्ति ये पुष्कराक्षं न ते यान्ति पराभवम् ॥२२॥

> न ते यान्ति पराभवम् ॐ नम इति। अर्जुन उवाच

पद्मपत्रविशालाक्ष पद्मनाभ सुरोत्तम। भक्तानामनुरक्तानां त्राता भव जनार्दन॥२३॥

श्रीभगवानुवाच

यो मां नामसहस्रोण स्तोतुमिच्छति पाण्डव। सोऽहमेकेन श्लोकेन स्तुत एव न संशयः॥२४॥ स्तुत एव न संशय ॐ नम इति। व्यास उवाच वासनाद्वासुदेवस्य वासितं भुवनत्रयम् । सर्वभूतनिवासोऽसि वासुदेव नमोऽस्तु ते॥२५॥ श्री वासुदेव नमोऽस्तुत ॐ नम इति। पार्वत्युवाच

केनोपायेन लघुना विष्णोर्नामसहस्रकम् । पठ्यते पण्डितैर्नित्यं श्रोतुमिच्छाम्यहं प्रभो॥२६॥

श्री ईश्वर उवाच श्रीराम राम रामेति रमे रामे मनोरमे। सहस्रनाम तत्तुल्यं राम नाम वरानने॥२७॥ श्रीरामनाम वरानन ॐ नम इति।

ब्रह्मोवाच

नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे। सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्रकोटियुगधारिणे नमः॥२८॥ सहस्रकोटियुगधारिणे नम ॐ नम इति। सञ्जय उवाच यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः। तत्र श्रीविंजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम॥२९॥ श्रीभगवानुवाच

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते। तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥३०॥ परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् । धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥३१॥

> आर्ता विषण्णाः शिथिलाश्च भीताः घोरेषु च व्याधिषु वर्तमानाः। सङ्कीर्त्य नारायणशब्दमात्रम् विमुक्तदुःखाः सुखिनो भवन्तु॥३२॥

कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा बुद्ध्याऽऽत्मना वा प्रकृतेः स्वभावात् । करोमि यद्यत् सकलं परस्मै नारायणायेति समर्पयामि॥ ॥ॐ तत्सदिति श्रीमन्महाभारते शतसाहस्त्यां संहितायां

॥ ॐ तत्सादात श्रामन्महाभारत शतसाहरूया साहताया वैयासिक्याम् आनुशासनिकपर्वणि श्री भीष्मयुधिष्ठिरसंवादे श्री विष्णोर्दिव्यसहस्रनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥



॥ शिवसहस्रनामस्तोत्रम्॥

शुक्काम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम् । प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये॥

नमोऽस्तु ते व्यास विशालबुद्धे फुल्लारविन्दायतपत्रनेत्र। येन त्वया भारततैलपूर्णः प्रज्वालितो ज्ञानमयः प्रदीपः॥

> नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् । देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत् ॥

वन्दे शम्भुमुमापितं सुरगुरुं वन्दे जगत्कारणम् वन्दे पन्नगभूषणं मृगधरं वन्दे पशूनां पितम् । वन्दे सूर्यशशाङ्कविह्ननयनं वन्दे मुकुन्दिप्रियम् वन्दे भक्तजनाश्रयं च वरदं वन्दे शिवं शङ्करम् ॥

॥ पूर्वभागः ॥

युधिष्ठिर उवाच

त्वयाऽऽपगेय नामानि श्रुतानीह जगत्पतेः। पितामहेशाय विभोर्नामान्याचक्ष्व शम्भवे॥१॥

बभ्रवे विश्वरूपाय महाभाग्यं च तत्त्वतः। सुरासुरगुरौ देवे शङ्करेऽव्यक्तयोनये॥२॥ भीष्म उवाच अशक्तोऽहं गुणान् वक्तं महादेवस्य धीमतः। यो हि सर्वगतो देवो न च सर्वत्र दृश्यते॥३॥ ब्रह्मविष्णुसुरेशानां स्त्रष्टा च प्रभुरेव च। ब्रह्मादयः पिशाचान्ता यं हि देवा उपासते ॥४॥ प्रकृतीनां परत्वेन पुरुषस्य च यः परः। चिन्त्यते यो योगविद्भिर्ऋषिभिस्तत्त्वदर्शिभिः॥५॥ प्रकृतिं पुरुषं चैव क्षोभियत्वा स्वतेजसा। ब्रह्माणमसुजत् तस्माद्देवदेवः प्रजापितः॥६॥ को हि शक्तो गुणान् वक्तुं देवदेवस्य धीमतः। गर्भजन्मजरायुक्तो मर्त्यौ मृत्युसमन्वितः॥७॥ को हि शक्तो भवं ज्ञातुं मद्विधः परमेश्वरम् । ऋते नारायणात् पुत्र शङ्खचकगदाधरात् ॥८॥ एष विद्वान् गुणश्रेष्ठो विष्णुः परमदुर्जयः। दिव्यचक्षुर्महातेजा वीक्ष्यते योगचक्षुषा॥९॥

रुद्रभक्त्या तु कृष्णेन जगदुव्याप्तं महात्मना। तं प्रसाद्य तदा देवं बदर्यां किल भारत॥१०॥ अर्थात् प्रियतरत्वं च सर्वलोकेषु वै तदा। प्राप्तवानेव राजेन्द्र सुवर्णाक्षान्महेश्वरात् ॥११॥ पूर्णं वर्षसहस्रं तु तप्तवानेष माधवः। प्रसाद्य वरदं देवं चराचरगुरुं शिवम् ॥ १२॥ युगे युगे तु कृष्णेन तोषितो वै महेश्वरः। भक्त्या परमया चैव प्रीतश्चैव महात्मनः॥१३॥ ऐश्वर्यं यादृशं तस्य जगद्योनेर्महात्मनः। तद्यं दृष्टवान् साक्षात् पुत्रार्थे हरिरच्युतः॥१४॥ यस्मात परतरं चैव नान्यं पश्यामि भारत। व्याख्यातुं देवदेवस्य राक्तो नामान्यरोषतः॥१५॥ एष शक्तो महाबाहुर्वक्तं भगवतो गुणान् । विभूतिं चैव कार्त्स्येन सत्यां माहेश्वरीं नृप॥१६॥ सुरासुरगुरो देव विष्णो त्वं वक्तम् अर्हसि। शिवाय शिवरूपाय यन्माऽपृच्छद्युधिष्ठिरः॥१७॥

नाम्नां सहस्रं देवस्य तिण्डिना ब्रह्मवादिना। निवेदितं ब्रह्मलोके ब्रह्मणो यत् पुराऽभवत् ॥१८॥

द्वैपायनप्रभृतयस्तथा चेमे तपोधनाः। ऋषयः सुव्रता दान्ताः शृण्वन्तु गदतस्तव॥१९॥ वासुदेव उवाच

न गतिः कर्मणां शक्या वेत्तुमीशस्य तत्त्वतः। हिरण्यगर्भप्रमुखा देवाः सेन्द्रा महर्षयः॥२०॥

न विदुर्यस्य निधनम् आदिं वा सूक्ष्मदिर्शनः। स कथं नाममात्रेण शक्यो ज्ञातुं सतां गतिः॥२१॥

तस्याहम् असुरघ्नस्य कांश्चिद्भगवतो गुणान् । भवतां कीर्तयिष्यामि व्रतेशाय यथातथम् ॥२२॥

वैशम्पायन उवाच

एवमुक्तवा तु भगवान् गुणांस्तस्य महात्मनः। उपस्पृश्य शुचिर्भूत्वा कथयामास धीमतः॥२३॥

वासुदेव उवाच

ततः स प्रयतो भूत्वा मम तात युधिष्ठिर। प्राञ्जलिः प्राह विप्रर्षिर्नामसङ्ग्रहामादितः॥२४॥

उपमन्युरुवाच

ब्रह्मप्रोक्तेर्ऋषिप्रोक्तेर्वेदवेदाङ्गसम्भवैः सर्वलोकेषु विख्यातं स्तुत्यं स्तोष्यामि नामभिः॥२५॥ महद्भिविहितैः सत्यैः सिद्धैः सर्वार्थसाधकैः। ऋषिणा तण्डिना भक्त्या कृतैर्वेदकृतात्मना॥२६॥ यथोक्तैः साधुभिः ख्यातैर्मुनिभिस्तत्त्वद्शिभिः। प्रवरं प्रथमं स्वर्ग्यं सर्वभूतिहतं शुभम् ॥२७॥ श्रुतैः सर्वत्र जगित ब्रह्मलोकावतारितैः। सत्येस्तत् परमं ब्रह्म ब्रह्मप्रोक्तं सनातनम् । वक्ष्ये यदुकुलश्रेष्ठ शृणुष्वावहितो मम॥२८॥ वरयैनं भवं देवं भक्तस्त्वं परमेश्वरम्। तेन ते श्रावियष्यामि यत् तदुब्रह्म सनातनम् ॥२९॥ न शक्यं विस्तरात् कृत्स्नं वक्तुं शर्वस्य केनचित् । युक्तेनापि विभूतीनामपि वर्षशतैरपि॥३०॥

यस्यादिर्मध्यमन्तं च सुरैरपि न गम्यते। कस्तस्य शक्रुयाद्वक्तं गुणान् कात्स्र्येन माधव॥३१॥ किं तु देवस्य महतः सङ्खिप्तार्थपदाक्षरम् । शक्तितश्चरितं वक्ष्ये प्रसादात् तस्य धीमतः॥३२॥ अप्राप्य तु ततोऽनुज्ञां न शक्यः स्तोतुमीश्वरः। यदा तेनाभ्यनुज्ञातः स्तुतो वै स तदा मया॥३३॥ अनादिनिधनस्याहं जगद्योनेर्महात्मनः। नाम्नां कञ्चित् समुद्देश्यं वक्ष्याम्यव्यक्तयोनिनः॥ ३४॥ वरदस्य वरेण्यस्य विश्वरूपस्य धीमतः। शृणु नाम्नां चयं कृष्ण यदुक्तं पद्मयोनिना॥३५॥ दशनामसहस्राणि यान्याह प्रपितामहः। तानि निर्मथ्य मनसा द्ध्रो घृतमिवोद्धतम् ॥३६॥ गिरेः सारं यथा हेम पुष्पसारं यथा मधु। घृतात् सारं यथा मण्डस्तथैतत् सारमुद्भतम् ॥३७॥ सर्वपापापहमिदं चतुर्वेदसमन्वितम्।

प्रयत्नेनाधिगन्तव्यं धार्यं च प्रयतात्मना॥३८॥

सर्वभूतात्मभूतस्य हरस्यामिततेजसः। अष्टोत्तरसहस्रं तु नाम्नां शर्वस्य मे शृणु। यच्छुत्वा मनुजव्याघ्र सर्वान् कामानवाप्स्यसि॥३९॥

॥ध्यानम्॥

शान्तं पद्मानस्थं शशिधरमुकुटं पञ्चवक्रं त्रिनेत्रम् शूलं वज्रं च खड्गं परशुमभयदं दक्षभागे वहन्तम् । नागं पाशं घण्टां प्रलयहुतवहं साङ्कशं वामभागे नानालङ्कारयुक्तं स्फटिकमणिनिभं पार्वतीशं नमामि॥

॥स्तोत्रम्॥

ॐ स्थिरः स्थाणुः प्रभुर्भीमः प्रवरो वरदो वरः। सर्वात्मा सर्वविख्यातः सर्वः सर्वकरो भवः॥१॥ जटी चर्मी शिखण्डी च सर्वाङ्गः सर्वभावनः। हरश्च हरिणाक्षश्च सर्वभूतहरः प्रभुः॥२॥ प्रवृत्तिश्च निवृत्तिश्च नियतः शाश्वतो ध्रुवः। इमशानवासी भगवान् खचरो गोचरोऽर्दनः॥३॥

अभिवाद्यो महाकर्मा तपस्वी भूतभावनः। उन्मत्तवेषप्रच्छन्नः सर्वलोकप्रजापतिः॥४॥ महारूपो महाकायो वृषरूपो महायशाः। महात्मा सर्वभूतात्मा विश्वरूपो महाहनुः॥५॥ लोकपालोऽन्तर्हितात्मा प्रसादो हयगर्दभिः। पवित्रं च महांश्चैव नियमो नियमाश्रितः॥६॥ सर्वकर्मा स्वयम्भूत आदिरादिकरो निधिः। सहस्राक्षो विशालाक्षः सोमो नक्षत्रसाधकः॥७॥ चन्द्रः सूर्यः शनिः केतुर्यहो ग्रहपतिर्वरः। अत्रिरत्र्यानमस्कर्ता मुगबाणार्पणोऽनघः॥८॥ महातपा घोरतपा अदीनो दीनसाधकः। संवत्सरकरो मन्त्रः प्रमाणं परमं तपः॥९॥ योगी योज्यो महाबीजो महारेता महाबलः। सुवर्णरेताः सर्वज्ञः सुबीजो बीजवाहनः॥१०॥ दशबाहुस्त्विनिमिषो नीलकण्ठ उमापितः। विश्वरूपः स्वयंश्रेष्ठो बलवीरोऽबलो गणः॥११॥

गणकर्ता गणपतिर्दिग्वासाः काम एव च। मन्त्रवित परमो मन्त्रः सर्वभावकरो हरः॥१२॥ कमण्डल्रधरो धन्वी बाणहस्तः कपालवान् । अरानी रातघ्नी खड़ी पट्टिशी चऽऽयुधी महान् ॥१३॥ स्रवहस्तः सुरूपश्च तेजस्तेजस्करो निधिः। उष्णिषी च सुवऋश्व उद्यो विनतस्तथा॥१४॥ दीर्घश्च हरिकेशश्च सुतीर्थः कृष्ण एव च। सृगालरूपः सिद्धार्थौ मुण्डः सर्वशुभङ्करः॥१५॥ अजश्च बहुरूपश्च गन्धधारी कपर्द्यपि। ऊर्ध्वरेता ऊर्ध्वलिङ्ग ऊर्ध्वशायी नभःस्थलः॥१६॥ त्रिजटी चीरवासाश्च रुद्रः सेनापतिर्विभुः। अहश्चरो नक्तञ्चरस्तिग्ममन्युः सुवर्चसः॥१७॥ गजहा दैत्यहा कालो लोकधाता गुणाकरः। सिंहशार्दूलरूपश्च आर्द्रचर्माम्बरावृतः॥१८॥ कालयोगी महानादः सर्वकामश्चतुष्पथः। निशाचरः प्रेतचारी भूतचारी महेश्वरः॥१९॥

बहुभूतो बहुधरः स्वर्भानुरमितो गतिः। नृत्यप्रियो नित्यनर्तो नर्तकः सर्वलालसः॥२०॥ घोरो महातपाः पाशो नित्यो गिरिरुहो नभः। सहस्रहस्तो विजयो व्यवसायो ह्यतन्द्रितः॥२१॥ अधर्षणो धर्षणात्मा यज्ञहा कामनाशकः। दक्षयागापहारी च सुसहो मध्यमस्तथा॥२२॥ तेजोपहारी बलहा मुदितोऽर्थोऽजितो वरः। गम्भीरघोषो गम्भीरो गम्भीरबलवाहनः॥२३॥ न्ययोधरूपो न्ययोधो वृक्षकर्णस्थितिर्विभुः। सुतीक्ष्णद्दानश्चेव महाकायो महाननः॥२४॥ विष्वक्सेनो हरिर्यज्ञः संयुगापीडवाहनः। तीक्ष्णतापश्च हर्यश्वः सहायः कर्मकालवित् ॥२५॥ विष्णुप्रसादितो यज्ञः समुद्रो बडवामुखः। हुताशनसहायश्च प्रशान्तात्मा हुताशनः॥२६॥ उग्रतेजा महातेजा जन्यो विजयकालवित् । ज्योतिषामयनं सिद्धिः सर्वविग्रह एव च॥२७॥

शिखी मुण्डी जटी ज्वाली मूर्तिजो मूर्घजो बली। वैणवी पणवी ताली खली कालकटङ्कटः॥२८॥ नक्षत्रविग्रहमतिर्गुणबुद्धिर्रुयोऽगमः प्रजापतिर्विश्वबाहुर्विभागः सर्वगोऽमुखः॥२९॥ विमोचनः सुसरणो हिरण्यकवचोद्भवः। मेढूजो बलचारी च महीचारी स्रुतस्तथा॥३०॥ सर्वतूर्यविनोदी च सर्वातोद्यपरिग्रहः। व्यालरूपो गुहावासी गुहो माली तरङ्गवित् ॥३१॥ त्रिदशस्त्रिकालधृक् कर्मसर्वबन्धविमोचनः। बन्धनस्त्वसुरेन्द्राणां युधि शत्रुविनाशनः॥३२॥ साह्यप्रसादो दुर्वासाः सर्वसाधनिषेवितः। प्रस्कन्दनो विभागज्ञोऽतुल्यो यज्ञविभागवित् ॥३३॥ सर्ववासः सर्वचारी दुर्वासा वासवोऽमरः। हैमो हेमकरो यज्ञः सर्वधारी धरोत्तमः॥३४॥ लोहिताक्षो महाक्षश्च विजयाक्षो विशारदः। सङ्ग्रहो निग्रहः कर्ता सर्पचीरनिवासनः॥३५॥

मुख्योऽमुख्यश्च देहश्च काहिलः सर्वकामदः। सर्वकालप्रसादश्च सुबलो बलरूपधृक्॥ ३६॥ सर्वकामवरश्चैव सर्वदः सर्वतोमुखः। आकाशनिर्विरूपश्च निपाती ह्यवशः खगः॥३७॥ रौद्ररूपोंऽशुरादित्यो बहुरिंमः सुवर्चसी। वसुवेगो महावेगो मनोवेगो निशाचरः॥३८॥ सर्ववासी श्रियावासी उपदेशकरोऽकरः। मुनिरात्मनिरालोकः सम्भग्नश्च सहस्रदः॥३९॥ पक्षी च पक्षरूपश्च अतिदीप्तो विशाम्पतिः। उन्मादो मदनः कामो ह्यश्वत्थोऽर्थकरो यदाः॥४०॥ वामदेवश्च वामश्च प्राग्दक्षिणश्च वामनः। सिद्धयोगी महर्षिश्च सिद्धार्थः सिद्धसाधकः॥४१॥ भिक्षुश्च भिक्षुरूपश्च विपणो मृदुरव्ययः। महासेनो विशाखश्च षष्ठिभागो गवां पतिः॥४२॥ वज्रहस्तश्च विष्कम्भी चमूस्तम्भन एव च। वृत्तावृत्तकरस्तालो मधुर्मधुकलोचनः॥४३॥

वाचस्पत्यो वाजसनो नित्यमाश्रितपूजितः। ब्रह्मचारी लोकचारी सर्वचारी विचारवित् ॥४४॥ ईशान ईश्वरः कालो निशाचारी पिनाकवान् । निमित्तस्थो निमित्तं च निन्दिर्नन्दिकरो हरिः॥४५॥ नन्दीश्वरश्च नन्दी च नन्दनो नन्दिवर्धनः। भगहारी निहन्ता च कालो ब्रह्मा पितामहः॥४६॥ चतुर्मुखो महालिङ्गश्चारुलिङ्गस्तथैव च। लिङ्गाध्यक्षः सुराध्यक्षो योगाध्यक्षो युगावहः॥४७॥ बीजाध्यक्षो बीजकर्ता अध्यात्माऽनुगतो बलः। इतिहासः सकल्पश्च गौतमोऽथ निशाकरः॥४८॥ दम्भो ह्यदम्भो वैदम्भो वश्यो वशकरः कलिः। लोककर्ता पशुपतिर्महाकर्ता ह्यनौषधः॥४९॥ अक्षरं परमं ब्रह्म बलवच्चक्र एव च। नीतिर्द्धानीतिः शुद्धात्मा शुद्धो मान्यो गतागतः॥५०॥ बहुप्रसादः सुस्वप्नो दर्पणोऽथ त्विमत्रजित् । वेदकारो मन्त्रकारो विद्वान् समरमर्दनः॥५१॥

महामेघनिवासी च महाघोरो वशीकरः। अग्निज्वालो महाज्वालो अतिधूम्रो हुतो हविः॥५२॥ वृषणः शङ्करो नित्यं वर्चस्वी धूमकेतनः। नीलस्तथाऽङ्गलुब्धश्च शोभनो निरवग्रहः॥५३॥ स्वस्तिदः स्वस्तिभावश्च भागी भागकरो लघुः। महागर्भपरायणः॥५४॥ उत्सङ्गश्च महाङ्गश्च कृष्णवर्णः सुवर्णश्च इन्द्रियं सर्वदेहिनाम् । महापादो महाहस्तो महाकायो महायशाः॥५५॥ महामूर्घा महामात्रो महानेत्रो निशालयः। महान्तको महाकर्णो महोष्ठश्च महाहुनुः॥५६॥ महानासो महाकम्बुर्महाग्रीवः रमशानभाक्। महावक्षा महोरस्को ह्यन्तरात्मा मृगालयः॥५७॥ लम्बनो लम्बितोष्ठश्च महामायः पयोनिधिः। महादन्तो महादृष्ट्रो महाजिह्वो महामुखः॥५८॥ महानखो महारोमो महाकोशो महाजटः। प्रसन्नश्च प्रसादश्च प्रत्ययो गिरिसाधनः॥५९॥

स्नेहनोऽस्नेहनश्चैव अजितश्च महामुनिः। वृक्षाकारो वृक्षकेतुरनलो वायुवाहनः॥६०॥ गण्डली मेरुधामा च देवाधिपतिरेव च। अथर्वशीर्षः सामास्य ऋक्सहस्रामितेक्षणः॥६१॥ यजुः पादभुजो गृह्यः प्रकाशो जङ्गमस्तथा। अमोघार्थः प्रसादश्च अभिगम्यः सुदर्शनः॥६२॥ उपकारः प्रियः सर्वः कनकः काञ्चनच्छविः। नाभिर्नन्दिकरो भावः पुष्करः स्थपतिः स्थिरः॥६३॥ द्वादशस्त्रासनश्चाद्यो यज्ञो यज्ञसमाहितः। नक्तं कलिश्च कालश्च मकरः कालपूजितः॥६४॥ सगणो गणकारश्च भूतवाहनसारथिः। भरमशयो भरमगोप्ता भरमभूतस्तरुर्गणः॥६५॥ लोकपालस्तथाऽलोको महात्मा सर्वपूजितः। शुक्रस्त्रिशुक्तः सम्पन्नः शुचिर्भृतनिषेवितः॥६६॥ आश्रमस्थः कियावस्थो विश्वकर्ममतिर्वरः। विशालशाखस्ताम्रोष्ठो ह्यम्बुजालः सुनिश्चलः॥६७॥

कपिलः कपिशः शुक्क आयुश्चैव परोऽपरः। गन्धर्वो ह्यदितिस्तार्क्ष्यः सुविज्ञेयः सुशारदः॥६८॥ परश्वधायुधो देव अनुकारी सुबान्धवः। तुम्बवीणो महाक्रोध ऊर्ध्वरेता जलेशयः॥६९॥ उय्रो वंशकरो वंशो वंशनादो ह्यनिन्दितः। सर्वाङ्गरूपो मायावी सुहृदो ह्यनिलोऽनलः॥७०॥ बन्धनो बन्धकर्ता च सुबन्धनविमोचनः। सयज्ञारिः सकामारिर्महादंष्ट्रो महायुधः॥७१॥ बहुधा निन्दितः शर्वः शङ्करः शङ्करोऽधनः। अमरेशो महादेवो विश्वदेवः सुरारिहा॥७२॥ अहिर्बुध्योऽनिलाभश्च चेकितानो हविस्तथा। अजैकपाच कापाली त्रिराङ्करजितः शिवः॥७३॥ धन्वन्तरिर्धूमकेतुः स्कन्दो वैश्रवणस्तथा। धाता शकश्च विष्णुश्च मित्रस्त्वष्टा ध्रुवो धरः॥७४॥ प्रभावः सर्वगो वायुर्यमा सविता रविः। उषङ्गश्च विधाता च मान्धाता भूतभावनः॥७५॥

विभुर्वर्णविभावी च सर्वकामगुणावहः। पद्मनाभो महागर्भश्चन्द्रवक्रोऽनिलोऽनलः॥७६॥

बलवांश्चोपशान्तश्च पुराणः पुण्यचश्चरी। कुरुकर्ता कुरुवासी कुरुभूतो गुणौषधः॥७७॥

सर्वाशयो दर्भचारी सर्वेषां प्राणिनां पतिः। देवदेवः सुखासक्तः सदसत् सर्वरत्नवित् ॥७८॥

कैलासगिरिवासी च हिमवद्गिरिसंश्रयः। कूलहारी कूलकर्ता बहुविद्यो बहुप्रदः॥७९॥

वणिजो वर्धकी वृक्षो वकुलश्चन्दनश्छदः। सारग्रीवो महाजत्रुरलोलश्च महौषधः॥८०॥

सिद्धार्थकारी सिद्धार्थश्छन्दोव्याकरणोत्तरः। सिंहनादः सिंहदंष्ट्रः सिंहगः सिंहवाहनः॥८१॥

प्रभावात्मा जगत्कालस्थालो लोकहितस्तरुः। सारङ्गो नवचक्राङ्गः केतुमाली सभावनः॥८२॥

भूतालयो भूतपतिरहोरात्रमनिन्दितः ॥८३॥

वाहिता सर्वभूतानां निलयश्च विभुर्भवः। अमोघः संयतो ह्यश्वो भोजनः प्राणधारणः॥८४॥ धृतिमान् मतिमान् दक्षः सत्कृतश्च युगाधिपः। गोपालिगोंपतिर्यामो गोचर्मवसनो हरिः॥८५॥ हिरण्यबाहुश्च तथा गुहापालः प्रवेशिनाम् । प्रकृष्टारिर्महाहर्षो जितकामो जितेन्द्रियः॥८६॥ गान्धारश्च सुवासश्च तपःसक्तो रतिर्नरः। महागीतो महानृत्यो ह्यप्सरोगणसेवितः॥८७॥ महाकेतुर्महाधातुर्नैकसानुचरश्चलः आवेदनीय आदेशः सर्वगन्धसुखावहः॥८८॥ तोरणस्तारणो वातः परिधीः पतिखेचरः। संयोगो वर्धनो वृद्धो अतिवृद्धो गुणाधिकः॥८९॥ नित्यमात्मसहायश्च देवासुरपतिः पतिः। युक्तश्च युक्तबाहुश्च देवो दिवि सुपर्वणः॥९०॥ आषाढश्च सुषाढश्च ध्रुवोऽथ हरिणो हरः। वपुरावर्तमानेभ्यो वसुश्रेष्ठो महापथः॥९१॥

शिरोहारी विमर्शश्च सर्वलक्षणलक्षितः। अक्षश्च रथयोगी च सर्वयोगी महाबलः॥९२॥ समाम्नायोऽसमाम्नायस्तीर्थदेवो महारथः। निर्जीवो जीवनो मन्त्रः शुभाक्षो बहुकर्कशः॥९३॥ रत्नप्रभूतो रक्ताङ्गो महार्णवनिपानवित् । मूलं विशालो ह्यमृतो व्यक्ताव्यक्तस्तपोनिधिः॥९४॥ आरोहणोऽधिरोहश्च शीलधारी महायशाः। सेनाकल्पो महाकल्पो योगो युगकरो हरिः॥९५॥ युगरूपो महारूपो महानागहनो वधः। न्यायनिर्वपणः पादः पण्डितो ह्यचलोपमः॥९६॥ बहुमालो महामालः शशी हरसुलोचनः। विस्तारो लवणः कूपस्त्रियुगः सफलोदयः॥९७॥ त्रिलोचनो विषण्णाङ्गो मणिविद्धो जटाधरः। बिन्दुर्विसर्गः सुमुखः शरः सर्वायुधः सहः॥९८॥ निवेदनः सुखाजातः सुगन्धारो महाधनुः। गन्धपाली च भगवानुत्थानः सर्वकर्मणाम् ॥९९॥

मन्थानो बहुलो वायुः सकलः सर्वलोचनः। तलस्तालः करस्थाली ऊर्ध्वसंहननो महान् ॥१००॥ छत्रं सुच्छत्रो विख्यातो लोकः सर्वाश्रयः क्रमः। मुण्डो विरूपो विकृतो दण्डी कुण्डी विकुर्वणः॥१०१॥ हर्यक्षः ककुभो वज्री शतजिह्नः सहस्रपात् । सहस्रमूर्धा देवेन्द्रः सर्वदेवमयो गुरुः॥१०२॥ सहस्रबाहुः सर्वाङ्गः शरण्यः सर्वलोककृत् । पवित्रं त्रिककुन्मन्त्रः कनिष्ठः कृष्णपिङ्गलः॥१०३॥ ब्रह्मदण्डविनिर्माता शतघ्वीपाशशक्तिमान् । पद्मगर्भो महागर्भो ब्रह्मगर्भो जलोद्भवः॥१०४॥ गभस्तिर्बह्मकृदु-ब्रह्मी ब्रह्मविदु-ब्राह्मणो गतिः। अनन्तरूपो नैकात्मा तिग्मतेजाः स्वयम्भुवः॥१०५॥ ऊर्ध्वगात्मा पशुपतिर्वातरंहा मनोजवः। चन्दनी पद्मनालाग्रः सुरभ्युत्तरणो नरः॥१०६॥ कर्णिकारमहास्रग्वी नीलमौलिः पिनाकधृक्। उमापतिरुमाकान्तो जाह्नवीधुगुमाधवः॥ १०७॥

वरो वराहो वरदो वरेण्यः सुमहास्वनः। महाप्रसादो दमनः शत्रुहा श्वेतपिङ्गलः॥१०८॥

पीतात्मा परमात्मा च प्रयतात्मा प्रधानधृक्। सर्वपार्श्वमुखस्त्र्यक्षो धर्मसाधारणो वरः॥१०९॥

चराचरात्मा सूक्ष्मात्मा अमृतो गोवृषेश्वरः। साध्यर्षिर्वसुरादित्यो विवस्वान् सविताऽमृतः॥११०॥

व्यासः सर्गः सुसङ्क्षेपो विस्तरः पर्ययो नरः।

ऋतुः संवत्सरो मासः पक्षः सङ्खासमापनः॥१११॥

कलाः काष्ठा लवा मात्रा मुहूर्ताहः क्षपाः क्षणाः। विश्वक्षेत्रं प्रजाबीजं लिङ्गमाद्यस्तु निर्गमः॥११२॥

सद्सद्यक्तमव्यक्तं पिता माता पितामहः। स्वर्गद्वारं प्रजाद्वारं मोक्षद्वारं त्रिविष्टपम् ॥११३॥

निर्वाणं ह्णादनश्चेव ब्रह्मलोकः परा गतिः। देवासुरविनिर्माता देवासुरपरायणः॥११४॥

देवासुरगुरुर्देवो देवासुरनमस्कृतः। देवासुरमहामात्रो देवासुरगणाश्रयः॥११५॥

देवासुरगणाध्यक्षो देवासुरगणायणीः। देवातिदेवो देवर्षिर्देवासुरवरप्रदः॥११६॥ देवासुरेश्वरो विश्वो देवासुरमहेश्वरः। सर्वदेवमयोऽचिन्त्यो देवतात्माऽऽत्मसम्भवः॥११७॥ उद्धित्विविक्रमो वैद्यो विरजो नीरजोऽमरः। ईड्यो हस्तीश्वरो व्याघ्रो देवसिंहो नरर्षभः॥११८॥ विबुधोऽयवरः सूक्ष्मः सर्वदेवस्तपोमयः। सुयुक्तः शोभनो वज्री प्रासानां प्रभवोऽव्ययः॥११९॥ गुहः कान्तो निजः सर्गः पवित्रं सर्वपावनः। श्रङ्गी श्रङ्गप्रियो बभ्रू राजराजो निरामयः॥१२०॥ अभिरामः सुरगणो विरामः सर्वसाधनः। ललाटाक्षो विश्वदेवो हरिणो ब्रह्मवर्चसः॥१२१॥ स्थावराणां पतिश्चैव नियमेन्द्रियवर्धनः। सिद्धार्थः सिद्धभूतार्थोऽचिन्त्यः सत्यव्रतः शुचिः॥१२२॥ व्रताधिपः परं ब्रह्म भक्तानां परमा गतिः। विमुक्तो मुक्ततेजाश्च श्रीमान् श्रीवर्धनो जगत् ॥१२३॥

श्रीमान् श्रीवर्धनो जगत् ॐ नम इति। ॥ उत्तरभागः॥

यथा प्रधानं भगवान् इति भक्त्या स्तुतो मया। यं न ब्रह्माद्यो देवा विदुस्तत्त्वेन नर्षयः॥१॥ स्तोतव्यमर्च्यं वन्द्यं च कः स्तोष्यति जगत्पतिम् । भक्तिं त्वेवं पुरस्कृत्य मया यज्ञपतिर्विभुः॥२॥ ततोऽभ्यनुज्ञां सम्प्राप्य स्तुतो मतिमतां वरः। शिवमेभिः स्तुवन् देवं नामभिः पुष्टिवर्धनैः॥३॥ नित्ययुक्तः शुचिर्भक्तः प्राप्नोत्यात्मानमात्मना। ऋषयश्चैव देवाश्च स्तुवन्त्येतेन तत्परम् ॥४॥ स्त्रयमानो महादेवस्तुष्यते नियमात्मभिः। भक्तानुकम्पी भगवान् आत्मसंस्थाकरो विभुः॥५॥ तथैव च मनुष्येषु ये मनुष्याः प्रधानतः। आस्तिकाः श्रद्दधानाश्च बहुमिर्जन्मिमः स्तवैः॥६॥ भक्त्या ह्यनन्यमीशानं परं देवं सनातनम् । कर्मणा मनसा वाचा भावेनामिततेजसः॥७॥

रायाना जाग्रमाणाश्च व्रजन्नुपविशंस्तथा। उन्मिषन्निमिषञ्जैव चिन्तयन्तः पुनः पुनः॥८॥ शृण्वन्तः श्रावयन्तश्च कथयन्तश्च ते भवम् । स्तुवन्तः स्तूयमानाश्च तुष्यन्ति च रमन्ति च॥९॥ जन्मकोटिसहस्रेषु नानासंसारयोनिषु। जन्तोर्विगतपापस्य भवे भक्तिः प्रजायते॥१०॥ उत्पन्ना च भवे भक्तिरनन्या सर्वभावतः। भाविनः कारणे चास्य सर्वयुक्तस्य सर्वथा॥११॥ एतद्देवेषु दुष्प्रापं मनुष्येषु च लभ्यते। निर्विघ्ना निश्चला रुद्रे भक्तिरव्यभिचारिणी॥१२॥ तस्यैव च प्रसादेन भक्तिरुत्पद्यते नृणाम् । येन यान्ति परां सिद्धिं तद्भावगतचेतसः॥१३॥ ये सर्वभावानुगताः प्रपद्यन्ते महेश्वरम्। प्रपन्नवत्सलो देवः संसारात् तान् समुद्धरेत् ॥१४॥ एवम् अन्ये विकुर्वन्ति देवाः संसारमोचनम् । मनुष्याणामृते देवं नान्या शक्तिस्तपोबलम् ॥१५॥ इति तेनेन्द्रकल्पेन भगवान् सदसत्पतिः। कृत्तिवासाः स्तुतः कृष्ण तण्डिना शुद्धबुद्धिना॥१६॥ स्तवमेतं भगवतो ब्रह्मा स्वयमधारयत् । गीयते च स बुदुध्येत ब्रह्मा शङ्करसन्निधौ॥१७॥ इदं पुण्यं पवित्रं च सर्वदा पापनाशनम् । योगदं मोक्षदं चैव स्वर्गदं तोषदं तथा॥१८॥ एवमेतत् पठन्ते य एकभक्त्या तु शङ्करम्। या गतिः साह्ययोगानां व्रजन्त्येतां गतिं तदा॥१९॥ स्तवमेतं प्रयत्नेन सदा रुद्रस्य सन्निधौ। अब्दमेकं चरेद्धक्तः प्राप्नुयादीप्सितं फलम् ॥२०॥ एतद्रहस्यं परमं ब्रह्मणो हृदि संस्थितम् । ब्रह्मा प्रोवाच राकाय राकः प्रोवाच मृत्यवे॥२१॥ मृत्युः प्रोवाच रुद्रेभ्यो रुद्रेभ्यस्तिण्डमागमत् । महता तपसा प्राप्तस्तिण्डिना ब्रह्मसद्मिनि॥२२॥ तिण्डः प्रोवाच शुक्राय गौतमाय च भार्गवः। वैवस्वताय मनवे गौतमः प्राह माधव॥२३॥

नारायणाय साध्याय समाधिष्ठाय धीमते। यमाय प्राह भगवान् साध्यो नारायणोऽच्युतः॥२४॥ नाचिकेताय भगवान आह वैवस्वतो यमः। मार्कण्डेयाय वार्ष्णेय नाचिकेतोऽभ्यभाषत॥२५॥ मार्कण्डेयान्मया प्राप्तं नियमेन जनार्दन। तवाप्यहम् अमित्रघ्न स्तवं दद्यां ह्यविश्रुतम् ॥२६॥ स्वर्ग्यमारोग्यमायुष्यं धन्यं वेदेन सम्मितम् । नास्य विघ्नं विकुर्वन्ति दानवा यक्षराक्षसाः। पिशाचा यातुधानाश्च गुह्यका भुजगा अपि॥२७॥ यः पठेत शुचिर्भूत्वा ब्रह्मचारी जितेन्द्रियः। अभग्नयोगो वर्षं तु सोऽश्वमेधफलं लभेत् ॥२८॥ जैगीषव्य तवाच ममाष्ट्रगुणमैश्वर्यं दत्तं भगवता पुरा। यत्नेनान्येन बलिना वाराणस्यां युधिष्ठिर॥२९॥ वाराणस्यां युधिष्ठिर ॐ नम इति।

गर्ग उवाच

चतुःषष्ट्यङ्गमदद्त् कलाज्ञानं ममाद्भुतम् । सरस्वत्यास्तटे तुष्टो मनोयज्ञेन पाण्डव॥३०॥ मनोयज्ञेन पाण्डव ॐ नम इति।

वैशम्पायन उवाच

ततः कृष्णोऽब्रवीद्वाक्यं पुनर्मतिमतां वरः। युधिष्ठिरं धर्मनिधिं पुरुहृतमिवेश्वरः। उपमन्युर्मिय प्राह तपन्निव दिवाकरः॥३१॥

अशुभैः पापकर्माणो ये नराः कलुषीकृताः। ईशानं न प्रपद्यन्ते तमोराजसवृत्तयः। ईश्वरं सम्प्रपद्यन्ते द्विजा भावितभावनाः॥३२॥ एवमेव महादेव भक्ता ये मानवा भुवि। न ते संसारवशगा इति मे निश्चिता मितः॥३३॥

इति मे निश्चिता मितः ॐ नम इति।

॥ इति श्रीमन्महाभारते शतसाहस्र्यां संहितायां वैयसिक्याम् आनुशासनिकपर्वणि अष्टादशोऽध्यायः॥ दुःस्वप्न-दुःशकुन-दुर्गति-दौर्मनस्य दुर्भिक्ष-दुर्व्यसन-दुःसह-दुर्यशांसि । उत्पात-ताप-विषभीतिम् असद्-ग्रहार्तिम् व्याधींश्च नाशयतु मे जगतामधीशः॥ ॥इति श्री शिवसहस्रनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

विभागः ३

श्रीमद्भगवद्गीता

॥श्रीमद्भगवद्गीता॥

॥ न्यासः॥

॥ करन्यासः॥

ॐ अस्य श्रीमद्भगवद्गीतामालामन्त्रस्य।
भगवान्वेद्व्यास ऋषिः।
अनुष्टुप् छन्दः।
श्रीकृष्ण परमात्मा देवता।
अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे इति बीजम्।
सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज इति शक्तिः।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुच इति कीलकम्।
नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावक इत्यङ्गुष्ठाभ्यां नमः।
न चैनं क्षेदयन्त्यापो न शोषयित मारुत इति तर्जनीभ्यां नमः।
अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्षेद्योऽशोष्य एव च इति मध्यमाभ्यां
नमः।

नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातन इत्यनामिकाभ्यां नमः।

पश्य मे पार्थ रूपाणि शतशोऽथ सहस्रश इति कनिष्ठिकाभ्यां नमः।

नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णाकृतीनि च इति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ इति करन्यासः॥

॥ हृदयादि न्यासः॥

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहित पावक इति हृदयाय नमः।
न चैनं क्षेदयन्त्यापो न शोषयित मारुत इति शिरसे स्वाहा।
अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्षेद्योऽशोष्य एव चेति शिखायै वषट्।
नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातन इति कवचाय हुम्।
पश्य मे पार्थ् रूपाणि शतशोऽथ सहस्रश इति नेत्रत्रयाय वौषट्।
नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णाकृतीनि चेति अस्त्राय फट्।
॥श्रीकृष्णप्रीत्यर्थे पाठे विनियोगः॥

॥ध्यानम्॥

ॐ पार्थाय प्रतिबोधितां भगवता नारायणेन स्वयम् व्यासेन ग्रथितां पुराणमुनिना मध्ये महाभारतम् । अद्वैतामृतवर्षिणीं भगवतीमष्टादशाध्यायिनीम् अम्ब त्वामनुसन्द्धामि भगवद्गीते भवेद्वेषिणीम् ॥३४॥ नमोऽस्तु ते व्यास विशालबुद्धे फुल्लारविन्दायतपत्रनेत्र। येन त्वया भारततैलपूर्णः प्रज्वालितो ज्ञानमयः प्रदीपः॥३५॥ प्रपन्नपारिजाताय तोत्रवेत्रैकपाणये। ज्ञानमुद्राय कृष्णाय गीतामृतदुहे नमः॥३६॥

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपाल-नन्दनः। पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत् ॥३७॥

वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् । देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ॥३८॥

भीष्मद्रोणतटा जयद्रथजला गान्धारनीलोत्पला शल्यग्राहवती कृपेण वहनी कर्णेन वेलाकुला। अश्वत्थामविकर्णघोरमकरा दुर्योधनावर्तिनी सोत्तीर्णा खलु पाण्डवै रणनदी कैवर्तकः केशवः॥३९॥

पाराश्यविचः सरोजममलं गीतार्थगन्धोत्कटम् नानाख्यानककेसरं हरिकथासम्बोधनाबोधितम् । लोके सज्जनषट्पदैरहरहः पेपीयमानं मुदा भूयाद्भारतपङ्कजं कलिमलप्रध्वंसि नः श्रेयसे॥४०॥ मूकं करोति वाचालं पङ्गं लङ्घयते गिरिम् । यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्दमाधवम् ॥४१॥ यं ब्रह्मा वरुणेन्द्र-रुद्र-मरुतः स्तुवन्ति दिव्यैः स्तवैः वेदैः साङ्ग-पद-क्रमोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगाः। ध्यानावस्थित-तद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनः यस्यान्तं न विदुः सुरासुर-गणा देवाय तस्मै नमः॥४२॥ नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्। देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत् ॥४३॥

॥प्रथमोऽध्यायः॥

धृतराष्ट्र उवाच

धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः। मामकाः पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत सञ्जय॥१॥

सञ्जय उवाच

दृष्ट्वा तु पाण्डवानीकं व्यूढं दुर्योधनस्तदा। आचार्यमुपसङ्गम्य राजा वचनमब्रवीत् ॥२॥

पश्यैतां पाण्डुपुत्राणामाचार्य महतीं चमूम् । व्यूढां द्रुपद्पुत्रेण तव शिष्येण धीमता॥३॥

अत्र शूरा महेष्वासा भीमार्जुनसमा युधि। युयुधानो विराटश्च द्रुपदश्च महारथः॥४॥

धृष्टकेतुश्चेकितानः काशिराजश्च वीर्यवान् । पुरुजित् कुन्तिभोजश्च शैब्यश्च नरपुङ्गवः॥५॥

युधामन्युश्च विक्रान्त उत्तमौजाश्च वीर्यवान् । सौभद्रो द्रौपदेयाश्च सर्व एव महारथाः॥६॥

अस्माकं तु विशिष्टा ये तान्निबोध द्विजोत्तम। नायका मम सैन्यस्य संज्ञार्थं तान् ब्रवीमि ते॥७॥ भवान् भीष्मश्च कर्णश्च कृपश्च समितिञ्जयः। अश्वत्थामा विकर्णश्च सौमदत्तिस्तथैव च॥८॥ अन्ये च बहवः शूरा मद्र्थे त्यक्तजीविताः। नानाशस्त्रप्रहरणाः सर्वे युद्धविशारदाः॥९॥ अपर्याप्तं तदस्माकं बलं भीष्माभिरक्षितम् । पर्याप्तं त्विदमेतेषां बलं भीमाभिरक्षितम् ॥१०॥ अयनेषु च सर्वेषु यथाभागमवस्थिताः। भीष्ममेवाभिरक्षन्तु भवन्तः सर्व एव हि॥११॥ तस्य सञ्जनयन् हर्षं कुरुवृद्धः पितामहः। सिंहनादं विनद्योचैः राह्वं दध्मौ प्रतापवान् ॥१२॥ ततः राङ्खाश्च भेर्यश्च पणवानकगोमुखाः। सहसैवाभ्यहन्यन्त स शब्दस्तुमुलोऽभवत् ॥१३॥ ततः श्वेतैर्हयेर्युक्ते महति स्यन्दने स्थितौ। माधवः पाण्डवश्चेव दिव्यो शङ्खौ प्रद्घ्मतुः॥१४॥

पाञ्चजन्यं हृषीकेशो देवदत्तं धनञ्जयः। पौण्डुं द्ध्मौ महाशङ्खं भीमकर्मा वृकोद्रः॥१५॥

अनन्तविजयं राजा कुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः। नकुलः सहदेवश्च सुघोषमणिपुष्पकौ॥१६॥

काश्यश्च परमेष्वासः शिखण्डी च महारथः। धृष्टद्युम्नो विराटश्च सात्यिकश्चापराजितः॥१७॥

द्रुपदो द्रौपदेयाश्च सर्वशः पृथिवीपते। सौभद्रश्च महाबाहुः शङ्खान् दध्मुः पृथक् पृथक्॥१८॥

स घोषो धार्तराष्ट्राणां हृदयानि व्यदारयत् । नभश्च पृथिवीं चैव तुमुलो व्यनुनादयन् ॥१९॥

अथ व्यवस्थितान् दृष्ट्वा धार्तराष्ट्रान् किपध्वजः। प्रवृत्ते शस्त्रसम्पाते धनुरुद्यम्य पाण्डवः॥२०॥

हृषीकेशं तदा वाक्यमिदमाह महीपते। अर्जुन उवाच सेनयोरुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मेऽच्युत॥२१॥ यावदेतान्निरीक्षेऽहं योद्धकामानवस्थितान् । कैर्मया सह योद्धव्यमस्मिन् रणसमुद्यमे॥२२॥ योत्स्यमानानवेक्षेऽहं य एतेऽत्र समागताः। धार्तराष्ट्रस्य दुर्बुद्धेर्युद्धे प्रियचिकीर्षवः॥२३॥

सञ्जय उवाच

एवमुक्तो हृषीकेशो गुडाकेशेन भारत। सेनयोरुभयोर्मध्ये स्थापयित्वा रथोत्तमम् ॥२४॥

भीष्मद्रोणप्रमुखतः सर्वेषां च महीक्षिताम् । उवाच पार्थ पश्यैतान् समवेतान् कुरूनिति॥२५॥

तत्रापश्यत् स्थितान् पार्थः पितॄनथ पितामहान् । आचार्यान् मातुलान् भ्रातृन् पुत्रान् पौत्रान् सर्खीस्तथा॥२६॥

श्वशुरान् सुहृदश्चैव सेनयोरुभयोरि। तान् समीक्ष्य स कौन्तेयः सर्वान् बन्धूनवस्थितान् ॥२७॥

कृपया परयाऽऽविष्टो विषीदन्निद्मब्रवीत्। अर्जुन उवाच दृष्ट्वेमं स्वजनं कृष्ण युयुत्सुं समुपस्थितम्॥२८॥

सीदन्ति मम गात्राणि मुखं च परिशुष्यति। वेपथुश्च शरीरे में रोमहर्षश्च जायते॥२९॥ गाण्डीवं स्त्रंसते हस्तात् त्वकैव परिद्द्यते। न च शकोम्यवस्थातुं भ्रमतीव च मे मनः॥३०॥ निमित्तानि च पञ्चामि विपरीतानि केशव। न च श्रेयोऽनुपश्यामि हत्वा स्वजनमाहवे॥३१॥ न काङ्के विजयं कृष्ण न च राज्यं सुखानि च। किं नो राज्येन गोविन्द किं भोगैर्जीवितेन वा॥३२॥ येषामर्थे काङ्कितं नो राज्यं भोगाः सुखानि च। त इमेऽवस्थिता युद्धे प्राणांस्त्यक्तवा धनानि च॥३३॥

आचार्याः पितरः पुत्रास्तथैव च पितामहाः। मातुलाः श्वशुराः पौत्राः श्यालाः सम्बन्धिनस्तथा॥३४॥

एतान्न हन्तुमिच्छामि घ्नतोऽपि मधुसूदन। अपि त्रैलोक्यराज्यस्य हेतोः किं नु महीकृते॥३५॥ निहत्य धार्तराष्ट्रान्नः का प्रीतिः स्याज्जनार्दन। पापमेवऽऽश्रयेदस्मान् हत्वैतानाततायिनः॥३६॥ तस्मान्नऽऽर्हा वयं हन्तुं धार्तराष्ट्रान् स्वबान्धवान् । स्वजनं हि कथं हत्वा सुखिनः स्याम माधव॥३७॥ यद्यप्येते न पश्यन्ति लोभोपहतचेतसः। कुलक्षयकृतं दोषं मित्रद्रोहे च पातकम् ॥३८॥ कथं न ज्ञेयमस्माभिः पापादस्मान्निवर्तितुम् । कुलक्षयकृतं दोषं प्रपश्यद्भिर्जनार्दन॥३९॥ कुलक्षये प्रणश्यन्ति कुलधर्माः सनातनाः। धर्मे नष्टे कुलं कृत्स्नमधर्मोऽभिभवत्युत॥४०॥ अधर्माभिभवात् कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियः। स्त्रीषु दृष्टासु वार्ष्णेय जायते वर्णसङ्करः॥४१॥ सङ्करो नरकायैव कुलघ्वानां कुलस्य च। पतन्ति पितरो ह्येषां लुप्तपिण्डोदकिकयाः॥४२॥ कुलघ्नानां वर्णसङ्करकारकैः। दोषेरेतैः उत्साचन्ते जातिधर्माः कुलधर्माश्च शाश्वताः॥४३॥ उत्सन्नकुलधर्माणां मनुष्याणां जनार्दन। नरके नियतं वासो भवतीत्यनुशुश्रम॥४४॥

अहो बत महत्पापं कर्तुं व्यवसिता वयम् । यद्राज्यसुखलोभेन हन्तुं स्वजनमुद्यताः॥४५॥

यदि मामप्रतीकारम् अशस्त्रं शस्त्रपाणयः। धार्तराष्ट्रा रणे हन्युस्तन्मे क्षेमतरं भवेत् ॥४६॥

सञ्जय उवाच

एवमुक्त्वाऽर्जुनः सङ्ख्ये रथोपस्थ उपाविशत् । विसृज्य सशरं चापं शोकसंविग्नमानसः॥४७॥

॥ ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे अर्जुनविषादयोगो नाम प्रथमोऽध्यायः॥

॥ द्वितीयोऽध्यायः॥

सञ्जय उवाच

तं तथा कृपयाऽऽविष्टम् अश्रुपूर्णाकुलेक्षणम् । विषीदन्तमिदं वाक्यमुवाच मधुसूदनः॥१॥ श्रीभगवानुवाच कुतस्त्वा कश्मलिमदं विषमे समुपस्थितम् । अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यमकीर्तिकरमर्जुन ॥२॥

क्कैब्यं मा स्म गमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते। क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप॥३॥ अर्जन उवाच

कथं भीष्ममहं सङ्ख्ये द्रोणं च मधुसूदन। इषुभिः प्रतियोत्स्यामि पूजार्हावरिसूदन॥४॥

गुरूनहत्वा हि महानुभावान् श्रेयो भोक्तुं भैक्ष्यमपीह लोके। हत्वाऽर्थकामांस्तु गुरूनिहैव भुञ्जीय भोगान् रुधिरप्रदिग्धान् ॥५॥

न चैतद्विद्मः कतरन्नो गरीयो यद्वा जयेम यदि वा नो जयेयुः। यानेव हत्वा न जिजीविषामः तेऽवस्थिताः प्रमुखे धार्तराष्ट्राः॥६॥ कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः

पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेताः। यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम् ॥७॥ न हि प्रपश्यामि ममापनुद्याद्-यच्छोकमुच्छोषणमिन्द्रियाणाम् ।

अवाप्य भूमावसपत्नमृद्धम् राज्यं सुराणामपि चऽऽधिपत्यम् ॥८॥

सञ्जय उवाच

एवमुक्तवा हृषीकेशं गुडाकेशः परन्तप। न योत्स्य इति गोविन्दमुक्तवा तूष्णीं बभूव ह॥९॥

तमुवाच हृषीकेशः प्रहसन्निव भारत। सेनयोरुभयोर्मध्ये विषीदन्तमिदं वचः॥१०॥

श्रीभगवानुवाच

अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे। गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिताः॥११॥ न त्वेवाहं जातु नऽऽसं न त्वं नेमे जनाधिपाः। न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम् ॥१२॥ देहिनोऽस्मिन् यथा देहे कौमारं यौवनं जरा। तथा देहान्तरप्राप्तिधीरस्तत्र न मुह्यति॥१३॥ मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय शीतोष्णसुखदुःखदाः। आगमापायिनोऽनित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारत॥१४॥ यं हि न व्यथयन्त्येते पुरुषं पुरुषर्षभ। समदुःखसुखं धीरं सोऽमृतत्वाय कल्पते॥१५॥ नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः। उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः॥१६॥ अविनाशि तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम् । विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित् कर्तुमर्हति॥१७॥ अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः। अनाशिनोऽप्रमेयस्य तस्माद्यध्यस्व भारत॥१८॥ य एनं वेत्ति हन्तारं यश्चैनं मन्यते हतम् । उभौ तौ न विजानीतो नायं हन्ति न हन्यते॥१९॥

न जायते म्रियते वा कदाचित् नायं भूत्वा भविता वा न भूयः। अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे॥२०॥ वेदाविनाशिनं नित्यं य एनमजमव्ययम्। कथं स पुरुषः पार्थ कं घातयति हन्ति कम् ॥२१॥

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि। तथा शरीराणि विहाय जीर्णानि अन्यानि संयाति नवानि देही॥२२॥

नैनं छिन्दन्ति रास्त्राणि नैनं दहित पावकः। न चैनं क्षेदयन्त्यापो न शोषयित मारुतः॥२३॥ अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्षेद्योऽशोष्य एव च। नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः॥२४॥ अव्यक्तोऽयमचिन्त्योऽयमविकार्योऽयमच्यते।

अव्यक्तोऽयमचिन्त्योऽयमविकार्योऽयमुच्यते। तस्मादेवं विदित्वैनं नानुशोचितुमर्हसि॥२५॥

अथ चैनं नित्यजातं नित्यं वा मन्यसे मृतम् । तथाऽपि त्वं महाबाहो नैवं शोचितुमर्हसि॥२६॥ जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च। तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि॥२७॥ अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत। अव्यक्तनिधनान्येव तत्र का परिदेवना॥२८॥ आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेनम् आश्चर्यवद्वदति तथैव चान्यः। आश्चर्यवचैनमन्यः शृणोति श्रत्वाऽप्येनं वेद न चैव कश्चित् ॥२९॥ देही नित्यमवध्योऽयं देहे सर्वस्य भारत। तस्मात् सर्वाणि भूतानि न त्वं शोचितुमर्हसि॥३०॥ स्वधर्ममपि चावेक्ष्य न विकम्पितुमर्हिस। धर्म्याद्धि युद्धाच्छ्रेयोऽन्यत् क्षत्रियस्य न विद्यते॥३१॥ यदच्छया चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम्। सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ लभन्ते युद्धमीदृशम् ॥३२॥

अथ चेत्त्वमिमं धर्म्यं सङ्ग्रामं न करिष्यसि। ततः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि॥३३॥ अकीर्तिं चापि भूतानि कथयिष्यन्ति तेऽव्ययाम् । सम्भावितस्य चाकीर्तिर्मरणादितरिच्यते ॥ ३४ ॥ भयाद्रणादुपरतं मंस्यन्ते त्वां महारथाः। येषां च त्वं बहुमतो भूत्वा यास्यिस लाघवम् ॥३५॥ अवाच्यवादांश्च बहून् वदिष्यन्ति तवाहिताः। निन्दन्तस्तव सामर्थ्यं ततो दुःखतरं नु किम् ॥३६॥ हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम् । तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः॥३७॥ सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ। ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि॥३८॥ एषा तेऽभिहिता साङ्खे बुद्धियोंगे त्विमां शृणु। बुदुध्या युक्तो यया पार्थ कर्मबन्धं प्रहास्यसि॥३९॥ नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते। स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात् ॥४०॥

व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन। बहुशाखा ह्यनन्ताश्च बुद्धयोऽव्यवसायिनाम् ॥४१॥ यामिमां पुष्पितां वाचं प्रवदन्त्यविपश्चितः। वेदवाद्रताः पार्थ नान्यदस्तीति वादिनः॥४२॥ कामात्मानः स्वर्गपरा जन्मकर्मफलप्रदाम् । कियाविशेषबहुलां भोगैश्वर्यगतिं प्रति॥४३॥ भोगैश्वर्यप्रसक्तानां तयाऽपहृतचेतसाम्। व्यवसायात्मिका बुद्धिः समाधौ न विधीयते॥४४॥ त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रेगुण्यो भवार्जुन। निर्द्वन्द्वो नित्यसत्त्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान् ॥४५॥ यावानर्थ उद्पाने सर्वतः सम्ह्रतोद्के। तावान् सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः॥४६॥ कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। मा कर्मफलहेतुर्भूमां ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥४७॥

योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्तवा धनञ्जय। सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते॥४८॥

दूरेण ह्यवरं कर्म बुद्धियोगाद्धनञ्जय। बुद्धौ शरणमन्विच्छ कृपणाः फलहेतवः॥४९॥ बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते। तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम् ॥५०॥ कर्मजं बुद्धियुक्ता हि फलं त्यक्त्वा मनीषिणः। जन्मबन्धविनिर्मुक्ताः पदं गच्छन्त्यनामयम् ॥५१॥ यदा ते मोहकलिलं बुद्धिर्व्यातितरिष्यति। तदा गन्तासि निर्वेदं श्रोतव्यस्य श्रुतस्य च॥५२॥ श्रुतिविप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला। समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि॥५३॥

अर्जुन उवाच

स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव। स्थितधीः किं प्रभाषेत किमासीत व्रजेत किम् ॥५४॥

श्रीभगवानुवाच

प्रजहाति यदा कामान् सर्वान् पार्थ मनोगतान् । आत्मन्येवऽऽत्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते॥५५॥

दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः। वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते॥५६॥ यः सर्वत्रानभिस्नेहस्तत् तत् प्राप्य शुभाशुभम् । नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥५७॥ यदा संहरते चायं कूर्मीऽङ्गानीव सर्वशः। इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेऽभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥५८॥ विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः। रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते॥५९॥ यततो ह्यपि कौन्तेय पुरुषस्य विपश्चितः। इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसमं मनः॥६०॥ तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः। वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥६१॥ ध्यायतो विषयान् पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते। सङ्गात् सञ्जायते कामः कामात् क्रोधोऽभिजायते॥६२॥ क्रोधाद्भवति सम्मोहः सम्मोहात् स्मृतिविभ्रमः। स्मृतिभ्रंशादु-बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात् प्रणश्यति॥६३॥

रागद्वेषवियुक्तेस्तु विषयानिन्द्रियेश्चरन्। आत्मवस्यैर्विधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति॥६४॥ प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते। प्रसन्नचेतसो ह्याश्च बुद्धिः पर्यवतिष्ठते ॥ ६५॥ नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना। न चाभावयतः शान्तिरशान्तस्य कुतः सुखम् ॥६६॥ इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनुविधीयते। तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवाम्भसि॥६७॥ तस्माद्यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वशः। इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥६८॥ या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी। यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः॥६९॥

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठम् समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत् । तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे स शान्तिमाप्नोति न कामकामी॥७०॥ विहाय कामान् यः सर्वान् पुमांश्चरति निःस्पृहः। निर्ममो निरहङ्कारः स शान्तिमधिगच्छति॥७१॥ एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुद्यति। स्थित्वाऽस्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति॥७२॥

॥ ॐ तत्सिदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे साङ्खयोगो नाम द्वितीयोऽध्यायः॥

॥ तृतीयोऽध्यायः॥

अर्जुन उवाच

ज्यायसी चेत् कर्मणस्ते मता बुद्धिर्जनार्दन। तत् किं कर्मणि घोरे मां नियोजयसि केशव॥१॥ व्यामिश्रेणेव वाक्येन बुद्धिं मोहयसीव मे। तदेकं वद् निश्चित्य येन श्रेयोऽहमाप्नुयाम् ॥२॥

श्रीभगवानुवाच

लोकेऽस्मिन् द्विविधा निष्ठा पुरा प्रोक्ता मयाऽनघ। ज्ञानयोगेन साङ्ख्यानां कर्मयोगेन योगिनाम् ॥३॥

न कर्मणामनारम्भान्नेष्कर्म्यं पुरुषोऽश्रुते। न च सन्न्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति॥४॥ न हि कश्चित् क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत् । कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः॥५॥ कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन् । इन्द्रियार्थान् विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते॥६॥ यस्त्विन्द्रयाणि मनसा नियम्यऽऽरभतेऽर्जुन। कर्मेन्द्रियैः कर्मयोगमसक्तः स विशिष्यते॥७॥ नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः। शरीरयात्राऽपि च ते न प्रसिद्ध्येदकर्मणः॥८॥ यज्ञार्थात् कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः। तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसङ्गः समाचर॥९॥ सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः। अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक् ॥ १०॥ देवान् भावयताऽनेन ते देवा भावयन्तु वः। परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ॥११॥

इष्टान भोगान हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः। तैर्द्त्तानप्रदायभ्यो यो भुङ्के स्तेन एव सः॥१२॥ यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः। भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् ॥१३॥ अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः। यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः॥१४॥ कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम् । तस्मात् सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् ॥१५॥ एवं प्रवर्तितं चकं नानुवर्तयतीह यः। अघायुरिन्द्रियारामो मोघं पार्थ स जीवति॥१६॥ यस्त्वात्मरतिरेव स्यादात्मतृप्तश्च मानवः। आत्मन्येव च सन्तुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते॥१७॥ नैव तस्य कृतेनार्थों नाकृतेनेह कश्चन। न चास्य सर्वभूतेषु कश्चिदर्थव्यपाश्रयः॥१८॥ तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर। असक्तो ह्याचरन् कर्म परमाप्नोति पूरुषः॥१९॥

कर्मणैव हि संसिद्धिम् आस्थिता जनकादयः। लोकसङ्ग्रहमेवापि सम्परयन् कर्तुमर्हसि॥२०॥ यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः। स यत् प्रमाणं कुरुते लोकस्तद्नुवर्तते॥२१॥ न मे पार्थास्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किञ्चन। नानवाप्तमवाप्तव्यं वर्त एव च कर्मणि॥२२॥ यदि ह्यहं न वर्तेयं जातु कर्मण्यतिन्द्रतः। मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः॥२३॥ उत्सीदेयुरिमे लोका न कुर्यां कर्म चेदहम्। सङ्करस्य च कर्ता स्यामुपहन्यामिमाः प्रजाः॥२४॥ सक्ताः कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत। कुर्याद्विद्वांस्तथाऽसक्तश्चिकीर्घुर्लोकसङ्ग्रहम् ॥२५॥ न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसङ्गिनाम्। जोषयेत् सर्वकर्माणि विद्वान् युक्तः समाचरन् ॥२६॥ प्रकृतेः कियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः। अहङ्कारविम्ढात्मा कर्ताऽहमिति मन्यते॥२७॥

तत्त्ववित् तु महाबाहो गुणकर्मविभागयोः। गुणा गुणेषु वर्तन्त इति मत्वा न सज्जते॥२८॥ प्रकृतेर्गुणसम्मूढाः सज्जन्ते गुणकर्मसु। तानकृत्स्नविदो मन्दान् कृत्स्नविन्न विचालयेत् ॥२९॥ मिय सर्वाणि कर्माणि सन्न्यस्याध्यात्मचेतसा। निराशीर्निर्ममो भूत्वा युध्यस्व विगतज्वरः॥३०॥ ये मे मतमिदं नित्यम् अनुतिष्ठन्ति मानवाः। श्रद्धावन्तोऽनसूयन्तो मुच्यन्ते तेऽपि कर्मभिः॥३१॥ ये त्वेतद्भ्यसूयन्तो नानुतिष्ठन्ति मे मतम्। सर्वज्ञानविमूढांस्तान् विद्धि नष्टानचेतसः॥३२॥ सदृशं चेष्टते स्वस्याः प्रकृतेर्ज्ञानवानिप। प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति॥३३॥ इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थे रागद्वेषौ व्यवस्थितौ। तयोर्न वशमागच्छेत् तौ ह्यस्य परिपन्थिनौ॥३४॥ श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः परधर्मात् स्वनुष्ठितात् । स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः॥३५॥

अर्जुन उवाच

अथ केन प्रयुक्तोऽयं पापं चरित पूरुषः। अनिच्छन्नपि वार्ष्णेय बलादिव नियोजितः॥३६॥ श्रीभगवानुवाच

काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः। महाशनो महापाप्मा विदुध्येनमिह वैरिणम् ॥३७॥ धूमेनऽऽव्रियते वह्निर्यथाऽदशीं मलेन च। यथोल्बेनऽऽवृतो गर्भस्तथा तेनेदमावृतम् ॥३८॥ आवृतं ज्ञानमेतेन ज्ञानिनो नित्यवैरिणा। कामरूपेण कौन्तेय दुष्पूरेणानलेन च॥३९॥ इन्द्रियाणि मनो बुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते। एतैर्विमोहयत्येष ज्ञानमावृत्य देहिनम् ॥४०॥ तस्मात् त्वमिन्द्रियाण्यादौ नियम्य भरतर्षभ। पाप्मानं प्रजिह ह्येनं ज्ञानविज्ञाननाशनम् ॥४१॥ इन्द्रियाणि पराण्याहुरिन्द्रियभ्यः परं मनः। मनसस्तु परा बुद्धियों बुद्धेः परतस्तु सः॥४२॥

एवं बुद्धेः परं बुद्ध्वा संस्तभ्यऽऽत्मानमात्मना। जिह रात्रुं महाबाहो कामरूपं दुरासदम् ॥४३॥ ॥ ॐ तत्सिदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे कर्मयोगो नाम तृतीयोऽध्यायः॥

॥ चतुर्थोऽध्यायः॥

श्रीभगवानुवाच

इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम् । विवस्वान् मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत् ॥१॥

एवं परम्पराप्राप्तिममं राजर्षयो विदुः। स कालेनेह महता योगो नष्टः परन्तप॥२॥ स एवायं मया तेऽद्य योगः प्रोक्तः पुरातनः। भक्तोऽसि मे सखा चेति रहस्यं ह्येतदुत्तमम् ॥३॥

अर्जुन उवाच

अपरं भवतो जन्म परं जन्म विवस्वतः। कथमेतद्विजानीयां त्वमादौ प्रोक्तवानिति॥४॥

श्रीभगवानुवाच

बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन। तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परन्तप॥५॥ अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन् । प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया॥६॥ यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदाऽऽत्मानं सृजाम्यहम् ॥७॥ परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् । धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥८॥ जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः। त्यक्तवा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन॥९॥ वीतरागभयकोधा मन्मया मामुपाश्रिताः। बहवो ज्ञानतपसा पूता मद्भावमागताः॥१०॥ ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् । मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः॥११॥

काङ्कन्तः कर्मणां सिद्धिं यजन्त इह देवताः। क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धिर्भवति कर्मजा॥१२॥ चातुर्वण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागदाः। तस्य कर्तारमपि मां विदुध्यकर्तारमव्ययम् ॥१३॥ न मां कर्माणि लिम्पन्ति न मे कर्मफले स्पृहा। इति मां योऽभिजानाति कर्मभिर्न स बध्यते॥१४॥ एवं ज्ञात्वा कृतं कर्म पूर्वैरिप मुमुक्षुभिः। कुरु कमैंव तस्मात्त्वं पूर्वैः पूर्वतरं कृतम् ॥१५॥ किं कर्म किमकर्मेति कवयोऽप्यत्र मोहिताः। तत्ते कर्म प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात् ॥ १६॥ कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः। अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गतिः॥१७॥ कर्मण्यकर्म यः पश्येदकर्मणि च कर्म यः। स बुद्धिमान् मनुष्येषु स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत् ॥१८॥ यस्य सर्वे समारम्भाः कामसङ्कल्पवर्जिताः। ज्ञानाग्निद्ग्धकर्माणं तमाहुः पण्डितं बुधाः॥१९॥

त्यक्तवा कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रयः। कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपि नैव किञ्चित् करोति सः॥२०॥ निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः। शारीरं केवलं कर्म कुर्वन्नऽऽप्नोति किल्बिषम् ॥२१॥ यदच्छालाभसन्तुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः। समः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वाऽपि न निबध्यते॥२२॥ गतसङ्गस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः। यज्ञायऽऽचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते॥२३॥ ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविर्ब्रह्माय्रौ ब्रह्मणा हुतम् । ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्म कर्म समाधिना॥२४॥ दैवमेवापरे यज्ञं योगिनः पर्युपासते। ब्रह्माय्रावपरे यज्ञं यज्ञेनैवोपजुह्नति॥२५॥ श्रोत्रादीनीन्द्रियाण्यन्ये संयमाग्निषु जुह्नति। शब्दादीन् विषयानन्य इन्द्रियाग्निषु जुह्नति॥२६॥ सर्वाणीन्द्रियकर्माणि प्राणकर्माणि चापरे। आत्मसंयमयोगाग्नौ जुह्वति ज्ञानदीपिते॥२७॥

द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञा योगयज्ञास्तथाऽपरे। स्वाध्यायज्ञानयज्ञाश्च यतयः संशितव्रताः॥२८॥ अपाने जुह्वति प्राणं प्राणेऽपानं तथाऽपरे। प्राणापानगती रुदुध्वा प्राणायामपरायणाः॥ २९॥ अपरे नियताहाराः प्राणान् प्राणेषु जुह्नति। सर्वेऽप्येते यज्ञविदो यज्ञक्षपितकल्मषाः॥३०॥ यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम्। नायं लोकोऽस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरुसत्तम॥३१॥ एवं बहुविधा यज्ञा वितता ब्रह्मणो मुखे। कर्मजान् विद्धि तान् सर्वानेवं ज्ञात्वा विमोक्ष्यसे॥३२॥

श्रेयान् द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ज्ञानयज्ञः परन्तप। सर्वं कर्माखिलं पार्थं ज्ञाने परिसमाप्यते॥३३॥ तिद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया। उपदेक्ष्यिन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदिर्शनः॥३४॥ यज्ज्ञात्वा न पुनर्मोहमेवं यास्यिस पाण्डव। येन भूतान्यशेषेण द्रक्ष्यस्यात्मन्यथो मिय॥३५॥

अपि चेदिस पापेभ्यः सर्वेभ्यः पापकृत्तमः। सर्वं ज्ञानप्रवेनेव वृजिनं सन्तरिष्यसि॥३६॥ यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात् कुरुतेऽर्जुन। ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात् कुरुते तथा॥३७॥ न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते। तत् स्वयं योगसंसिद्धः कालेनऽऽत्मनि विन्दति॥३८॥ श्रद्धावाँ ह्मभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः। ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति॥३९॥ अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च संशयात्मा विनश्यति। नायं लोकोऽस्ति न परो न सुखं संशयात्मनः॥४०॥ योगसन्त्र्यस्तकर्माणं ज्ञानसञ्छन्नसंशयम् । आत्मवन्तं न कर्माणि निबधन्ति धनञ्जय॥४१॥ तस्मादज्ञानसम्भूतं हृत्स्थं ज्ञानासिनाऽऽत्मनः। कित्त्वैनं संशयं योगमातिष्ठोत्तिष्ठ भारत॥४२॥ ॥ ॐ तत्सिदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे ज्ञानकर्मसन्त्र्यासयोगो नाम चतुर्थोऽध्यायः॥

॥पञ्चमोऽध्यायः॥

अर्जुन उवाच

सन्न्यासं कर्मणां कृष्ण पुनर्योगं च शंसित। यच्छेय एतयोरेकं तन्मे ब्रूहि सुनिश्चितम् ॥१॥ श्रीभगवानुवाच

सन्न्यासः कर्मयोगश्च निःश्रेयसकरावुभौ। तयोस्तु कर्मसन्न्यासात्कर्मयोगो विशिष्यते॥२॥

ज्ञेयः स नित्यसन्त्यासी यो न द्वेष्टि न काङ्क्षिति। निर्द्वन्द्वो हि महाबाहो सुखं बन्धात् प्रमुच्यते॥३॥

साङ्खयोगौ पृथग्बालाः प्रवदन्ति न पण्डिताः। एकमप्यास्थितः सम्यगुभयोर्विन्दते फलम् ॥४॥

यत्साङ्खेः प्राप्यते स्थानं तद्योगैरपि गम्यते। एकं साङ्खं च योगं च यः पश्यति स पश्यति॥५॥

सन्न्यासस्तु महाबाहो दुःखमाप्तुमयोगतः। योगयुक्तो मुनिर्ब्रह्म निचरेणाधिगच्छति॥६॥

योगयुक्तो विशुद्धात्मा विजितात्मा जितेन्द्रियः। सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वन्नपि न लिप्यते॥७॥ नैव किञ्चित्करोमीति युक्तो मन्येत तत्त्ववित्। पश्यञ्श्रण्वन्स्पृशञ्जिघन्नश्रङ्गच्छन्स्वपन्श्वसन् ॥८॥ प्रलपन्विसृजनगृह्णसुन्मिषन्निमिषन्निप इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेषु वर्तन्त इति धारयन् ॥९॥ ब्रह्मण्याधाय कर्माणि सङ्गं त्यक्तवा करोति यः। लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवाम्भसा॥१०॥ कायेन मनसा बुदुध्या केवलैरिन्द्रियैरि। योगिनः कर्म कुर्वन्ति सङ्गं त्यक्तवाऽऽत्मशुद्धये॥११॥ युक्तःकर्मफलं त्यक्तवा शान्तिमाप्नोति नैष्ठिकीम् । अयुक्तः कामकारेण फले सक्तो निबध्यते॥१२॥ सर्वकर्माणि मनसा सन्त्यस्यऽऽस्ते सुखं वशी। नवद्वारे पुरे देही नैव कुर्वन्न कारयन् ॥१३॥ न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सुजित प्रभुः। न कर्मफलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्तते॥१४॥

नऽऽदत्ते कस्यचित् पापं न चैव सुकृतं विभुः। अज्ञानेनऽऽवृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः॥१५॥ ज्ञानेन तु तद्ज्ञानं येषां नाशितमात्मनः। तेषामादित्यवज्ज्ञानं प्रकाशयति तत्परम् ॥१६॥ तद्बुद्धयस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायणाः। गच्छन्त्यपुनरावृत्तिं ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः॥१७॥ विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि। शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः॥१८॥ इहैव तैर्जितः सर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः। निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्मादु-ब्रह्मणि ते स्थिताः॥१९॥ न प्रहृष्येत् प्रियं प्राप्य नोद्विजेत् प्राप्य चाप्रियम् ।

बाह्यस्पर्शेष्वसक्तात्मा विन्दत्यात्मनि यत् सुखम् । स ब्रह्मयोगयुक्तात्मा सुखमक्षयमश्रुते॥२१॥

स्थिरबुद्धिरसम्मूढो ब्रह्मविदु-ब्रह्मणि स्थितः॥२०॥

ये हि संस्पर्शजा भोगा दुःखयोनय एव ते। आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः॥२२॥

राक्रोतीहैव यः सोढुं प्राक् रारीरविमोक्षणात् । कामकोधोद्भवं वेगं स युक्तः स सुखी नरः॥२३॥ योऽन्तःसुखोऽन्तरारामस्तथाऽन्तर्ज्योतिरेव यः। स योगी ब्रह्मनिर्वाणं ब्रह्मभूतोऽधिगच्छति॥२४॥ लभन्ते ब्रह्मनिर्वाणमुषयः क्षीणकल्मषाः। छिन्नद्वैधा यतात्मानः सर्वभूतहिते रताः॥२५॥ कामकोधवियुक्तानां यतीनां यतचेतसाम् । अभितो ब्रह्मनिर्वाणं वर्तते विदितात्मनाम् ॥२६॥ स्पर्शान् कृत्वा बहिर्बाह्यांश्रक्षुश्चैवान्तरे भ्रुवोः। प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाभ्यन्तरचारिणौ॥२७॥ यतेन्द्रियमनोबुद्धिर्मुनिर्मोक्षपरायणः विगतेच्छाभयकोधो यः सदा मुक्त एव सः॥ २८॥ भोक्तारं यज्ञतपसां सर्वलोकमहेश्वरम्। सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति॥२९॥

॥ ॐ तत्सिदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे कर्मसन्त्र्यासयोगो नाम पञ्चमोऽध्यायः॥

॥ षष्ठोऽध्यायः ॥

श्रीभगवानुवाच

अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः। स सन्त्यासी च योगी च न निरिप्तर्न चािकयः॥१॥ यं सन्न्यासमिति प्राहुर्योगं तं विद्धि पाण्डव। न ह्यसन्न्यस्तसङ्कल्पो योगी भवति कश्चन॥२॥ आरुरुक्षोर्मुनेयींगं कर्म कारणमुच्यते। योगारूढस्य तस्यैव शमः कारणमुच्यते॥३॥ यदा हि नेन्द्रियार्थेषु न कर्मस्वनुषज्जते। सर्वसङ्कल्पसन्त्र्यासी योगारूढस्तदोच्यते॥४॥ उद्धरेदात्मनऽऽत्मानं नऽऽत्मानमवसादयेत् । आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः॥५॥ बन्धुरात्माऽऽत्मनस्तस्य येनऽऽत्मैवऽऽत्मना जितः। अनात्मनस्तु रात्रुत्वे वर्तेतऽऽत्मैव रात्रुवत् ॥६॥ जितात्मनः प्रशान्तस्य परमात्मा समाहितः। शीतोष्णसुखदुःखेषु तथा मानापमानयोः॥७॥

ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः। युक्त इत्युच्यते योगी समलोष्टाश्मकाञ्चनः॥८॥ सुहृन् मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु। साधुष्विप च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते॥९॥ योगी युञ्जीत सततमात्मानं रहसि स्थितः। एकाकी यतचित्तात्मा निराशीरपरिग्रहः॥१०॥ शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः। नात्युच्छितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम् ॥११॥ तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियकियाः। उपविश्यऽऽसने युज्याद्योगमात्मविशुद्धये॥१२॥ समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः। सम्प्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन् ॥१३॥ प्रशान्तात्मा विगतभीर्बह्मचारिव्रते स्थितः। मनः संयम्य मिचत्तो युक्त आसीत मत्परः॥१४॥ युञ्जन्नेवं सदाऽऽत्मानं योगी नियतमानसः। ञ्चान्तिं निर्वाणपरमां मत्संस्थामधिगच्छति॥१५॥

नात्यश्रतस्तु योगोऽस्ति न चैकान्तमनश्रतः। न चातिस्वप्नशीलस्य जायतो नैव चार्जुन॥१६॥ युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मस्। युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा॥१७॥ विनियतं चित्तमात्मन्येवावतिष्ठते। निःस्पृहः सर्वकामेभ्यो युक्त इत्युच्यते तदा॥१८॥ यथा दीपो निवातस्थो नेङ्गते सोपमा स्मृता। योगिनो यतचित्तस्य युञ्जतो योगमात्मनः॥१९॥ यत्रोपरमते चित्तं निरुद्धं योगसेवया। यत्र चैवऽऽत्मनाऽऽत्मानं पश्यन्नात्मनि तुष्यति॥२०॥ सुखमात्यन्तिकं यत्तदु-बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम् । वेत्ति यत्र न चैवायं स्थितश्चलति तत्त्वतः॥२१॥ यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः। यस्मिन् स्थितो न दुःखेन गुरुणाऽपि विचाल्यते॥२२॥ तं विद्यादु-दुःखसंयोगवियोगं योगसंज्ञितम् । स निश्चयेन योक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा॥२३॥

सङ्कल्पप्रभवान् कामांस्त्यक्तवा सर्वानशेषतः। मनसैवेन्द्रियग्रामं विनियम्य समन्ततः॥२४॥ शनैः शनैरुपरमेदु-बुदुध्या धृतिगृहीतया। आत्मसंस्थं मनः कृत्वा न किञ्चिद्पि चिन्तयेत् ॥२५॥ यतो यतो निश्चरित मनश्चञ्चलमस्थिरम् । ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत् ॥२६॥ प्रशान्तमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम् । उपैति शान्तरजसं ब्रह्मभूतमकल्मषम् ॥२७॥ युञ्जन्नेवं सदाऽऽत्मानं योगी विगतकल्मषः। सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तं सुखमश्रुते॥ २८॥ सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चऽऽत्मनि। ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः॥२९॥ यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति। तस्याहं न प्रणक्यामि स च मे न प्रणक्यति॥३०॥ सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः। सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मिय वर्तते॥३१॥

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यित योऽर्जुन। सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः॥३२॥ अर्जुन उवाच

योऽयं योगस्त्वया प्रोक्तः साम्येन मधुसूदन। एतस्याहं न पश्यामि चञ्चलत्वात् स्थितिं स्थिराम् ॥३३॥

चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्-दृढम् । तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ॥३४॥

श्रीभगवानुवाच

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम् । अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते॥३५॥

असंयतात्मना योगो दुष्प्राप इति मे मितः। वश्यात्मना तु यतता शक्योऽवाप्तुमुपायतः॥३६॥

अर्जुन उवाच

अयितः श्रद्धयोपेतो योगाच्चलितमानसः। अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गतिं कृष्ण गच्छित॥३७॥ किन्नोभयविभ्रष्टिरुक्ताभ्रमिव नश्यति। अप्रतिष्ठो महाबाहो विमूढो ब्रह्मणः पथि॥३८॥

एतन्मे संशयं कृष्ण छेत्तुमर्हस्यशेषतः। त्वदन्यः संशयस्यास्य छेत्ता न ह्युपपद्यते॥३९॥ श्रीभगवानुवाच

पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते। न हि कल्याणकृत् कश्चिद्-दुर्गतिं तात गच्छति॥४०॥

प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः। शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते॥४१॥

अथवा योगिनामेव कुले भवति धीमताम् । एतद्धि दुर्लभतरं लोके जन्म यदीदृशम् ॥४२॥

तत्र तं बुद्धिसंयोगं लभते पौर्वदेहिकम् । यतते च ततो भूयः संसिद्धौ कुरुनन्दन॥४३॥

पूर्वाभ्यासेन तेनैव हियते ह्यवशोऽपि सः। जिज्ञासुरपि योगस्य शब्दब्रह्मातिवर्तते॥४४॥ प्रयत्नाद्यतमानस्तु योगी संशुद्धकिल्बिषः। अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम् ॥४५॥

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥४६॥

योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना। श्रद्धावान् भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः॥४७॥

॥ ॐ तत्सिदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे आत्मसंयमयोगो नाम षष्ठोऽध्यायः॥

॥ सप्तमोऽध्यायः॥

श्रीभगवानुवाच

मय्यासक्तमनाः पार्थ योगं युञ्जन्मदाश्रयः। असंशयं समग्रं मां यथा ज्ञास्यसि तच्छृणु॥१॥

ज्ञानं तेऽहं सविज्ञानिमदं वक्ष्याम्यशेषतः। यज्ज्ञात्वा नेह भूयोऽन्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते॥२॥

मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतित सिद्धये। यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः॥३॥ भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च। अहङ्कार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा॥४॥ अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम् । जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत् ॥५॥ एतद्योनीनि भूतानि सर्वाणीत्युपधारय। अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा॥६॥ मत्तः परतरं नान्यत् किञ्चिदस्ति धनञ्जय। मिय सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मिणगणा इव॥७॥ रसोऽहमप्सु कौन्तेय प्रभाऽस्मि शशिसूर्ययोः। प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः खे पौरुषं नृषु॥८॥ पुण्यो गन्धः पृथिव्यां च तेजश्चारिम विभावसौ। जीवनं सर्वभूतेषु तपश्चास्मि तपस्विषु॥९॥ बीजं मां सर्वभूतानां विद्धि पार्थ सनातनम् । बुद्धिर्बुद्धिमतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम् ॥१०॥

बलं बलवतां चाहं कामरागविवर्जितम् । धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ॥११॥ ये चैव सात्त्विका भावा राजसास्तामसाश्च ये। मत्त एवेति तान् विद्धि न त्वहं तेषु ते मिय॥१२॥ त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत्। मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परमव्ययम् ॥१३॥ दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया। मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते॥१४॥ न मां दुष्कृतिनो मूढाः प्रपद्यन्ते नराधमाः। माययाऽपहृतज्ञाना आसुरं भावमाश्रिताः॥१५॥ चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन। आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ॥१६॥ तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते। प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः॥१७॥ उदाराः सर्व एवैते ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम्। आस्थितः स हि युक्तात्मा मामेवानुत्तमां गतिम् ॥१८॥

बहुनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान् मां प्रपद्यते। वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः॥१९॥ कामेस्तेस्तेर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः। तं तं नियममास्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया॥२०॥ यो यो यां यां तनुं भक्तः श्रद्धयाऽर्चितुमिच्छति। तस्य तस्याचलां श्रद्धां तामेव विद्धाम्यहम् ॥२१॥ स तया श्रद्धया युक्तस्तस्यऽऽराधनमीहते। लभते च ततः कामान् मयैव विहितान् हि तान् ॥२२॥ अन्तवत्तु फलं तेषां तद्भवत्यल्पमेधसाम् । देवान् देवयजो यान्ति मद्भक्ता यान्ति मामपि॥२३॥ अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः। परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम् ॥२४॥ नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः। मूढोऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम् ॥२५॥ वेदाहं समतीतानि वर्तमानानि चार्जुन। भविष्याणि च भूतानि मां तु वेद न कश्चन॥२६॥

इच्छाद्वेषसमुत्थेन द्वन्द्वमोहेन भारत। सर्वभूतानि सम्मोहं सर्गे यान्ति परन्तप॥२७॥

येषां त्वन्तगतं पापं जनानां पुण्यकर्मणाम् । ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता भजन्ते मां दृढवताः॥२८॥

जरामरणमोक्षाय मामाश्रित्य यतन्ति ये। ते ब्रह्म तद्विदुः कृत्स्नमध्यात्मं कर्म चाखिलम् ॥२९॥

साधिभूताधिदैवं मां साधियज्ञं च ये विदुः। प्रयाणकालेऽपि च मां ते विदुर्युक्तचेतसः॥३०॥

॥ ॐ तत्सिदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे ज्ञानविज्ञानयोगो नाम सप्तमोऽध्यायः॥

॥ अष्टमोऽध्यायः॥

अर्जुन उवाच

किं तद्-ब्रह्म किमध्यात्मं किं कर्म पुरुषोत्तम। अधिभूतं च किं प्रोक्तमधिदैवं किमुच्यते॥१॥ अधियज्ञः कथं कोऽत्र देहेऽस्मिन् मधुसूदन। प्रयाणकाले च कथं ज्ञेयोऽसि नियतात्मभिः॥२॥ श्रीभगवानुवाच

अक्षरं ब्रह्म परमं स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते। भूतभावोद्भवकरो विसर्गः कर्मसंज्ञितः॥३॥

अधिभूतं क्षरो भावः पुरुषश्चाधिदैवतम् । अधियज्ञोऽहमेवात्र देहे देहभृतां वर॥४॥

अन्तकाले च मामेव स्मरन् मुक्तवा कलेवरम् । यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः॥५॥

यं यं वाऽपि स्मरन् भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम् । तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः॥६॥

तस्मात् सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर् युध्य च। मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयः॥७॥

अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नान्यगामिना। परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थानुचिन्तयन् ॥८॥ कविं पुराणम् अनुशासितारम् अनोरणीयांसम् अनुस्मरेद्यः। सर्वस्य धातारम् अचिन्त्यरूपम् आदित्यवर्णं तमसः परस्तात् ॥९॥

प्रयाणकाले मनसाऽचलेन भक्त्या युक्तो योगबलेन चैव। भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्य सम्यक् स तं परं पुरुषमुपैति दिव्यम् ॥१०॥

यदक्षरं वेदविदो वदन्ति विशन्ति यद्यतयो वीतरागाः। यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत् ते पदं सङ्घहेण प्रवक्ष्ये॥११॥

सर्वद्वाराणि संयम्य मनो हृदि निरुध्य च। मूर्ध्याधायऽऽत्मनः प्राणमास्थितो योगधारणाम् ॥१२॥

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन् मामनुस्मरन् । यः प्रयाति त्यजन् देहं स याति परमां गतिम् ॥१३॥

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरित नित्यशः। तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः॥१४॥ मामुपेत्य पुनर्जन्म दुःखालयमशाश्वतम्। नऽऽप्नुवन्ति महात्मानः संसिद्धिं परमां गताः॥१५॥ आब्रह्मभुवनाल्लोकाः पुनरावर्तिनोऽर्जुन। मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते॥१६॥ सहस्रयुगपर्यन्तमहर्यदु-ब्रह्मणो विदुः। रात्रिं युगसहस्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जनाः॥१७॥ अव्यक्तादु-व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे। रात्र्यागमे प्रलीयन्ते तत्रैवाव्यक्तसंज्ञके॥१८॥ भूतग्रामः स एवायं भूत्वा भूत्वा प्रलीयते। रात्र्यागमेऽवशः पार्थ प्रभवत्यहरागमे॥१९॥ परस्तस्मात्तु भावोऽन्योऽव्यक्तोऽव्यक्तात्सनातनः। यः स सर्वेषु भूतेषु नश्यत्सु न विनश्यति॥२०॥ अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्तस्तमाहुः परमां गतिम् ।

यं प्राप्य न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम॥२१॥

पुरुषः स परः पार्थ भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया। यस्यान्तःस्थानि भूतानि येन सर्वमिदं ततम् ॥२२॥ यत्र काले त्वनावृत्तिमावृत्तिं चैव योगिनः। प्रयाता यान्ति तं कालं वक्ष्यामि भरतर्षभ॥२३॥ अग्निज्यौतिरहः शुक्तः षण्मासा उत्तरायणम् । तत्र प्रयाता गच्छन्ति ब्रह्म ब्रह्मविदो जनाः॥२४॥ धूमो रात्रिस्तथा कृष्णः षण्मासा दक्षिणायनम् । तत्र चान्द्रमसं ज्योतिर्योगी प्राप्य निवर्तते॥२५॥ शुक्रकृष्णे गती ह्येते जगतः शाश्वते मते। एकया यात्यनावृत्तिमन्ययाऽऽवर्तते पुनः॥२६॥ नैते सती पार्थ जानन् योगी मुद्यति कश्चन। तस्मात् सर्वेषु कालेषु योगयुक्तो भवार्जुन॥२७॥ वेदेषु यज्ञेषु तपःसु चैव दानेषु यत् पुण्यफलं प्रदिष्टम् । अत्येति तत्सर्वमिदं विदित्वा

योगी परं स्थानमुपैति चऽऽद्यम् ॥२८॥

॥ ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे अक्षरब्रह्मयोगो नाम अष्टमोऽध्यायः॥

॥ नवमोऽध्यायः॥

श्रीभगवानुवाच

इदं तु ते गुह्यतमं प्रवक्ष्याम्यनसूयवे। ज्ञानं विज्ञानसहितं यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात् ॥१॥

राजविद्या राजगृह्यं पवित्रमिद्मुत्तमम् । प्रत्यक्षावगमं धर्म्यं सुसुखं कर्तुमव्ययम् ॥२॥

अश्रद्दधानाः पुरुषा धर्मस्यास्य परन्तप। अप्राप्य मां निवर्तन्ते मृत्युसंसारवर्त्मनि॥३॥

मया ततिमदं सर्वं जगद्व्यक्तमूर्तिना। मत्स्थानि सर्वभूतानि न चाहं तेष्ववस्थितः॥४॥

न च मत्स्थानि भूतानि पश्य मे योगमैश्वरम् । भूतभृन्न च भूतस्थो ममऽऽत्मा भूतभावनः॥५॥ यथाऽऽकाशस्थितो नित्यं वायुः सर्वत्रगो महान् । सर्वाणि भूतानि मत्स्थानीत्युपधारय॥६॥ सर्वभूतानि कौन्तेय प्रकृतिं यान्ति मामिकाम् । कल्पक्षये पुनस्तानि कल्पादौ विसृजाम्यहम् ॥७॥ प्रकृतिं स्वामवष्टभ्य विसृजामि पुनः पुनः। भूतग्रामिमं कृत्स्नमवशं प्रकृतेर्वशात् ॥८॥ न च मां तानि कर्माणि निबधन्ति धनञ्जय। उदासीनवदासीनमसक्तं तेषु कर्मस् ॥९॥ मयाऽध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम् । हेतुनाऽनेन कौन्तेय जगद्विपरिवर्तते॥१०॥ अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम् । परं भावमजानन्तो मम भूतमहेश्वरम् ॥११॥ मोघाशा मोघकर्माणो मोघज्ञाना विचेतसः। राक्षसीमासुरीं चैव प्रकृतिं मोहिनीं श्रिताः॥१२॥ महात्मानस्तु मां पार्थ दैवीं प्रकृतिमाश्रिताः। भजन्त्यनन्यमनसो ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम् ॥१३॥

सततं कीर्तयन्तो मां यतन्तश्च दृढव्रताः। नमस्यन्तश्च मां भक्त्या नित्ययुक्ता उपासते॥१४॥ ज्ञानयज्ञेन चाप्यन्ये यजन्तो मामुपासते। एकत्वेन पृथक्त्वेन बहुधा विश्वतोमुखम् ॥१५॥ अहं कतुरहं यज्ञः स्वधाऽहमहमौषधम् । मन्त्रोऽहमहमेवऽऽज्यमहमग्निरहं हृतम् ॥१६॥ पिताऽहमस्य जगतो माता धाता पितामहः। वेद्यं पवित्रमोङ्कार ऋक्साम यजुरेव च॥१७॥ गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत् । प्रभवः प्रलयः स्थानं निधानं बीजमव्ययम् ॥१८॥ तपाम्यहमहं वर्षं निगुण्हाम्युत्सृजामि च। अमृतं चैव मृत्युश्च सदसचाहमर्जुन॥१९॥ त्रैविद्या मां सोमपाः पूतपापाः यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गतिं प्रार्थयन्ते। ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्रलोकम् अश्नन्ति दिव्यान् दिवि देवभोगान् ॥२०॥

ते तं भुक्तवा स्वर्गलोकं विशालम् क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति। त्रयीधर्ममनुप्रपन्नाः एवं गतागतं कामकामा लभन्ते॥२१॥ अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते। तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥२२॥ येऽप्यन्यदेवताभक्ता यजन्ते श्रद्धयान्विताः। तेऽपि मामेव कौन्तेय यजन्त्यविधिपूर्वकम् ॥२३॥ अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्ता च प्रभुरेव च। न तु मामभिजानन्ति तत्त्वेनातश्च्यवन्ति ते॥ २४॥ यान्ति देवव्रता देवान् पितृन् यान्ति पितृव्रताः। भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति मद्याजिनोऽपि माम् ॥२५॥ पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति। तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः॥२६॥ यत् करोषि यदश्नासि यजुहोषि ददासि यत्। यत् तपस्यसि कौन्तेय तत् कुरुष्व मद्र्पणम् ॥२७॥

सन्न्यासयोगयुक्तात्मा विमुक्तो मामुपैष्यसि॥२८॥ समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः। ये भजन्ति तु मां भक्त्या मिय ते तेषु चाप्यहम् ॥२९॥ अपि चेत् सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्। साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः॥३०॥ क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्तिं निगच्छति। कौन्तेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति॥३१॥ मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्युः पापयोनयः। स्त्रियो वैश्यास्तथा शुद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम् ॥३२॥ किं पुनर्बाह्मणाः पुण्या भक्ता राजर्षयस्तथा। अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व माम् ॥३३॥ मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु। मामेवैष्यसि युक्तवैवमात्मानं मत्परायणः॥३४॥

॥ ॐ तत्सिदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे

श्रीकृष्णार्जुनसंवादे राजविद्याराजगुह्ययोगो नाम नवमोऽध्यायः॥

शुभाशुभफलैरेवं मोक्ष्यसे कर्मबन्धनैः।

॥दशमोऽध्यायः॥

श्रीभगवानुवाच

भूय एव महाबाहो शृणु मे परमं वचः। यत्तेऽहं प्रीयमाणाय वक्ष्यामि हितकाम्यया॥१॥ न मे विदः सुरगणाः प्रभवं न महर्षयः। अहमादिहिं देवानां महर्षीणां च सर्वशः॥२॥ यो मामजमनादिं च वेत्ति लोकमहेश्वरम् । असम्मूढः स मर्त्येषु सर्वपापैः प्रमुच्यते॥३॥ बुद्धिर्ज्ञानमसम्मोहः क्षमा सत्यं दुमः शमः। सुखं दुःखं भवोऽभावो भयं चाभयमेव च॥४॥ अहिंसा समता तुष्टिस्तपो दानं यशोऽयशः। भवन्ति भावा भूतानां मत्त एव पृथग्विधाः॥५॥ महर्षयः सप्त पूर्वे चत्वारो मनवस्तथा। मद्भावा मानसा जाता येषां लोक इमाः प्रजाः॥६॥ एतां विभूतिं योगं च मम यो वेत्ति तत्त्वतः। सोऽविकम्पेन योगेन युज्यते नात्र संशयः॥७॥

अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते। इति मत्वा भजन्ते मां बुधा भावसमन्विताः॥८॥ मिचित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम् । कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च॥९॥ तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम् । ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते॥१०॥ तेषामेवानुकम्पार्थम् अहमज्ञानजं तमः। नाशयाम्यात्मभावस्थो ज्ञानदीपेन भास्वता॥११॥ अर्जन उवाच

परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं भवान् । पुरुषं शाश्वतं दिव्यमादिदेवमजं विभुम् ॥१२॥

आहुस्त्वामृषयः सर्वे देवर्षिर्नारदस्तथा। असितो देवलो व्यासः स्वयं चैव ब्रवीषि मे॥१३॥ सर्वमेतदृतं मन्ये यन्मां वद्सि केशव। न हि ते भगवन् व्यक्तिं विदुर्देवा न दानवाः॥१४॥ स्वयमेवऽऽत्मनाऽऽत्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम।
भूतभावन भूतेश देवदेव जगत्पते॥१५॥
वक्तमर्हस्यशेषेण दिव्या ह्यात्मविभूतयः।
याभिर्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वं व्याप्य तिष्ठसि॥१६॥
कथं विद्यामहं योगिंस्त्वां सदा परिचिन्तयन् ।
केषु केषु च भावेषु चिन्त्योऽसि भगवन्मया॥१७॥
विस्तरेणऽऽत्मनो योगं विभूतिं च जनार्दन।
भूयः कथय तृप्तिर्हि शृण्वतो नास्ति मेऽमृतम् ॥१८॥
श्रीभगवानुवाच

हन्त ते कथियप्यामि दिव्या ह्यात्मविभूतयः। प्राधान्यतः कुरुश्रेष्ठ नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे॥१९॥

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः। अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च॥२०॥

आदित्यानामहं विष्णुज्यीतिषां रविरंशुमान् । मरीचिर्मरुतामस्मि नक्षत्राणामहं शशी॥२१॥

वेदानां सामवेदोऽस्मि देवानामस्मि वासवः। इन्द्रियाणां मनश्चारिम भूतानामरिम चेतना॥२२॥ रुद्राणां राङ्करश्चारिम वित्तेशो यक्षरक्षसाम् । वसूनां पावकश्चारिम मेरुः शिखरिणामहम् ॥२३॥ पुरोधसां च मुख्यं मां विद्धि पार्थ बृहस्पतिम् । सेनानीनामहं स्कन्दः सरसामस्मि सागरः॥२४॥ महर्षीणां भृगुरहं गिरामस्म्येकमक्षरम्। यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि स्थावराणां हिमालयः॥२५॥ अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां देवर्षीणां च नारदः। गन्धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलो मुनिः॥२६॥ उच्चैःश्रवसमश्वानां विद्धि माममृतोद्भवम् । ऐरावतं गजेन्द्राणां नराणां च नराधिपम् ॥२७॥ आयुधानामहं वज्रं धेनूनामस्मि कामधुक्। प्रजनश्चारिम कन्दर्पः सर्पाणामरिम वासुकिः॥२८॥ अनन्तश्चास्मि नागानां वरुणो यादसामहम् । पितृणामर्यमा चास्मि यमः संयमतामहम् ॥२९॥

प्रह्लादश्चास्मि दैत्यानां कालः कलयतामहम् । मृगाणां च मृगेन्द्रोऽहं वैनतेयश्च पक्षिणाम् ॥३०॥ पवनः पवतामस्मि रामः शस्त्रभृतामहम् । झषाणां मकरश्चारिम स्रोतसामरिम जाह्नवी॥३१॥ सर्गाणामादिरन्तश्च मध्यं चैवाहमर्जुन। अध्यात्मविद्या विद्यानां वादः प्रवदतामहम् ॥३२॥ अक्षराणामकारोऽस्मि द्वन्द्वः सामासिकस्य च। अहमेवाक्षयः कालो धाताऽहं विश्वतोमुखः॥३३॥ मृत्युः सर्वहरश्चाहमुद्भवश्च भविष्यताम्। कीर्तिः श्रीर्वाक नारीणां स्मृतिर्मेधा धृतिः क्षमा॥३४॥ बृहत्साम तथा साम्नां गायत्री छन्द्सामहम् । मासानां मार्गशीर्षोऽहमृतूनां कुसुमाकरः॥३५॥ छलयतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम् । जयोऽस्मि व्यवसायोऽस्मि सत्त्वं सत्त्ववतामहम् ॥३६॥ वृष्णीनां वासुदेवोऽस्मि पाण्डवानां धनञ्जयः। मुनीनामप्यहं व्यासः कवीनामुशना कविः॥३७॥

दण्डो दमयतामस्मि नीतिरस्मि जिगीषताम् । मौनं चैवास्मि गुह्यानां ज्ञानं ज्ञानवतामहम् ॥३८॥

यचापि सर्वभूतानां बीजं तद्दमर्जुन। न तदस्ति विना यत्स्यान्मया भूतं चराचरम् ॥३९॥

नान्तोऽस्ति मम दिव्यानां विभूतीनां परन्तप। एष तूद्देशतः प्रोक्तो विभूतेर्विस्तरो मया॥४०॥

यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा। तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंशसम्भवम् ॥४१॥

अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन। विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् ॥४२॥

॥ ॐ तत्सिदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे विभृतियोगो नाम दशमोऽध्यायः॥

॥ एकादशोऽध्यायः॥

अर्जुन उवाच

मद्नुग्रहाय परमं गुह्यमध्यात्मसंज्ञितम् । यत्त्वयोक्तं वचस्तेन मोहोऽयं विगतो मम॥१॥

भवाप्ययौ हि भूतानां श्रुतौ विस्तरशो मया। त्वत्तः कमलपत्राक्ष माहात्म्यमपि चाव्ययम् ॥२॥

एवमेतद्यथाऽऽत्थ त्वमात्मानं परमेश्वर। द्रष्टुमिच्छामि ते रूपमैश्वरं पुरुषोत्तम॥३॥

मन्यसे यदि तच्छक्यं मया द्रष्टुमिति प्रभो। योगेश्वर ततो मे त्वं दर्शयऽऽत्मानमव्ययम् ॥४॥

श्रीभगवानुवाच

परय मे पार्थ रूपाणि रातशोऽथ सहस्रशः। नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णाकृतीनि च॥५॥

पश्यऽऽदित्यान् वसून् रुद्रानिश्वनौ मरुतस्तथा। बहून्यदृष्टपूर्वाणि पश्यऽऽश्चर्याणि भारत॥६॥

इहैकस्थं जगत्कृत्स्नं पश्यऽऽद्य सचराचरम् । मम देहे गुडाकेश यचान्यदु-द्रष्टृमिच्छसि॥७॥ न तु मां शक्यसे द्रष्टुमनेनैव स्वचक्षुषा। दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य मे योगमैश्वरम् ॥८॥

सञ्जय उवाच

एवमुत्तवा ततो राजन् महायोगेश्वरो हरिः। दर्शयामास पार्थाय परमं रूपमैश्वरम् ॥९॥

अनेकवऋनयनमनेकाद्भुतदर्शनम् । अनेकदिव्याभरणं दिव्यानेकोद्यतायुधम् ॥१०॥

दिव्यमाल्याम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम् । सर्वाश्चर्यमयं देवमनन्तं विश्वतोमुखम् ॥११॥

दिवि सूर्यसहस्रस्य भवेद्युगपदुत्थिता। यदि भाः सदृशी सा स्याद्भासस्तस्य महात्मनः॥१२॥

तत्रैकस्थं जगत्कृत्स्नं प्रविभक्तमनेकधा। अपश्यद्देवदेवस्य शरीरे पाण्डवस्तदा॥१३॥

ततः स विस्मयाविष्टो हृष्टरोमा धनञ्जयः। प्रणम्य शिरसा देवं कृताञ्जलिरभाषत॥१४॥

अर्जुन उवाच

पश्यामि देवांस्तव देव देहे सर्वांस्तथा भूतविशेषसङ्घान्। ब्रह्माणमीशं कमलासनस्थम् ऋषींश्च सर्वानुरगांश्च दिव्यान्॥१५॥

अनेकबाहृद्रवऋनेत्रम्
पश्यामि त्वां सर्वतोऽनन्तरूपम् ।
नान्तं न मध्यं न पुनस्तवऽऽदिम्
पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूप॥१६॥

किरीटिनं गदिनं चिकणं च तेजोराशिं सर्वतो दीप्तिमन्तम् । पश्यामि त्वां दुर्निरीक्ष्यं समन्ताद्-दीप्तानलार्कसुतिमप्रमेयम् ॥१७॥

त्वमक्षरं परमं वेदितव्यम् त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम् । त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता सनातनस्त्वं पुरुषो मतो मे॥१८॥ अनादिमध्यान्तमनन्तवीर्यम् अनन्तबाहुं शशिसूर्यनेत्रम् । पश्यामि त्वां दीप्तहुताशवऋम् स्वतेजसा विश्वमिदं तपन्तम् ॥१९॥

द्यावापृथिव्योरिदमन्तरं हि व्याप्तं त्वयैकेन दिशश्च सर्वाः। दृष्ट्वाऽद्भुतं रूपमुग्रं तवेदम् लोकत्रयं प्रव्यथितं महात्मन् ॥२०॥

अमी हि त्वां सुरसङ्घा विश्वन्ति केचिद्भीताः प्राञ्जलयो गृणन्ति। स्वस्तीत्युक्त्वा महर्षिसिद्धसङ्घाः स्तुवन्ति त्वां स्तुतिभिः पुष्कलाभिः॥२१॥

रुद्रादित्या वसवो ये च साध्याः विश्वेश्विनौ मरुतश्चोष्मपाश्च। गन्धर्वयक्षासुरसिद्धसङ्घाः वीक्षन्ते त्वां विस्मिताश्चेव सर्वे॥२२॥ रूपं महत्ते बहुवऋनेत्रम्
महाबाहो बहुबाहूरुपादम् ।
बहूद्रं बहुद्रंष्ट्राकरालम्
दृष्ट्वा लोकाः प्रव्यथितास्तथाऽहम् ॥२३॥

नभःस्पृशं दीप्तमनेकवर्णम् व्यात्ताननं दीप्तविशालनेत्रम् । दृष्ट्वा हि त्वां प्रव्यथितान्तरात्मा धृतिं न विन्दामि शमं च विष्णो॥२४॥

द्ष्ट्राकरालानि च ते मुखानि दृष्ट्वैव कालानलसन्निभानि। दिशो न जाने न लभे च शर्म प्रसीद देवेश जगन्निवास॥२५॥

अमी च त्वां धृतराष्ट्रस्य पुत्राः सर्वे सहैवावनिपालसङ्घैः। भीष्मो द्रोणः सूतपुत्रस्तथाऽसौ सहास्मदीयैरपि योधमुख्यैः॥२६॥ वऋाणि ते त्वरमाणा विश्चान्ति दंष्ट्राकरालानि भयानकानि। केचिद्विलग्ना दशनान्तरेषु सन्दृश्यन्ते चूर्णितैरुत्तमाङ्गेः॥२७॥

यथा नदीनां बहवोऽम्बुवेगाः समुद्रमेवाभिमुखा द्रवन्ति। तथा तवामी नरलोकवीरा विशन्ति वऋाण्यभिविज्वलन्ति॥२८॥

यथा प्रदीप्तं ज्वलनं पतङ्गाः विशन्ति नाशाय समृद्धवेगाः। तथैव नाशाय विशन्ति लोकाः तवापि वऋाणि समृद्धवेगाः॥२९॥

लेलिह्यसे ग्रसमानः समन्तात् लोकान् समग्रान् वदनैर्ज्वलद्भिः। तेजोभिरापूर्य जगत् समग्रम् भासस्तवोग्राः प्रतपन्ति विष्णो॥३०॥

आख्याहि मे को भवानुग्ररूपो-नमोऽस्तु ते देववर प्रसीद्। विज्ञातुमिच्छामि भवन्तमाद्यम् न हि प्रजानामि तव प्रवृत्तिम् ॥३१॥ श्रीभगवानुवाच कालोऽस्मि लोकक्षयकृत् प्रवृद्धो-लोकान् समाहर्तुमिह प्रवृत्तः। ऋतेऽपि त्वां न भविष्यन्ति सर्वे येऽवस्थिताः प्रत्यनीकेषु योधाः॥३२॥ तस्मात् त्वमुत्तिष्ठ यशो लभस्व जित्वा शत्रुन् भुङ्क राज्यं समृद्धम् । मयेवैते निहताः पूर्वमेव निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन ॥३३॥ द्रोणं च भीष्मं च जयद्रथं च कर्णं तथाऽन्यानिप योधवीरान् । मया हतांस्त्वं जिह मा व्यथिष्ठा युध्यस्व जेतासि रणे सपत्नान् ॥३४॥

सञ्जय उवाच

एतच्छुत्वा वचनं केशवस्य कृताञ्जलिर्वेपमानः किरीटी। नमस्कृत्वा भूय एवऽऽह कृष्णम् सगद्गदं भीतभीतः प्रणम्य॥३५॥

अर्जुन उवाच

स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या जगत् प्रहृष्यत्यनुरज्यते च। रक्षांसि भीतानि दिशो द्रवन्ति सर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसङ्घाः॥३६॥

कस्माच ते न नमेरन् महात्मन् गरीयसे ब्रह्मणोऽप्यादिकर्त्रे। अनन्त देवेश जगन्निवास त्वमक्षरं सदसत्तत्परं यत् ॥३७॥ त्वमादिदेवः पुरुषः पुराणः त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम् । वेत्ताऽसि वेद्यं च परं च धाम त्वया ततं विश्वमनन्तरूप॥३८॥

वायुर्यमोऽग्निर्वरुणः शशाङ्कः प्रजापतिस्त्वं प्रपितामहश्च। नमो नमस्तेऽस्तु सहस्रकृत्वः पुनश्च भूयोऽपि नमो नमस्ते॥३९॥

नमः पुरस्ताद्थ पृष्ठतस्ते नमोऽस्तु ते सर्वत एव सर्व। अनन्तवीर्यामितविक्रमस्त्वम् सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः॥४०॥

सखेति मत्वा प्रसमं यदुक्तम् हे कृष्ण हे यादव हे सखेति। अजानता महिमानं तवेदम् मया प्रमादात्प्रणयेन वाऽपि॥४१॥ यचावहासार्थमसत्कृतोऽसि विहारशय्यासनभोजनेषु । एकोऽथवाऽप्यच्युत तत् समक्षम् तत् क्षामये त्वामहमप्रमेयम् ॥४२॥

पिताऽसि लोकस्य चराचरस्य त्वमस्य पूज्यश्च गुरुर्गरीयान् । न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यो लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभाव ॥४३॥

तस्मात् प्रणम्य प्रणिधाय कायम् प्रसादये त्वामहमीशमीड्यम् । पितेव पुत्रस्य सखेव सख्युः प्रियः प्रियायार्हसि देव सोढुम् ॥४४॥

अदृष्टपूर्वं हृषितोऽस्मि दृष्ट्वा भयेन च प्रव्यथितं मनो मे। तदेव मे दर्शय देव रूपम् प्रसीद देवेश जगन्निवास॥४५॥ किरीटिनं गदिनं चक्रहस्तम् इच्छामि त्वां द्रष्टुमहं तथैव। तेनैव रूपेण चतुर्भुजेन सहस्रबाहो भव विश्वमूर्ते॥४६॥

श्रीभगवानुवाच

मया प्रसन्नेन तवार्जुनेदम् रूपं परं दर्शितमात्मयोगात् । तेजोमयं विश्वमनन्तमाद्यम् यन्मे त्वदन्येन न दृष्टपूर्वम् ॥४७॥

न वेदयज्ञाध्ययनैर्न दानैः न च कियाभिर्न तपोभिरुग्रैः। एवं रूपः शक्य अहं नृलोके द्रष्टुं त्वद्न्येन कुरुप्रवीर॥४८॥ मा ते व्यथा मा च विमूढभावो दृष्ट्वा रूपं घोरमीदृङ्ममेदृम् । व्यपेतभीः प्रीतमनाः पुनस्त्वम् तदेव मे रूपिमदं प्रपञ्च॥४९॥

सञ्जय उवाच

इत्यर्जुनं वासुदेवस्तथोत्तवा स्वकं रूपं दर्शयामास भूयः। आश्वासयामास च भीतमेनम् भूत्वा पुनः सौम्यवपुर्महात्मा॥५०॥

अर्जुन उवाच

दृष्ट्वेदं मानुषं रूपं तव सौम्यं जनार्दन। इदानीमस्मि संवृत्तः सचेताः प्रकृतिं गतः॥५१॥ श्रीभगवानुवाच

सुदुर्दर्शमिदं रूपं दृष्टवानिस यन्मम। देवा अप्यस्य रूपस्य नित्यं दर्शनकाङ्क्षिणः॥५२॥ नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया। राक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानिस मां यथा॥५३॥

भक्त्या त्वनन्यया शक्यम् अहमेवंविधोऽर्जुन। ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परन्तप॥५४॥

मत्कर्मकृन्मत्परमो मद्भक्तः सङ्गवर्जितः। निर्वैरः सर्वभूतेषु यः स मामेति पाण्डव॥५५॥

॥ ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे विश्वरूपदर्शनयोगो नाम एकादशोऽध्यायः॥

॥ द्वादशोऽध्यायः॥

अर्जुन उवाच

एवं सततयुक्ता ये भक्तास्त्वां पर्युपासते। ये चाप्यक्षरमव्यक्तं तेषां के योगवित्तमाः॥१॥

श्रीभगवानुवाच

मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते। श्रद्धया परयोपेताः ते मे युक्ततमा मताः॥२॥ ये त्वक्षरमनिर्देश्यम् अव्यक्तं पर्युपासते। सर्वत्रगमचिन्त्यं च कूटस्थम् अचलं ध्रुवम् ॥३॥ सन्नियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः। ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहिते रताः॥४॥ क्केशोऽधिकतरस्तेषाम् अव्यक्तासक्तचेतसाम् । अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते॥५॥ ये तु सर्वाणि कर्माणि मिय सन्न्यस्य मत्परः। अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते॥६॥ तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात्। भवामि न चिरात् पार्थ मय्यावेशितचेतसाम् ॥७॥ मय्येव मन आधत्स्व मिय बुद्धिं निवेशय। निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः॥८॥ अथ चित्तं समाधातुं न शकोषि मयि स्थिरम् । अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाऽऽप्तुं धनञ्जय॥९॥

अभ्यासेऽप्यसमर्थोऽसि मत्कर्मपरमो भव। मदर्थमपि कर्माणि कुर्वन् सिद्धिमवाप्स्यसि॥१०॥ अथैतदप्यशक्तोऽसि कर्तुं मद्योगमाश्रितः। सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान् ॥११॥ श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानादुध्यानं विशिष्यते। ध्यानात् कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छान्तिरनन्तरम् ॥१२॥ अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च। निर्ममो निरहङ्कारः समदुःखसुखः क्षमी॥१३॥ सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दढनिश्चयः। मय्यर्पितमनोबुद्धियों मद्भक्तः स मे प्रियः॥१४॥ यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः। हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः॥१५॥ अनपेक्षः श्रुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः। सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः॥१६॥

यो न हृष्यिति न द्वेष्टि न शोचित न काङ्क्षिति। शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान् यः स मे प्रियः॥१७॥ समः रात्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः। रातोष्णसुखदुःखेषु समः सङ्गविवर्जितः॥१८॥

तुल्यनिन्दास्तुतिमौंनी सन्तुष्टो येन केनचित् । अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान् मे प्रियो नरः॥१९॥

ये तु धर्म्यामृतिमदं यथोक्तं पर्युपासते। श्रद्दधाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः॥२०॥

॥ ॐ तत्सिदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे भक्तियोगो नाम द्वादशोऽध्यायः॥

॥ त्रयोदशोऽध्यायः॥

श्रीभगवानुवाच

इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते। एतद्यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः॥१॥

क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत। क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञानं मतं मम॥२॥

तत् क्षेत्रं यच यादक यद्विकारि यतश्च यत्। स च यो यत्प्रभावश्च तत्समासेन मे शृणु॥३॥ ऋषिभिर्बहुधा गीतं छन्दोभिर्विविधैः पृथक्। ब्रह्मसूत्रपदेश्येव हेतुमद्भिर्विनिश्चितेः॥४॥ महाभूतान्यहङ्कारो बुद्धिरव्यक्तमेव च। इन्द्रियाणि दशैकं च पञ्च चेन्द्रियगोचराः॥५॥ इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं सङ्घातश्चेतना धृतिः। एतत् क्षेत्रं समासेन सविकारमुदाहृतम् ॥६॥ अमानित्वमदम्भित्वमहिंसा क्षान्तिरार्जवम् । आचार्योपासनं शौचं स्थैर्यमात्मविनिग्रहः॥७॥ इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहङ्कार एव च। जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् ॥८॥ असक्तिरनभिष्वङ्गः पुत्रदारगृहादिषु। नित्यं च समचित्तत्विमष्टानिष्टोपपत्तिषु ॥९॥ मयि चानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचारिणी। विविक्तदेशसेवित्वम् अरतिर्जनसंसदि॥१०॥

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम् । एतज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोऽन्यथा॥११॥ ज्ञेयं यत्तत्प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वाऽमृतमश्चते। अनादिमत्परं ब्रह्म न सत्तन्नासदुच्यते॥१२॥ सर्वतः पाणिपादं तत् सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् । सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति॥१३॥ सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम् । असक्तं सर्वभृचैव निर्गुणं गुणभोक्त च॥१४॥ बहिरन्तश्च भूतानामचरं चरमेव च। सूक्ष्मत्वात्तद्विज्ञेयं दूरस्थं चान्तिके च तत् ॥१५॥ अविभक्तं च भूतेषु विभक्तमिव च स्थितम् । भूतभर्तृ च तज्ज्ञेयं ग्रसिष्णु प्रभविष्णु च॥१६॥ ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमसः परमुच्यते। ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य विष्ठितम् ॥१७॥ इति क्षेत्रं तथा ज्ञानं ज्ञेयं चोक्तं समासतः। मद्भक्त एतद्विज्ञाय मद्भावायोपपद्यते॥१८॥

प्रकृतिं पुरुषं चैव विदुध्यनादि उभावि। विकारांश्च गुणांश्चेव विद्धि प्रकृतिसम्भवान् ॥ १९॥ कार्यकारणकर्तृत्वे हेतुः प्रकृतिरुच्यते। पुरुषः सुखदुःखानां भोक्तृत्वे हेतुरुच्यते॥२०॥ पुरुषः प्रकृतिस्थो हि भुङ्के प्रकृतिजान् गुणान् । कारणं गुणसङ्गोऽस्य सदसद्योनिजन्मसु॥२१॥ उपद्रष्टाऽनुमन्ता च भर्ता भोक्ता महेश्वरः। परमात्मेति चाप्युक्तो देहेऽस्मिन् पुरुषः परः॥२२॥ य एवं वेत्ति पुरुषं प्रकृतिं च गुणैः सह। सर्वथा वर्तमानोऽपि न स भूयोऽभिजायते॥२३॥ ध्यानेनऽऽत्मनि पश्यन्ति केचिदात्मानमात्मना। अन्ये साङ्खोन योगेन कर्मयोगेन चापरे॥२४॥ अन्ये त्वेवमजानन्तः श्रुत्वाऽन्येभ्य उपासते। तेऽपि चातितरन्त्येव मृत्युं श्रुतिपरायणाः॥२५॥ यावत् सञ्जायते किञ्चित् सत्त्वं स्थावरजङ्गमम् । क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात् तद्विद्धि भरतर्षभ॥२६॥ समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्तं परमेश्वरम् । विनश्यत्स्वविनश्यन्तं यः पश्यति स पश्यति॥२७॥ समं पश्यन् हि सर्वत्र समवस्थितमीश्वरम् । न हिनस्त्यात्मनाऽऽत्मानं ततो याति परां गतिम् ॥२८॥

प्रकृत्यैव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वशः।

यः पश्यति तथाऽऽत्मानमकर्तारं स पश्यति॥२९॥ यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति। तत एव च विस्तारं ब्रह्म सम्पद्यते तदा॥३०॥ अनादित्वान्निर्गुणत्वात् परमात्माऽयमव्ययः। शरीरस्थोऽपि कौन्तेय न करोति न लिप्यते॥३१॥ यथा सर्वगतं सौक्ष्म्यादाकाशं नोपलिप्यते। सर्वत्रावस्थितो देहे तथाऽऽत्मा नोपलिप्यते॥३२॥ यथा प्रकाशयत्येकः कृत्स्नं लोकिममं रविः। क्षेत्रं क्षेत्री तथा कृत्स्नं प्रकाशयति भारत॥३३॥ क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोरेवम् अन्तरं ज्ञानचक्षुषा। भूतप्रकृतिमोक्षं च ये विदुर्यान्ति ते परम् ॥३४॥

॥ ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे क्षेत्रक्षेत्रज्ञविभागयोगो नाम त्रयोदशोऽध्यायः॥

॥ चतुर्दशोऽध्यायः॥ श्रीभगवानुवाच

परं भूयः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानां ज्ञानमुत्तमम् । यज्ज्ञात्वा मुनयः सर्वे परां सिद्धिमितो गताः॥१॥ इदं ज्ञानमुपाश्रित्य मम साधम्यमागताः। सर्गेऽपि नोपजायन्ते प्रलये न व्यथन्ति च॥२॥ मम योनिर्महदु-ब्रह्म तस्मिन्गर्भं द्धाम्यहम् । सम्भवः सर्वभूतानां ततो भवति भारत॥३॥ सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः सम्भवन्ति याः। तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता॥४॥ सत्त्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिसम्भवाः। निबध्नन्ति महाबाहो देहे देहिनमव्ययम् ॥५॥

तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात् प्रकाशकमनामयम् । सुखसङ्गेन बधाति ज्ञानसङ्गेन चानघ॥६॥ रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासङ्गसमुद्भवम् । तन्निबध्नाति कौन्तेय कर्मसङ्गेन देहिनम् ॥७॥ तमस्त्वज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम् । प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत॥८॥ सत्त्वं सुखे सञ्जयति रजः कर्मणि भारत। ज्ञानमावृत्य तु तमः प्रमादे सञ्जयत्युत॥९॥ रजस्तमश्चामिभूय सत्त्वं भवति भारत। रजः सत्त्वं तमश्चैव तमः सत्त्वं रजस्तथा॥१०॥ सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन् प्रकाश उपजायते। ज्ञानं यदा तदा विद्याद्विवृद्धं सत्त्वमित्युत॥११॥ लोभः प्रवृत्तिरारम्भः कर्मणामश्चमः स्पृहा। रजस्येतानि जायन्ते विवृद्धे भरतर्षभ॥१२॥ अप्रकाशोऽप्रवृत्तिश्च प्रमादो मोह एव च। तमस्येतानि जायन्ते विवृद्धे कुरुनन्दन॥१३॥

यदा सत्त्वे प्रवृद्धे तु प्रलयं याति देहभृत् । तदोत्तमविदां लोकानमलान् प्रतिपद्यते॥१४॥ रजिस प्रलयं गत्वा कर्मसिङ्गेषु जायते। तथा प्रलीनस्तमिस मूढयोनिषु जायते॥१५॥

कर्मणः सुकृतस्यऽऽहुः सात्त्विकं निर्मलं फलम् । रजसस्तु फलं दुःखमज्ञानं तमसः फलम् ॥१६॥

सत्त्वात्सञ्जायते ज्ञानं रजसो लोभ एव च। प्रमादमोहौ तमसो भवतोऽज्ञानमेव च॥१७॥

ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः। जघन्यगुणवृत्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसाः॥१८॥

नान्यं गुणेभ्यः कर्तारं यदा द्रष्टाऽनुपश्यति।
गुणेभ्यश्च परं वेत्ति मद्भावं सोऽधिगच्छति॥१९॥
गुणानेतानतीत्य त्रीन् देही देहसमुद्भवान्।
जन्ममृत्युजरादुःखैर्विमुक्तोऽमृतमश्चते॥२०॥
अर्जुन उवाच

कैर्लिङ्गैस्त्रीन् गुणानेतानतीतो भवति प्रभो। किमाचारः कथं चैतांस्त्रीन् गुणानतिवर्तते॥२१॥ श्रीभगवानुवाच

प्रकाशं च प्रवृत्तिं च मोहमेव च पाण्डव। न द्वेष्टि सम्प्रवृत्तानि न निवृत्तानि काङ्क्षिति॥२२॥ उदासीनवदासीनो गुणैर्यो न विचाल्यते। गुणा वर्तन्त इत्येव योऽवतिष्ठति नेङ्गते॥२३॥ समदुःखसुखः स्वस्थः समलोष्टारमकाञ्चनः। तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः॥२४॥ मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्यो मित्रारिपक्षयोः। सर्वारम्भपरित्यागी गुणातीतः स उच्यते॥२५॥ मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते। स गुणान् समतीत्यैतान् ब्रह्मभूयाय कल्पते॥२६॥ ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाऽहममृतस्याव्ययस्य च। शाश्वतस्य च धर्मस्य सुखस्यैकान्तिकस्य च॥२७॥

॥ ॐ तत्सिदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे

श्रीकृष्णार्जुनसंवादे गुणत्रयविभागयोगो नाम चतुर्दशोऽध्यायः॥

॥ पञ्चदशोऽध्यायः॥

श्रीभगवानुवाच

ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम् । छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित् ॥१॥

> अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखाः गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः। अधश्च मूलान्यनुसन्ततानि कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके॥२॥

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते नान्तो न चऽऽदिर्न च सम्प्रतिष्ठा। अश्वत्थमेनं सुविरूढमूलम् असङ्गरास्त्रेण दृढेन छित्त्वा॥३॥ ततः पदं तत् परिमार्गितव्यम् यस्मिन् गता न निवर्तन्ति भूयः। तमेव चऽऽद्यं पुरुषं प्रपद्ये यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी॥४॥

निर्मानमोहा जितसङ्गदोषाः अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः। द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञेः गच्छन्त्यमृद्धाः पदमव्ययं तत् ॥५॥

न तद्भासयते सूर्यों न शशाङ्को न पावकः। यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम॥६॥ ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः। मनःषष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति॥७॥ शरीरं यद्वाप्नोति यच्चाप्युत्कामतीश्वरः। गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गन्धानिवाशयात्॥८॥

श्रोत्रं चक्षुः स्पर्शनं च रसनं घ्राणमेव च। अधिष्ठाय मनश्चायं विषयानुपसेवते॥९॥ उत्क्रामन्तं स्थितं वाऽपि भुञ्जानं वा गुणान्वितम् । विमूढा नानुपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः॥१०॥ यतन्तो योगिनश्चैनं पश्यन्त्यात्मन्यवस्थितम् । यतन्तोऽप्यकृतात्मानो नैनं पश्यन्त्यचेतसः॥११॥ यदाऽऽदित्यगतं तेजो जगद्भासयतेऽखिलम् । यचन्द्रमसि यच्चाग्नौ तत्तेजो विद्धि मामकम् ॥१२॥ गामाविश्य च भूतानि धारयाम्यहमोजसा। पुष्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मकः॥१३॥

अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः। प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम् ॥१४॥

सर्वस्य चाहं हृदि सिन्नविष्टो-मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च। वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो-वेदान्तकृद्वेदिवदेव चाहम् ॥१५॥

द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च। क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते॥१६॥ उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः।
यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः॥१७॥
यस्मात् क्षरमतीतोऽहृम् अक्षरादिप चोत्तमः।
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः॥१८॥
यो मामेवमसम्मूढो जानाति पुरुषोत्तमम्।
स सर्वविद्धजित मां सर्वभावेन भारत॥१९॥
इति गुद्धतमं शास्त्रमिदमुक्तं मयाऽनघ।
एतद्-बुद्ध्वा बुद्धिमान् स्यात् कृतकृत्यश्च भारत॥२०॥
॥ ॐ तत्सिदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे
श्रीकृष्णार्जुनसंवादे पुरुषोत्तमयोगो नाम पञ्चदशोऽध्यायः॥

॥ षोडशोऽध्यायः॥

श्रीभगवानुवाच

अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः। दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ॥१॥ अहिंसा सत्यमकोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम् । दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं हीरचापलम् ॥२॥

तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता। भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत॥३॥ दम्भो दर्पोऽभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च। अज्ञानं चाभिजातस्य पार्थ सम्पदमासुरीम् ॥४॥ दैवी सम्पद्विमोक्षाय निबन्धायऽऽसुरी मता। मा श्रुचः सम्पदं दैवीमभिजातोऽसि पाण्डव॥५॥ द्रौ भूतसर्गौ लोकेऽस्मिन् दैव आसुर एव च। दैवो विस्तरशः प्रोक्त आसुरं पार्थ मे शृणु ॥६॥ प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च जना न विदुरासुराः। न शौचं नापि चऽऽचारो न सत्यं तेषु विद्यते॥७॥ असत्यमप्रतिष्ठं ते जगदाहरनीश्वरम्। अपरस्परसम्भूतं किमन्यत् कामहैतुकम् ॥८॥ एतां दृष्टिमवष्टभ्य नष्टात्मानोऽल्पबुद्धयः। प्रभवन्त्युग्रकर्माणः क्षयाय जगतोऽहिताः॥९॥ काममाश्रित्य दुष्पूरं दम्भमानमदान्विताः। मोहाद्गृहीत्वाऽसद्ग्राहान् प्रवर्तन्तेऽशुचिव्रताः॥१०॥

चिन्तामपरिमेयां च प्रलयान्तामुपाश्रिताः। कामोपभोगपरमा एतावदिति निश्चिताः॥११॥ आशापाशशतैर्बद्धाः कामकोधपरायणाः। ईहन्ते कामभोगार्थम् अन्यायेनार्थसञ्चयान् ॥१२॥ इदमद्य मया लब्धमिमं प्राप्स्ये मनोरथम् । इदमस्तीदमपि मे भविष्यति पुनर्धनम् ॥१३॥ असौ मया हतः शत्रुईनिष्ये चापरानि। ईश्वरोऽहमहं भोगी सिद्धोऽहं बलवान् सुखी॥१४॥ आढ्योऽभिजनवानस्मि कोऽन्योस्ति सहशो मया। यक्ष्ये दास्यामि मोदिष्य इत्यज्ञानविमोहिताः॥१५॥ अनेकचित्तविभ्रान्ता मोहजालसमावृताः। प्रसक्ताः कामभोगेषु पतन्ति नरकेऽशुचौ॥१६॥ आत्मसम्भाविताः स्तब्धा धनमानमदान्विताः। यजन्ते नामयज्ञैस्ते दम्भेनाविधिपूर्वकम् ॥१७॥ अहङ्कारं बलं दर्पं कामं क्रोधं च संश्रिताः। मामात्मपरदेहेषु प्रद्विषन्तोऽभ्यसूयकाः॥१८॥

तानहं द्विषतः क्रूरान् संसारेषु नराधमान् । क्षिपाम्यजस्त्रमशुभान् आसुरीष्वेव योनिषु॥१९॥

आसुरीं योनिमापन्ना मूढा जन्मनि जन्मनि। मामप्राप्यैव कौन्तेय ततो यान्त्यधमां गतिम् ॥२०॥

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः। कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतस्त्रयं त्यजेत् ॥२१॥

एतैर्विमुक्तः कौन्तेय तमोद्वारैस्त्रिभिर्नरः। आचरत्यात्मनः श्रेयस्ततो याति परां गतिम् ॥२२॥

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः। न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम् ॥२३॥

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ। ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि॥२४॥

॥ ॐ तत्सिदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे दैवासुरसम्पद्विभागयोगो नाम षोडशोऽध्यायः॥

॥ सप्तदशोऽध्यायः॥

अर्जुन उवाच

ये शास्त्रविधिमुत्सृज्य यजन्ते श्रद्धयाऽन्विताः। तेषां निष्ठा तु का कृष्ण सत्त्वमाहो रजस्तमः॥१॥

श्रीभगवानुवाच

त्रिविधा भवति श्रद्धा देहिनां सा स्वभावजा। सात्त्विकी राजसी चैव तामसी चेति तां शृणु॥२॥

सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत। श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छुद्धः स एव सः॥३॥

यजन्ते सात्त्विका देवान् यक्षरक्षांसि राजसाः। प्रेतान् भूतगणांश्चान्ये यजन्ते तामसा जनाः॥४॥

अशास्त्रविहितं घोरं तप्यन्ते ये तपो जनाः। दम्भाहङ्कारसंयुक्ताः कामरागबलान्विताः॥५॥

कर्षयन्तः शरीरस्थं भूतग्राममचेतसः। मां चैवान्तःशरीरस्थं तान् विदुध्यासुरनिश्चयान् ॥६॥

आहारस्त्विप सर्वस्य त्रिविधो भवति प्रियः। यज्ञस्तपस्तथा दानं तेषां भेदिममं शृणु॥७॥ आयुःसत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः सात्त्विकप्रियाः॥८॥ कद्वस्रलवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः आहारा राजसस्येष्टा दुःखशोकामयप्रदाः॥९॥ यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत् । उच्छिप्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियम् ॥१०॥ अफलाङ्क्षिभिर्यज्ञो विधिदृष्टो य इज्यते। यष्टव्यमेवेति मनः समाधाय स सात्त्विकः॥११॥ अभिसन्धाय तु फलं दम्भार्थमपि चैव यत् । इज्यते भरतश्रेष्ठ तं यज्ञं विद्धि राजसम् ॥१२॥ विधिहीनमसृष्टान्नं मन्त्रहीनमदक्षिणम् । श्रद्धाविरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते॥१३॥ देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं शौचमार्जवम् । ब्रह्मचर्यमहिंसा च शारीरं तप उच्यते॥१४॥

अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत् । स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते॥१५॥ मनः प्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः। भावसंशुद्धिरित्येतत् तपो मानसमुच्यते॥१६॥ श्रद्धया परया तप्तं तपस्तत त्रिविधं नरेः। अफलाकाङ्क्षिभिर्युक्तैः सात्त्विकं परिचक्षते॥१७॥ सत्कारमानपूजार्थं तपो दम्भेन चैव यत् । कियते तिदह प्रोक्तं राजसं चलमध्रुवम् ॥१८॥ मूढ्याहेणऽऽत्मनो यत् पीड्या क्रियते तपः। परस्योत्सादनार्थं वा तत्तामसमुदाहृतम् ॥ १९॥ दातव्यमिति यद्दानं दीयतेऽनुपकारिणे। देशे काले च पात्रे च तद्दानं सात्त्विकं स्मृतम् ॥२०॥ यत्तु प्रत्युपकारार्थं फलमुद्दिश्य वा पुनः। दीयते च परिक्षिष्टं तद्दानं राजसं स्मृतम् ॥२१॥ अदेशकाले यहानम् अपात्रेभ्यश्च दीयते। असत्कृतमवज्ञातं तत्तामसमुदाहृतम् ॥२२॥

ॐ तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः। ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च यज्ञाश्च विहिताः पुरा॥२३॥ तस्मादोमित्युदाहृत्य यज्ञदानतपः क्रियाः। प्रवर्तन्ते विधानोक्ताः सततं ब्रह्मवादिनाम् ॥२४॥ तदित्यनभिसन्धाय फलं यज्ञतपःक्रियाः। दानिकयाश्च विविधाः कियन्ते मोक्षकाङ्क्षिभिः॥२५॥ सद्भावे साधुभावे च सदित्येतत् प्रयुज्यते। प्रशस्ते कर्मणि तथा सच्छब्दः पार्थ युज्यते॥२६॥ यज्ञे तपसि दाने च स्थितिः सदिति चोच्यते। कर्म चैव तदर्थींयं सदित्येवाभिधीयते॥२७॥ अश्रद्धया हुतं दत्तं तपस्तप्तं कृतं च यत्। असदित्युच्यते पार्थ न च तत् प्रेत्य नो इह॥ २८॥

॥ ॐ तत्सिदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे श्रद्धात्रयविभागयोगो नाम सप्तदशोऽध्यायः॥

> ॥ अष्टाद्शोऽध्यायः ॥ अर्जुन उवाच

सन्न्यासस्य महाबाहो तत्त्विमच्छामि वेदितुम् । त्यागस्य च हृषीकेश पृथकेशिनिषूद्न॥१॥ श्रीभगवानुवाच

काम्यानां कर्मणां न्यासं सन्न्यासं कवयो विदुः। सर्वकर्मफलत्यागं प्राहुस्त्यागं विचक्षणाः॥२॥

त्याज्यं दोषवदित्येके कर्म प्राहुर्मनीषिणः। यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यमिति चापरे॥३॥

निश्चयं शृणु मे तत्र त्यागे भरतसत्तम। त्यागो हि पुरुषव्याघ्र त्रिविधः सम्प्रकीर्तितः॥४॥

यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत् । यज्ञो दानं तपश्चेव पावनानि मनीषिणाम् ॥५॥

एतान्यपि तु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा फलानि च। कर्तव्यानीति मे पार्थ निश्चितं मतमुत्तमम् ॥६॥

नियतस्य तु सन्न्यासः कर्मणो नोपपद्यते। मोहात्तस्य परित्यागस्तामसः परिकीर्तितः॥७॥

दुःखमित्येव यत्कर्म कायक्केशभयात् त्यजेत्। स कृत्वा राजसं त्यागं नैव त्यागफलं लभेत् ॥८॥ कार्यमित्येव यत्कर्म नियतं क्रियतेऽर्जुन। सङ्गं त्यक्त्वा फलं चैव स त्यागः साक्त्विको मतः॥९॥ न द्वेष्ट्यकुशलं कर्म कुशले नानुषज्जते। त्यागी सत्त्वसमाविष्टो मेधावी छिन्नसंशयः॥१०॥ न हि देहभृता शक्यं त्यक्तुं कर्माण्यशेषतः। यस्तु कर्मफलत्यागी स त्यागीत्यभिधीयते॥११॥ अनिष्टमिष्टं मिश्रं च त्रिविधं कर्मणः फलम्। भवत्यत्यागिनां प्रेत्य न तु सन्त्यासिनां कचित् ॥१२॥ पञ्चेतानि महाबाहो कारणानि निबोध मे। साङ्खे कृतान्ते प्रोक्तानि सिद्धये सर्वकर्मणाम् ॥१३॥ अधिष्ठानं तथा कर्ता करणं च पृथग्विधम् । विविधाश्च पृथकेष्टा दैवं चैवात्र पञ्चमम् ॥१४॥ शरीरवाङ्मनोभिर्यत् कर्म प्रार्भते नरः। न्याय्यं वा विपरीतं वा पञ्चेते तस्य हेतवः॥१५॥

तत्रैवं सित कर्तारमात्मानं केवलं तु यः। पश्यत्यकृतबुद्धित्वान्न स पश्यति दुर्मितिः॥१६॥ यस्य नाहं कृतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते। हत्वाऽपि स इमाँ ह्लोकान्न हन्ति न निबध्यते॥१७॥ ज्ञानं ज्ञेयं परिज्ञाता त्रिविधा कर्मचोदना। करणं कर्म कर्तेति त्रिविधः कर्मसङ्गृहः॥१८॥ ज्ञानं कर्म च कर्ता च त्रिधैव गुणभेदतः। प्रोच्यते गुणसङ्खाने यथावच्छ्णु तान्यपि॥१९॥ सर्वभूतेषु येनैकं भावमव्ययमीक्षते। अविभक्तं विभक्तेषु तज्ज्ञानं विद्धि सात्त्विकम् ॥२०॥ पृथक्तवेन तु यज्ज्ञानं नानाभावान् पृथग्विधान् । वेत्ति सर्वेषु भूतेषु तज्ज्ञानं विद्धि राजसम् ॥२१॥ यत्तु कृत्स्रवदेकस्मिन् कार्ये सक्तमहैतुकम् । अतत्त्वार्थवदल्पं च तत्तामसमुदाहृतम् ॥२२॥ नियतं सङ्गरहितमरागद्वेषतः कृतम्। अफलप्रेप्सुना कर्म यत्तत्सात्त्विकमुच्यते॥२३॥

यत्तु कामेप्सुना कर्म साहङ्कारेण वा पुनः। कियते बहुलायासं तद्राजसमुदाहृतम् ॥२४॥ अनुबन्धं क्षयं हिंसामनवेक्ष्य च पौरुषम् । मोहादारभ्यते कर्म यत्तत्तामसमुच्यते॥२५॥

मुक्तसङ्गोऽनहंवादी धृत्युत्साहसमन्वितः। सिदुध्यसिदुध्योर्निर्विकारः कर्ता सात्त्विक उच्यते॥२६॥

रागी कर्मफलप्रेप्सुर्लुब्धो हिंसात्मकोऽशुचिः। हर्षशोकान्वितः कर्ता राजसः परिकीर्तितः॥२७॥ अयुक्तः प्राकृतः स्तब्धः शठो नैष्कृतिकोऽलसः। विषादी दीर्घसूत्री च कर्ता तामस उच्यते॥२८॥

> बुद्धेर्भेदं धृतेश्चैव गुणतिस्त्रविधं शृणु। प्रोच्यमानमशेषेण पृथक्तवेन धनञ्जय॥२९॥

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च कार्याकार्ये भयाभये। बन्धं मोक्षं च या वेत्ति बुद्धिः सा पार्थ सात्त्विकी॥३०॥

यया धर्ममधर्मं च कार्यं चाकार्यमेव च। अयथावत् प्रजानाति बुद्धिः सा पार्थ राजसी॥३१॥

अधर्मं धर्ममिति या मन्यते तमसाऽवृता। सर्वार्थान् विपरीतांश्च बुद्धिः सा पार्थ तामसी॥३२॥ धृत्या यया धारयते मनःप्राणेन्द्रियकियाः। योगेनाव्यभिचारिण्या धृतिः सा पार्थ सात्त्विकी॥३३॥ यया तु धर्मकामार्थान् धृत्या धारयतेऽर्जुन। प्रसङ्गेन फलाकाङ्की धृतिः सा पार्थ राजसी॥३४॥ यया स्वप्नं भयं शोकं विषादं मदमेव च। न विमुञ्जति दुर्मेधा धृतिः सा पार्थ तामसी॥३५॥ सुखं त्विदानीं त्रिविधं शृणु मे भरतर्षभ। अभ्यासाद्रमते यत्र दुःखान्तं च निगच्छति॥३६॥ विषमिव परिणामेऽमृतोपमम् । यत्तदग्रे तत्सुखं सात्त्विकं प्रोक्तम् आत्मबुद्धिप्रसादजम् ॥३७॥ विषयेन्द्रियसंयोगात् यत्तदग्रेऽमृतोपमम् । परिणामे विषमिव तत्सुखं राजसं स्मृतम् ॥३८॥ यद्ये चानुबन्धे च सुखं मोहनमात्मनः। निद्रालस्यप्रमादोत्थं तत्तामसमुदाहृतम् ॥३९॥

न तदस्ति पृथिव्यां वा दिवि देवेषु वा पुनः। सत्त्वं प्रकृतिजैर्मुक्तं यदेभिः स्यात् त्रिभिर्गुणैः॥४०॥ ब्राह्मणक्षत्रियविशां शूद्राणां च परन्तप। कर्माणि प्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणैः॥४१॥ शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च। ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम् ॥४२॥ शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम् । दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम् ॥४३॥ क्षिगौरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम् । परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम् ॥४४॥ स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः। स्वकर्मनिरतः सिद्धिं यथा विन्दति तच्छृणु ॥ ४५॥ यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम्। स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः॥४६॥ श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात् । स्वभावनियतं कर्म कुर्वन्नऽऽप्नोति किल्बिषम् ॥४७॥

सहजं कर्म कौन्तेय सदोषमपि न त्यजेत्। सर्वारम्भा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवऽऽवृताः॥४८॥ असक्तबुद्धिः सर्वत्र जितात्मा विगतस्पृहः। नैष्कर्म्यसिद्धिं परमां सन्त्यासेनाधिगच्छति॥४९॥ सिद्धिं प्राप्तो यथा ब्रह्म तथाऽऽप्तोति निबोध मे। समासेनैव कौन्तेय निष्ठा ज्ञानस्य या परा॥५०॥ बुदुध्या विशुद्धया युक्तो धृत्याऽऽत्मानं नियम्य च। शब्दादीन् विषयांस्त्यक्तवा रागद्वेषौ व्युद्स्य च॥५१॥ विविक्तसेवी लघ्वाशी यतवाक्कायमानसः। ध्यानयोगपरो नित्यं वैराग्यं समुपाश्रितः॥५२॥ अहङ्कारं बलं दर्पं कामं कोधं परिग्रहम्। विमुच्य निर्ममः शान्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते॥५३॥ ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचित न काङ्क्षिति। समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् ॥५४॥

भक्त्या मामभिजानाति यावान् यश्चास्मि तत्त्वतः।

ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम् ॥५५॥

सर्वकर्माण्यपि सदा कुर्वाणो मदुव्यपाश्रयः। मत्प्रसादादवाप्नोति शाश्वतं पदमव्ययम् ॥५६॥ चेतसा सर्वकर्माणि मिय सन्न्यस्य मत्परः। बुद्धियोगमुपाश्रित्य मचित्तः सततं भव॥५७॥ मिचतः सर्वदुर्गाणि मत्त्रसादात् तरिष्यसि। अथ चेत्त्वमहङ्कारान्न श्रोष्यिस विन्ह्यसि॥५८॥ यदहङ्कारमाश्रित्य न योतस्य इति मन्यसे। मिथ्यैष व्यवसायस्ते प्रकृतिस्त्वां नियोक्ष्यति॥५९॥ स्वभावजेन कौन्तेय निबद्धः स्वेन कर्मणा। कर्तुं नेच्छिस यन्मोहात् करिष्यस्यवशोऽपि तत् ॥६०॥ ईश्वरः सर्वभूतानां हृदेशेऽर्जुन तिष्ठति। भ्रामयन् सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया॥६१॥ शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत। तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम् ॥६२॥ इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्याद्गृह्यतरं मया। विमृरयैतद्रोषेण यथेच्छिस तथा कुरु॥६३॥

सर्वगुह्यतमं भूयः शृणु मे परमं वचः। इष्टोऽसि मे दढिमिति ततो वक्ष्यामि ते हितम् ॥६४॥ मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु। मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे ॥ ६५॥ सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज। अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्ष्ययिष्यामि मा शुचः॥६६॥ इदं ते नातपस्काय नाभक्ताय कदाचन। न चाराुश्रूषवे वाच्यं न च मां योऽभ्यसूयति॥६७॥ य इदं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति। भक्तिं मिय परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयः॥६८॥ न च तस्मान्मनुष्येषु कश्चिन्मे प्रियकृत्तमः। भविता न च मे तस्मादन्यः प्रियतरो भुवि॥६९॥ अध्येष्यते च य इमं धर्म्यं संवादमावयोः। ज्ञानयज्ञेन तेनाहमिष्टः स्यामिति मे मितः॥७०॥ श्रद्धावाननसूर्यश्च शृणुयादपि यो नरः। सोऽपि मुक्तः शुभाँ ह्योकान् प्राप्नुयात् पुण्यकर्मणाम् ॥ ७१ ॥ किचदितच्छुतं पार्थं त्वयैकाग्रेण चेतसा। किचदिज्ञानसम्मोहः प्रनष्टस्ते धनञ्जय॥७२॥ अर्जुन उवाच

नष्टो मोहः स्मृतिर्रुख्या त्वत्प्रसादान्मयाऽच्युत। स्थितोऽस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तव॥७३॥

सञ्जय उवाच

इत्यहं वासुदेवस्य पार्थस्य च महात्मनः। संवादिमममश्रौषमद्भुतं रोमहर्षणम् ॥७४॥

व्यासप्रसादाच्छुतवान् एतद्गुह्यमहं परम् । योगं योगेश्वरात् कृष्णात् साक्षात् कथयतः स्वयम् ॥७५॥

राजन् संस्मृत्य संस्मृत्य संवादिमममद्भुतम् । केशवार्जुनयोः पुण्यं हृष्यामि च मुहुर्मुहुः॥७६॥

तच संस्मृत्य संस्मृत्य रूपमत्यद्भुतं हरेः। विस्मयो मे महान् राजन् हृष्यामि च पुनः पुनः॥७७॥

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः। तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम॥७८॥ ॥ ॐ तत्सिदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे मोक्षसन्न्यासयोगो नाम अष्टादशोऽध्यायः॥

॥ माहात्म्यम्॥

गीताशास्त्रमिदं पुण्यं यः पठेत् प्रयतः पुमान् । विष्णोः पदमवाप्नोति भय-शोकादि-वर्जितः॥१॥

गीताध्ययन-शीलस्य प्राणायाम-परस्य च। नैव सन्ति हि पापानि पूर्व-जन्म-कृतानि च॥२॥

मल-निर्मोचनं पुंसां जल-स्नानं दिने दिने। सकृदु-गीताम्भसि स्नानं संसार-मल-नाशनम् ॥३॥

गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्र-विस्तरैः। या स्वयं पद्मनाभस्य मुख-पद्मादु-विनिःसृता॥४॥

भारतामृत-सर्वस्वं विष्णोर्वऋाद्-विनिःसृतम् । गीता-गङ्गोदकं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते॥५॥ सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपाल-नन्दनः। पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत् ॥६॥

एकं शास्त्रं देवकी-पुत्र-गीतम्
एको देवो देवकी-पुत्र एव।
एको मन्त्रस्तस्य नामानि यानि
कर्माप्येकं तस्य देवस्य सेवा॥७॥

॥ गीतामाहात्म्यम्॥

धरोवाच

भगवन् परेमेशान भक्तिरव्यभिचारिणी। प्रारब्धं भुज्यमानस्य कथं भवति हे प्रभो॥१॥

श्री विष्णुरुवाच

प्रारब्धं भुज्यमानो हि गीताभ्यासरतः सदा। स मुक्तः स सुखी लोके कर्मणा नोपलिप्यते॥२॥ महापापादिपापानि गीताध्यानं करोति चेत्। कचित् स्पर्शं न कुर्वन्ति नलिनीदलमम्बुवत्॥३॥

गीतायाः पुस्तकं यत्र यत्र पाठः प्रवर्तते। तत्र सर्वाणि तीर्थानि प्रयागादीनि तत्र वै॥४॥ सर्वे देवाश्च ऋषयो योगिनः पन्नगाश्च ये। गोपाला गोपिका वाऽपि नारदोद्धवपार्षदैः। सहायो जायते शीघ्रं यत्र गीता प्रवर्तते॥५॥ यत्र गीताविचारश्च पठनं पाठनं श्रुतम् । तत्राहं निश्चितं पृथ्वि निवसामि सदैव हि॥६॥ गीताश्रयेऽहं तिष्ठामि गीता मे चोत्तमं गृहम्। गीताज्ञानमुपाश्रित्य त्रीँ होकान् पालयाम्यहम् ॥७॥ गीता मे परमा विद्या ब्रह्मरूपा न संशयः। अर्धमात्राक्षरा नित्या स्वानिर्वाच्यपदात्मिका॥८॥ चिदानन्देन कृष्णेन प्रोक्ता स्वमुखतोऽर्जुनम् । वेदत्रयी परानन्दा तत्त्वार्थज्ञानसंयुता॥९॥ योऽष्टादशजपो नित्यं नरो निश्चलमानसः। ज्ञानसिद्धिं स लभते ततो याति परं पदम् ॥१०॥ पाठेऽसमर्थः सम्पूर्णे ततोऽर्धं पाठमाचरेत् । तदा गोदानजं पुण्यं लभते नात्र संशयः॥११॥

त्रिभागं पठमानस्तु गङ्गास्नानफलं लभेत् । षडंशं जपमानस्तु सोमयागफलं लभेत् ॥१२॥ एकाध्यायं तु यो नित्यं पठते भक्तिसंयुतः। रुद्रलोकमवाप्नोति गणो भूत्वा वसेचिरम् ॥१३॥ अध्यायं श्लोकपादं वा नित्यं यः पठते नरः। स याति नरतां यावन्मन्वन्तरं वसुन्धरे॥१४॥ गीतायाः श्लोकदशकं सप्त पञ्च चतुष्टयम् । द्वौ त्रीनेकं तद्धं वा श्लोकानां यः पठेन्नरः॥१५॥ चन्द्रलोकमवाप्नोति वर्षाणामयुतं ध्रुवम् । गीतापाठसमायुक्तो मृतो मानुषतां व्रजेत् ॥१६॥ गीताभ्यासं पुनः कृत्वा लभते मुक्तिमुत्तमाम् । गीतेत्युचारसंयुक्तो म्रियमाणो गतिं लभेत्॥१७॥ गीतार्थश्रवणासक्तो महापापयुतोऽपि वा। वैकुण्ठं समवाप्नोति विष्णुना सह मोदते॥१८॥ गीतार्थं ध्यायते नित्यं कृत्वा कर्माणि भूरिशः। जीवन्मुक्तः स विज्ञेयो देहान्ते परमं पदम् ॥१९॥

गीतामाश्रित्य बहवो भूभुजो जनकादयः। निर्धूतकल्मषा लोके गीतायाताः परं पदम् ॥२०॥ गीतायाः पठनं कृत्वा माहात्म्यं नैव यः पठेत्। वृथा पाठो भवेत्तस्य श्रम एव ह्युदाहृतः॥२१॥ एतन्माहात्म्यसंयुक्तं गीताभ्यासं करोति यः। स तत् फलमवाप्नोति दुर्लभां गतिमाप्नुयात्॥२२॥ सृत उवाच

माहात्म्यमेतद्गीताया मया प्रोक्तं सनातनम् । गीतान्ते च पठेद्यस्तु यदुक्तं तत्फलं लभेत् ॥२३॥ ॥ इति श्रीवाराहपुराणे श्रीगीतामाहात्म्यं सम्पूर्णम्॥